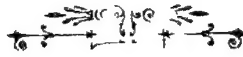


भक्ष्य निर्णय भास्करः



श्रीहरिहारे पातञ्जलाश्रम निवासि

स्वामि तेजोनाथेनोद्दिष्टीकृतः

सचनेनैव

मुद्रणयन्त्रालयाधिपति लाल।दीवानचंदद्वारा

लवपुरे तस्यैव मरकनटाईलाख्य

मुद्रणयन्त्रालये मुद्रापयित्वा

दर्शितः

१५ मार्च १९२३

प्रथमावृत्ति १०००]

रु...आना

[तत्पूजने २ ... १२

भूमिका प्रस्तावः

ओम् तत्सत् ॥ प्रसिद्धहीहै कि— अजशशहारिण प्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानमें व विहितमांसके भक्षणमें बहुतपुरुष विवाद करतेहैं उस्सें अतिक्लेशको पातेहैं और यथार्थअर्थके लाभसें शून्य रहितेहैं, वो प्रबलप्रमाणोंके तथा स्पष्टदृष्टान्तोंके और दृढयुक्तिओंके निरूपणकियेविना विवादक्लेश निवृत्तहोसकें नहीं और सत्यअर्थका लाभभी होसके नहीं, अतः उनप्रबल प्रमाणादिकोंके निरूपणलिये इस भक्ष्यनिर्णयभास्करग्रन्थका उदयकरणा अवश्यंही चाहताथा ॥

——

हपाठको—वेदोंके संहिताभागोंमें, तथा ब्राह्मणभागोंमें उपनिषद्भागोंमें, वेदान्तउपनिषदोंमेंभी, तथा सायणभाष्यआदिकोंमें, शाङ्करभाष्यमें, आश्वलायनगृह्यसूत्र, पारस्करगृह्यसूत्रप्रभृतिगृह्यसूत्रोंमें, कात्यायनश्रौतसूत्रादि श्रौतसूत्रोंमें, तथा वैष्णवोंकेआदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामिकृत श्रीभाष्यमेंभी, और मनुस्मृति, वसिष्टस्मृति, व्यासस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृतिआदिक स्मृतिओंमें, बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्रमें, तथा कूर्मपुराण, वराहपुराण, पद्मपुराण भगवद्भागवतपुराणादिकपुराणोंमें, और महाभारत,वाल्मीकीय रामायण,अध्यात्मरामायणादि इतिहासग्रन्थनमें, इत्यादिअसंख्यआर्षग्रन्थनमें अजशशहारिणप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानका व मांसभक्षणका विधान हजारों वाक्यनसें कराहुआहै ॥

उनसर्ववाक्यनको सनातनधर्मीपण्डितजन तो यथार्थही मानतेहैं अर्थात् प्रक्षिप्त नहींमानते, और कईक समाजीभाईभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींमानते किंतु यथार्थहीमानतेहैं परंतु बहुतसे नवीनसमाजीभ्राता उनवाक्य-

नको प्रक्षिप्त कहतेहैं, वो उनका कथन असत्यहीहै, यिह इसभक्ष्यानिर्णय-भास्करग्रन्थके आरम्भमेंही अनेकयुक्तिप्रमाणोंसें सिद्धअर्थ दिखलाया-जावेगा।

शङ्का—केईपुरुष कहतेहैं कि-साधुमहात्मापुरुषोंको धर्मात्माजनोंको तो अजप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानका व मांसभक्षणका प्रकरणचलाना योग्य नहींहै ॥

समाधान—भ्रान्तिसें और नास्तिकतासें यिह उनका कथनहै—तथाहि कहताहूं सुनिये—

१ प्रसंगचलाना तो क्याहै हेभ्रातः अजआदिकोंके बलिप्रदान का व मांसभक्षणका तो वेदानुसारी वेदोंकेभाष्यग्रंथनमें सायणाचार्यआदिकों ने तथा स्मृतिआदिकधर्मशास्त्रोंमें मनु व्यास पराशर वसिष्ट आश्वलायन याज्ञवल्क्यप्रभृति महर्षिओंने और इतिहास पुराणादिकोंमें बाल्मीकी व्यास आदिमहर्षिओंने व श्रीरामकृष्णादिअवतारोंने अनेक २ वाक्यनसें विधान कराहुआहै, तथा उपनिषदादिकोंके भाष्यग्रन्थनमें श्रीशंकराचार्योंने विहित मांसके भक्षणका विधान कराहुआहै, श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीने भी विहितपशुका मारणा स्वर्गप्राप्तिका हेतु मानाहीहै, तथा श्रीस्वामीदयानन्द सरस्वतीजीनेंभी अपने संस्कारविधिग्रंथमें और सत्यार्थप्रकाशमें मांसभक्षण का विधान अनेकस्पष्टवाक्यनसें कराहुआहै ॥

तो अब विचार करिये कि, यदि साधुमहात्माको धर्मात्माजनोंको मांसका प्रसंगभी चलाना योग्य न होता तो भगवद्व्यास आश्वलायन कात्यायनआदिकोंसें लेकर श्रीशंकराचार्य्य श्रीरामानुजस्वामी श्रीस्वामी दयानन्दसरस्वतीपर्य्यन्त परमपूज्यसाधुमहात्मा धर्मात्माजन बलिप्रदानका व मांसभक्षणका बिधानही कैसे करसक्तेथे अर्थ यिह, व्यर्थकार्य का और दोषकारीकार्य्यका तो महर्षिसाधुधर्मात्माजन विधान नहींकरसक्ते इस्सें

निश्चयहोताहै कि, बलिप्रदानका और मांसभक्षणका विधान करणा आवश्यकथा तो उक्त महर्षिसाधु धर्मात्माजनोंने व श्रीराम कृष्णादिक अवतारोंने विधान कराहै अतः (बलिप्रदानका व मांसभक्षण का प्रसंग चलाना साधुमहात्मा धर्मात्माजनोंको योग्य नहींहै) यिह कथन तो भ्रान्तिसेंहीहै ॥

—०—

२—भक्ष्याभक्ष्यकेखानेसेंजन्य धर्माधर्मके निर्णयालिये यदि साधुमहात्मा पुरुषोंको मांसका प्रसंग चलानाही योग्य नहींहै तो इसधर्माधर्मका निर्णय क्या असाधुमूर्खजनोंसें होसक्ताहै सो असाधुमूर्खजनोंसें कदापि निर्णय नहीं होसक्ता किन्तु साधुविद्वान्धर्मात्माजनोंसेंही सो निर्णय होसक्ताहै इसहेतुसें भी (मांसका प्रसंगचलाना साधुपुरुषोंको योग्य नहींहै) यिह कथन भ्रांति सें ही है ॥

—०—

जिनपुरुषोंको वेद और महर्षिओंके रचितस्मृतिआदिक धर्मशास्त्र निःसंशय प्रबलप्रमाणहैं अतः परममाननीयहैं वहपुरुष आस्तिक कहलायसक्तेहैं, वेदोंमें तथा स्मृतिआदिक धर्मशास्त्रोंमे तो बलिप्रदानका और मांसभक्षणका बहुत २ वाक्यनसें विधान कराहुआहै उनसें विरुद्ध जोलोक कहतेहैं कि--(बलिप्रदानका मांसभक्षणका प्रसंगभी चलाना योग्य नहींहै) ऐसे श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्ध कहनेवाले आस्तिक नहींकहलायसक्ते अतः उनका श्रुतिस्मृतिओंसेंविरुद्धकथन तो नास्तिकतासेंहीहै ॥

४—जोकेईपुरुष कहतेहैं कि-साधुमहात्मापुरुषोंको धर्मात्माजनोंको तो अजप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानका मांसभक्षणका प्रकरण चलाना योग्य

नहींहै और श्री रामानुजस्वामी भगवत्शंकराचार्य स्वामीदयानन्दसरस्वतीजीने उसका वेदानुसारी विधानकराहै तो वो श्री रामानुज स्वामी भगवत्शंकराचार्य स्वामीदयानन्दसरस्वतीजी क्या उनकी दृष्टिमें साधुमहात्मापुरुष नहींथे, तथा मनुव्यास वसिष्ट पराशर याज्ञवल्क्य आश्वलायन कात्यायन बाल्मीकी आदिक योगीन्द्रमहर्षिओंनेभी वेदानुसारी अपने२ धर्मग्रन्थनमें बलिप्रदान का और मांसभक्षणका विधान कराहै तो वो मुनियाज्ञवल्क्य वसिष्ट पराशर प्रभृतिभी क्या उनकी दृष्टिमें साधुमहात्मा धर्मात्माजन नहींथे हेमित्र यिह उक्तमनु वसिष्ट याज्ञवल्क्यआदिकोंसेलेकर श्रीशंकराचार्य श्री रामानुजस्वामीआदिक महानुभावपुरुष तो साधुमहात्मापुरुषोंसेंभी परममाननीय हुएहैं अतःउनसें विरुद्धकथन तो भ्रान्तिसें और नास्तिकतासेंहीहै, इस्सें वो माननीय नहींहोसक्ता ॥

शंका—स्मृतिइतिहासपुराणआदिकोंमें महर्षिओंने जीवहिंसाका और मांसभक्षणका निषेधभी कराहुआहै तो वो महर्षिओंके वाक्य क्या माननीय नहींहैं ॥

समाधान— मनु व्यासवसिष्ट याज्ञवल्क्यप्रभृति महर्षिओंके सर्ववाक्य माननीयहैं, महर्षिओंका कोईभीवाक्य अमाननीय नहींहोसक्ता, परंतु इसमें विचारकराचाहिये कि—

स्मृतिआदिकोंमें महर्षिओंने बहुतजगें तो देवतापितरअतिथिआदिकोंके उद्देशसें पशुहिंसाका विधानकराहै, ऐसीपशुहिंसाका स्वर्गादिकोंकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफल कहाहै, फिर देवता पितर अतिथिआदिकोंप्रति समर्पण करके शेषमांसके भक्षणका विधानकराहै, ऐसे मांसभक्षणसें निर्दोषताकहीहै, और विहितमांसके नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफल कहाहै ॥

और केईजगें हिंसाका मांसभक्षणका निषेधकराहै, हिंसाका मांसभ-

क्षणका अतिदोष कहाहै, हिंसाके मांसभक्षणके त्यागसें पुण्यबोधनकराहै, तो हेपाठको–उनमहर्षिओंके वाक्य क्या उन्मत्तप्रलापवत् विरोधीहैं ऐसेनहीं, ऐसेनहीं, किंतु मनुव्यास वसिष्ट याज्ञवल्क्यप्रभृतिमहर्षि तो परमधर्मनिष्ठ योगीन्द्रहुएहैं अतःप्रमादिदोषोंसें रहितहुएहैं इस्सें उनमहर्षिओंके वाक्य विरोधी नहींहैं, क्योंकि उनवाक्यनका विषय भिन्नभिन्नहै सो मैं दिखलाताहुं देखिये ॥

महर्षिओंके जोवाक्य हिंसाका मांसभक्षणका निषेधकर्तेहैं, हिंसासें मांसभक्षणसें अतिदोप कहतेहैं, हिंसाके मांसभक्षणके त्यागसें पुण्य कहते-हैं, ऐसे२ सर्ववाक्यनका तो अविहित हिंसाका अविहितमांसके भक्षणका त्याग विषयहै ॥

और जो महर्षिओंके वाक्य देवता पितर अतिथिआदिकोंके उद्देशसें हिंसाका व देवताअतिथिआदिकोंको समर्पणकर्के मांसके भक्षणका विधा-नकर्तेहैं, देवताऽऽदिकोंके निमित्तसें करीहिंसाका श्रेष्ठफल कहतेहैं, देवकर्म-पितृकर्मआदिकोंमें मांसके नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफल कहतेहैं, ऐसे२ सर्ववाक्यनका विहितहिंसा, विहितमांसकाभक्षण विषयहै ॥

एवं अविहितहिंसाका अविहितमांसकेभक्षणका त्याग भिन्नविषयहै, और विहितहिंसा विहितमांसकाभक्षण भिन्नविषयहै, भिन्नभिन्नविषयवाले वाक्यनका विरोध नहींहोसकता अतः वो महर्षिओंके वाक्य अविवेकीज-नोंको विरोधीभास्तेहुएभी विरोधी नहींहैं इस्सें महर्षिओंके सर्ववाक्य मान-नीयहीहैं ॥

अथर्ववेदकी मुण्डकोपनिषद्–सत्यमेवजयते । मु॰ ३ ॥ खण्ड १ ॥ ६ ॥ अर्थ–सत्यही जयका हेतुहै अर्थात् सत्यसेंही श्रेष्ठधर्म व ब्रह्मलो-कादिकंजीतेजातेहैं ॥

अथर्ववेदकी प्रश्नोपनिषद्—**समूलोवाएष परिशुष्यति योऽनृतमभिवदति** ॥ प्रश्न६ ॥ १ ॥ अर्थ—भाग्यरूपमूलके सहित यिह पुरुषरूप वृक्ष सूकजाताहै जो भूठ बोलताहै अर्थात् मिथ्यावादी-पुरुष इसलोकके परलोकके सुखसें रहितहोजाताहै ऐसे सत्यके और मिथ्याके फलको जाननेवाला पुरुष हृदयमें सत्यव्रतको दृढकर्केही लेखनी को ग्रहण कर्ताहै --जोपुरुष सत्यमिथ्याके फलमें दृष्टिको न देकर कलमको उठाते हैं वहपुरुष विद्वज्जनोंमें धर्मवेता नहींकहलायसक्के अतः मांसविषयमें जैसाअर्थ श्रुतिस्मृतिओंमें लिखाहै वैसहीअर्थको मैं दिखलाताहुं ॥

—०—

शंकासमाधानकर अर्थकेनिरूपणमें सुन्दरता और सुखसेंबोध होताहै अतः शंकासमाधानकर ग्रन्थकी रचना कीजावेगी—वहां शंकाकाकर्ता वेदस्मृतिओंके प्रतिकूलनिश्चयवालेको पूर्वपक्षीनामसें, और समाधानकाकर्ता श्रुतिस्मृतिओंके अनुकूलनिश्चयवालेको आस्तिकनामसें लिखेंगे ॥

—०—

पूर्वपक्षी—सात्त्विकआहारके विषयमें श्रीभगवान् ऐसाकहतेहैं—**आयुः सत्त्वबलारोग्य सुखप्रीतिविवर्धनाः ॥ रस्याः-स्निग्धाःस्थिराहृद्या आहाराःसात्त्विकप्रियाः ॥** गी-अ-१७ ॥८॥ आयुः उत्साह पराक्रम नीरोगता सुख और प्रसन्नताके बढानेवाला रसीला चिकना और बहुतकालतकशरीरमें बलरखनेवाला आनन्ददायक भोजन सत्त्वगुणवाले पुरुषोंको प्यारा लगताहै, जैसे बनके कन्द मूल फल श्यामाकादि मुनियोंके अन्न एवं गेहूंजौंआदिअन्न गोदुग्ध-दधि मक्खन इक्षुरस गंगाऽऽदि पवित्रनदीयोंका जल यहसब सात्त्विक-आहारहैं इसके विरुद्ध रोग आलस्यादिदोषोंके उत्पन्नकरनेवाले आहार सब

राजस और तामस कहातेहैं जैसे लशुन प्याज मस्सरआदि, और सबसें बढकर भारतके धर्मधनआदि चारपुरुषार्थोंसें भ्रष्टकरनेवाले, भारतकेही दुर्भाग्यसें भारतमें प्रविष्टहुआ २ मद्य और मांसहै इसके सेवनसें मनुष्य मनुष्यतासें गिरकर राक्षस और पिशाच कहातेहैं और परमात्माको न जानकर निरंतर जन्ममरणके प्रवाहमें एवं नरकोंमेंही पडे रहतेहैं अतः ऐसेदुष्टभोजनको केवलइन्द्रियारामही कियाकरतेहैं और मुक्तिकी इच्छावाले सर्वदा सात्त्विकआहारही कियाकरतेहैं ॥

—०—

आस्तिक०—हेमित्र जबसें सृष्टि व वेद उदयहुएंहै तबसें वेदादिविहित मांसभक्षणका प्रचारहै, हेपाठको देखो प्रमाणांक २२० आदिकोंमें मनुआदिकोंनें स्पष्टकहाहुआहै किंवा (पहिले सत्ययुग त्रेताआदिक समयोंमें वेदविहित मांसकेभक्षणका प्रचार बहुतथा, इसीसें वेदवेत्ता महर्षिजन, तथा इक्ष्वाकु विकुक्षि अम्बरीष दिलीप भरत नल श्रीरामचन्द्र युधिष्ठिरप्रभृतिधर्मात्माराजे, और सीतादमयन्तीआदिक सतीकुलीनस्त्रीजन भी वेदविहितमांसको खाते खुलातेरहेहैं, फिर केईवर्षोंसें जैनीसाधुओं के व्याख्यानोंद्वारा वैदिकमतवालोंमें बेसमझीसें जैनमतका असरहुआ तबसें वेदविहित बलिप्रदानका तथा मांसभक्षणका प्रचार प्रतिदिन कमती होता गया अतः पहिलेसमयोंकीदृष्टिसें इससमयमें बहुत कमहै ॥

यदि विहितमांसका भक्षण धर्मधनआदि चारपुरुषार्थोंसें भ्रष्टकरणेवाला होतातो उसको वेदवेत्तामहर्षिजन और इक्ष्वाकु रामचन्द्र युधिष्ठिरप्रभृति धर्मात्माजन कैसे खायसक्तेथे ॥)

हेभ्रातः क्या उन धर्मात्मामहर्षि और महाराजोंके चारोंपुरुषार्थ नष्ट होगएथे, यिह नास्तिकोंसें बिना कौन कहसक्ताहै, वेदविहितमांसके भक्षण सें क्या वो महर्षि और रामचन्द्र युधिष्ठिरआदि महाराजे राक्षस और पिशाच कहेजातेथे, क्या वो सर्वउत्तमब्राह्मण और महाराजे परमात्माको न

जानकर नरकमेंही पड़ेहैं, बहुत कथा इत्यादिक तुमारेलेख नास्तिकतासेंबिना लिखे नहींजासक्ते---

देखो प्रमाणांक २८१ आदिकोंको आदिसमयसें वेदविहितमांसके भक्षणका प्रचारहै भारतखण्डमें किसी देशान्तरमें प्रविष्ट नहींहुआ किन्तु भारतके दुर्भाग्यसें जैनमतका असरहोनेकर बहुतही अदीर्घदृष्टिवाले स्वल्प दृष्टि पुरुष वैदिकमतसें गिरपडेहैं, जो कि वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसभक्षणके विधानोंको देखतेहुएभी वैदिकमतको नास्तिकतासें दुराग्रहकर बदलतेहैं ॥

भगवद्गीता—कट्वम्ललवणात्युष्ण तीक्ष्णरूक्ष विदाहिनः। आहारराजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥ अ० १७ ॥ ६ ॥

अर्थ---अतिकटु अतिखट्टा, अतिलवण, अतिगर्म, अतितीक्ष्ण, अतिरूक्ष, अतिविदाही, ऐसे आहार जो तत्काल पीड़ाशोक रोगोंके देनेवालेहैं सो राजसपुरुषोंको प्रियहैं अर्थात् सो राजसआहारहै ॥

हेभ्रातः---यिह राजसआहारका गुणषट्कितलक्षण भगवत्नेकहाहै, सो यिहलक्षण मांसमें नहींहै अतः मांसको राजसआहार कहना अयुक्तहीहै क्योंकि, अजशशहरिणादिकोंका मांस अतिकटु नहीं, अतिखट्टा नहीं, तीक्ष्ण नहीं, रूक्ष नहीं, विदाही नहीं, पीड़ाशोकरोगदेनेवाला नहीं, क्योंकि, सर्व रोगोंका नाशकरणेवाला मांसका रसहै, यिह चरकसंहितामें कहाहै, तथा होर बहुतगुण मांसके चरकसंहिता निघण्टुरत्नाकरआदिकोंमें कहेहैं ॥

---o---

शंका- जब खटाई, वा अतिलवण, वा अतितीक्ष्ण मिर्चआदिगेर कर वा अतिउष्ण खायाजावे तो मांस राजसआहार क्यों नहींहै ॥

समाधान-ऐसे तो खटाई अतिलवण अतिमिर्चा आदि गेरकर वा अतिउष्णभोजन घृतसहित मुंगकीदाल भातआदिक जोभी कुछ खाया पीयाजावे वोसब राजस आहार होजातेहैं अतः इतनेसे आप मांसको राजस आहार नहींकहसक्ते ॥

भगवद्गीता-यातयामंगतरसं पूतिपर्युषितंचयत् ॥
उच्छिष्टमपिचामेध्यं भोजनंतामसप्रियम् १७।१०

अर्थ - जिसको पकाय एकप्रहर व्यतीतहुआहै ऐसाअतिशीतलभोजन और जिसका रस जलगया वा निकासदिया ऐसा गतरसभोजन और दुर्गंधवाला, दिनान्तरका पकायाबासी, उच्छिष्ट और अशुद्ध अपवित्र भोजन तामसजनोंको प्रियहै अर्थात् वो तामसआहारहै ॥

शंका-तो क्या मांस अशुद्ध अपवित्र नहींहै ॥

समाधान-हेमित्र देखो प्रमाणांक १ आदिकोंको मनुस्मृति आदिक धर्मग्रन्थोंमें मांसको घृततैलकीन्याई शुद्धपवित्रकहाहै तोफिर कौनआस्तिक पुरुष विहितमांसको अशुद्धअपवित्र कहसक्ताहै औरभी इसविषयमें अधिक शंकाहुए विशेषसमाधान इसग्रन्थमें लिखाजावेगा ऐसे भगवत्के उक्तराजस तामसआहारके लक्षण मांसमें नहींहैं अतः यदि खटाई वा अतिलवण अति मिर्ची आदि नहींगेरें व नांही अतिगर्म खावें और नाहीं उच्छिष्ट वा बासीकरके खावें तो मांसको राजस तामस आहार कहना अयुक्तहीहै ॥

हेमित्र—सात्विकआहारके निरूपणमें भगवत्ने कन्द मूल फलगेहूं आदिकोंकी गणना नहीं की किंतु भगवत्ने सात्विकआहारका गुणघटित लक्षण कहाहै अतः उनगुणोंमेंसे जिसआहारमें थोड़ेगुणहों वो थोड़ा सात्विकहै जिसमें अधिकगुणहों वो अधिक सात्विकहै, जिसआहारमें भगवत्के उक्त सर्वगुणहों वो पूर्णसात्विक जाननाचाहिये ।

पूर्वपक्षी—ऐसे कौनपुरुष कहसक्ताहै कि भगवत्के उक्त सात्त्विक आहारके गुण मांसमेंभीहैं ॥

आस्तिक०—यद्यपि शास्त्रानभिज्ञपुरुष वा दुराग्रहवान्जन ऐसेनहीं कहसक्ता तथापि शास्त्रवेत्ता सत्यवक्ता पुरुष कहसक्ता है जैसे सर्वशास्त्रवेत्ता भीष्मपितामहजीने महाभारतमें कहाहै—

एवमेतन्महाबाहो यथावदसिभारत ॥ नमांसात्परमंकिञ्चिद् रसतोविद्यतेभुवि पर्व १३॥अ० ११६ ७॥ क्षतक्षीणाभितप्तानां ग्राम्यधर्मरतात्मनाम् ॥ अध्वनाकर्शितानांच नमांसाद्विद्यतेपरम् ॥८॥ सद्योवर्द्धयतिप्राणान् ॥ पुष्टिमग्र्यांदधातिच नभक्ष्योऽभ्यधिकःकश्चि न्मांसादस्तिपरंतप ॥९

अर्थ—हेमहाबाहो युधिष्ठिर जैसे तूं कहता है यिह ऐसेहीहै कि भूमिमें कोईवस्तु मांससे श्रेष्ठ रसवाला नहींहै ॥७॥ क्षतवालेको, क्षयरोगसेंपीडित जनोंको मैथुनमें रागवालोंको, मार्गसे कृशहुएजनोंको, मांससे अन्यवस्तु श्रेष्ठहितकर नहींहै अर्थात् इनचारोंजनोंको मांसअतिहितकरहै ॥८॥प्राणोंको अर्थात् आयुको शीघ्रबढातेहै और अत्यन्तपुष्टिको करेहै, हेपरंतप युधिष्ठिर मांससेश्रेष्ठ कोईखानेयोग्य वस्तुनहींहै ॥९॥

महर्षिचरकका रचित चरकसंहिता—

अतोऽन्यथाहितंमांसं बृंहणंबलवर्द्धनम् । प्रीणनःसर्वभूतानां हृद्योमांसरसःपरम् अ० २७ ॥३०५ शुष्यतांव्याधियुक्तानां कृशानांक्षीणरेतसाम् ॥

बलवर्णार्थिनांचैव रसंविद्याद्यथाऽमृतम् ॥३०६॥
सर्वरोगप्रशमनं यथास्वंविहितंरसम्। विद्यात्स्व र्य्यंबलकरं वयोबुद्धीन्द्रियायुषाम् ॥३०७॥

अर्थ-वहांपूर्वश्लोकमें जोकहाहै कि रोगसे मरेहुए बकरेआदिकोंका मांस, बाल वा वृद्ध अजआदिकोंका मांस, विषसे वा सर्पाऽऽदिकोंसे मरे हुएका मांस, इनमांसोंको न खावे (अतोऽन्यथा) उन मांसों से अन्यप्रकारका अर्थात् युवा नीरोग मारेहुए अजआदिकोंका जो मांसहै वो हितकारीहै, वीर्यका वर्द्धकहै,बलका वर्द्धकहै, अबमांसके रसके गुणकहतेहैं मांसका रस सर्व जीवोंको तृप्तकरेहै, हृद्यहै अतिरुचिरहै ॥३०५॥ क्षयरोगवालोंको और रोगी जनोंको; कृशजनोंको, सुष्ठुरूपकी कामनावालोंको, मांसका रस अमृतके तुल्य जानना ॥३०६॥ जिसरोगमें जैसा बनाना चाहिये वैसा यथायोग्य बनाया हुआ मांसका रस सर्वरोगोंका नाशकरेहै, स्वरको आवाज को सुंदर करेहै, अवस्थाका इन्द्रियोंको आयुको बलकरणे वाला मांसका रसहै अर्थात् मांसके रससें आयु बुद्धिआदिक बलवान्होतेहैं ॥३०७॥

यद्यपि—भीष्मजीके और चरकसंहिताके वाक्य प्रबलप्रमाणहैं अतः इनसेभिन्न होर चिकित्साशास्त्रके अधिकप्रमाण लिखनेकी आवश्यकता नहींहै तथापि प्रसंगानुसार इसग्रंथमें होरभी चिकित्साग्रंथनके प्रमाण प्रमाणांक ११६ आदिकों में दिखलाय जावेंगे ॥

देखिये-गीतामें भगवत्‌ने सात्त्विकआहारके जो गुणकहेहैं भीष्म पितामहजीने और आर्षग्रंथचरकसंहिताऽऽदिकोंमें सोगुण मांसके वा मांस रसके कहे हैं और अत्यन्त पुष्टि व स्वरको सुंदर करना, शरीरके रंगका सुन्दर करना, आयुःइन्द्रियबुद्धिआदिकोंको बलदेना इत्यादिक अधिकगुण मांसके रसमें कहेहैं ॥

हेभ्रात:—भगवत्‌ने सात्त्विकआहारके जो गुण कहेहैं वोगुण मांसमें व मांसके रसमें उक्तप्रमाणोंसे सिद्धहीहैं—
श्रुतिस्मृतिआदिकोंनेभी हजारोंवाक्यनमें विहितमांसके भक्षणका विधान-कराहुआहै, तथा विहितमांसकेभक्षणमें हजारों श्रेष्ठपुरुषोंके आचार रूप दृष्टान्तभीहैं और इसमें बहुतप्रबलयुक्तिआंभीहैं तो फिर श्रुतिस्मृतिआदिक धर्मपुस्तकोंमें जैसाअर्थ लिखाहै वैसेही सत्यअर्थको प्रकटकरना साधुमहात्माजनोंका उचितधर्महै--

और श्रुतिस्मृतिआदिप्रमाणोंमें तथा दृष्टान्तोंसे और प्रबलयुक्तिओंसे सिद्धअर्थको छिपाना वा बुद्धिपूर्वक उससिद्धअर्थका बदलना नास्तिकताहै क्योंकि, जिनको विश्वासहै कि, 'युक्तयोगीईश्वर व युंजानयोगीमहर्षिओंसे वेद व स्मृतिसूत्रग्रन्थ प्रकटहुएहैं, ऐसाविश्वासवाले आस्तिकपुरुष श्रुतिस्मृति सूत्रोंके अर्थको छिपा व बदल नहींसकै,

अतः विद्वज्जनोंसे प्रार्थना कर्ताहुं कि-यदि कोईविद्वान् किसीविषयमें लेखलिखाचाहे तो उनकेलिये योग्यहै कि-सत्य व मिथ्याके फलका बोधक जो उपनिषद्वाक्य दिखाचुकाहुं उनवाक्यनके अर्थको स्मर्णकर्केही कलमको ग्रहणकरें, क्योंकि सर्वधर्मो का मूल सत्यहै, ऐसेसत्यका त्याग-करने वाला पुरुष धर्मनिष्ठजनोंमें सम्मानको नहींपायसका, व नाहीं वो धर्मवेता कहलायसकाहै ॥

जो साधनोंसे विना योगारूढहै उसको युक्तयोगी कहतेहैं, ऐसा एक ईश्वरहीहै। और जो साधनोंके अनुष्ठानकर योगावस्थाको प्राप्तहुएहैं वो युञ्जानयोगी कहजातेहैं जैसे कि-वसिष्ट पराशर याज्ञवल्क्य अगस्त्य भरद्वाजआदि हुएहैं इति ॥

अनुबन्धचतुष्टय

जोजानेहुए ग्रन्थके पठनादिकोंमें प्रवृत्तकरें वह अनुबन्ध कहेजातेहैं ऐसे 'विषयानुबन्ध' प्रयोजनानुबन्ध, अधिकारीअनुबन्ध, संबन्धानुबन्ध, यिहचार अनुबन्धहोतेहैं वो, ग्रन्थकेआदिमें दिखलानेयोग्यहैं अतः दिखलाताहूं ॥

१—श्रुतिस्मृतिआदिकोंके विधिवाक्यनसें विहितअजशशहरिणादिकों का बलिप्रदान, व विहितमांसकाभक्षण, इसग्रन्थका विषयहै ॥

२—उसविषयद्वारा अधिक बुद्धिबल पुष्टिआदिकोंका लाभ और उनाविधिओंकेपालनसें पुण्योत्पत्तिद्वारा सद्गति प्रयोजनहै ॥

३—आस्तिकगृहस्थजन अधिकारीहैं ॥

४ विषय और ग्रन्थका प्रतिपाद्यप्रतिपादकभाव सम्बन्धहै, अधिकारी और विषयका कर्तृकर्त्तव्यभाव सम्बन्धहै, फल और अधिकारी का प्राप्य प्रापकभाव सम्बन्धहै, इत्यादिक सम्बन्ध यथायोग्य जानलेने ॥

—o—

शंका—क्या जीवहिंसासेंभी पुण्यउदय व सद्गति होसकेहै—

समाधान—हां विहितहिंसासें अवश्यहोवेहीहै, हेभ्रातृजनों प्रबलप्रमाणोंसें तथा प्रामाणिकदृष्टान्तोंसें, और युक्तिओंसेंभी यिहअर्थ सिद्धहीहै तथाहि दिखलाताहुं, ॥

१—देखो प्रमाणांक ५६ में श्रीरामानुजस्वामीभी वेदमंत्रसें विहित हिंसाका सद्गतिरूप श्रेष्ठफलही लिखतेहैं, हेपाठको एकतो वेदमंत्र सें लिखना, दूसरा वैष्णवोंके आदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामी लिखने वालेहैं ऐसे प्रबलप्रमाणको देखकरभी यदि तुम्हारी शंका दूर नहीं होती तो और देखो प्रमाणांक ५७, व ६५, व ६६, व ७१, व ७४, व ७५, व १६२,

व २४२, व २४४, आदिकोंसें विहितपशुहिंसाकर धर्म और दोनोंकी सवृगति सिद्धहीहै—

इसीसें प्रमाणांक ४८ आदिबहुतप्रमाणोंमें विहितहिंसा, अहिंसारूपही मानीहै, जैसे मनुस्मृति-यज्ञार्थंपशवःसृष्टाः, स्वयमेवस्वयंभुवा। यज्ञोऽस्यभूत्यैसर्वस्य, तस्माद्यज्ञेवधोऽवधः ॥ अ॰ ५ ॥ ३९ ॥

इसश्लोककी टीकाओंमी प्रमाणांक ६१ आदिकोंमें दिखादीहैं-

अर्थ—यज्ञकी सिद्धिलिये आपब्रह्माजीने पशु रचेंहैं, वो यज्ञ सबजगत् की वृद्धिका और ब्राह्मणक्षात्रियादिकोंके ऐश्वर्य्यकाकारणहै, इस्सें यज्ञमें जो वधहै वो अवधहीहै, अहिंसाहीहै क्योंकि, वो दोषकाकारण नहींहै ॥

हेपाठको—जैसे वृत्तिज्ञानके नाशसें होनेंवाले स्मृतिज्ञानके कारण जो संस्कारहैं वह अतीन्द्रियपदार्थहैं, वैसेही शुभाशुभ कर्मोकर चित्तमें होने वाले सुखदुःखके और सुखदुःखके साधनोंके कारण जो 'पुण्यपापहैं' धर्मा धर्महैं वहभी अतीन्द्रियपदार्थहैं, ऐसेअतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष योगारूढ पुरुषोंकोही योगकर होसक्ताहै, अयोगीजनोंको नहीं ॥

इसीसें पुण्यपापमें नानामतवालेमनुष्योंके विवाद होतेहैं, जैसे शौचस्नानआदिकोंसें वैदिकमतवाले पुण्य और जैनमतवाले पाप मानतेहैं इसीसें जैनीसाधु ढूंढिएआदि वर्ष२ दो२ वर्ष स्नानादि नहींकरते ॥

अयोगीजनोंको पुण्यपापका प्रत्यक्ष नहींहोसक्ता किंतु योगावस्थामें देखकर योगारूढमहर्षिओंने जो स्मृतिआदिशास्त्र रचेंहैं, उनशास्त्रोंसेंही अयोगीजनोंको पुण्यपापका निश्चय होसक्ताहै ॥

जैसे अविहितहिंसाका, निषिद्धहिंसाका पापफल श्रुतिस्मृतिआदिकोंसें सिद्धहै, वैसेही विहितहिंसाका दोनोंको सद्‌गतिरूप श्रेष्ठफल श्रुतिस्मृतिआदिकोंसें सिद्धहै, अतः वह आस्तिकजनोंसें अमाननीय नहींहोसक्ता ॥

विदितहो कि-इसग्रन्थमें जो पशुबलिदान व मांसविषयके प्रमाण स्थूलअक्षरोंसें दिखलाएहैं उनमें हरएक प्रमाणके साथहीप्रथम प्रमाणांक लिखदियाहै, क्यों कि---जिस्सें वहप्रमाण फिर जहां २ दिखलाना आवश्यकहो वहां२ बहुतजगें न लिखना पड़े, किंतु प्रमाणांक दिखलानेसें प्रमाण देखा जाए ॥

२-देखो दृष्टान्त-महाराजादशरथके यज्ञमें रामजीकी माताकौसल्यानें आप तीन कृपाणोंसें अश्वका बलिदानकिया, महाराजारन्तिदेव नित्य मांससहितअन्नका दान करते रहे (श्रीरामजीने चित्रकूटमें कृष्णमृगके मांससें देवतोंको बलिदानकरकेंही कुटीकी प्रतिष्ठाकी,) महाराजायुधिष्ठिरने भी इन्द्रप्रस्थ, देहलीमें मांसआदि भोजन खुलाकर ही सभास्थानमें प्रवेश किया, पापोंकी निवृत्तिलिये युधिष्ठिरके श्रीगंगाजीके तटपर यज्ञमेंभी ३०१ अजआदिपशुओंका बलिप्रदान किया गया, ॥

(पांचोपांडव बनमें हजारोंमृगोंको मारकर मांसोंको खुलाते खातेरहे;)

देखो प्रमाणांक २८१ को पुरातनऋषिओंके यज्ञनमेंभी मांसके पुरोडाश होतेरहे, तो इत्यादिक वो सबमहाशय सद्‌गतिओंकोही प्राप्तहुएहैं ॥

३-यद्यपि प्रबलप्रमाणोंके तथा दृष्टान्तोंके होते आस्तिकपुरुषोंको युक्तिकी अपेक्षा नहीं, तथापि अब युक्तिओंसेंभी विचारिये,—

रामलक्ष्मणादिअवतार, व परमधर्मनिष्ठ अगस्त्यादिमहर्षि, व और वेदवेत्ता पुरुष उनहीकर्मोंमें विशेषतासें प्रवृत्तहोसक्तेहैं जो सद्गतिके देनेवालेहों, बोपरमपूज्यपुरुष उसमें प्रवृत्तहुए हैं अतः जानाजाताहै कि-विहितपशुबलि प्रदान सद्गतिकाही कारणहै ॥

आयुर्वेदविहित औषधोंके दानसें व सेवनसें, व्रणकृमि रुधिरकृमि मलकृमि दद्रुआदिरोगकृमि कूपकृमि इत्यादिअसंख्यजीवोंकी हिंसाद्वाराही पुण्य उदय होताहै ॥

हेभ्रातृजनों-यद्यपि इससमयमें प्रायः किसीको किसीकीभी सद्गति व दुर्गतिका प्रत्यक्ष नहींहै तथापि, देखो प्रमाणांक ३० को जबसें जैनमत का असर होनेकर वैदिकमतवालोंमें पशुबलिप्रदानका प्रचार दूरहुआहै, तब सें प्रतिदिन अधोऽधःपत्तनरूपही फल प्रत्यक्षदेखनेमेंआयाहै, इत्यादिक युक्तिओंसें व प्रबलप्रमाणोंसें तथा सद्दृष्टान्तोंसें विधिविहितहिंसा सद्गति का ही कारण सिद्धहै ॥

—०—

अब विद्वज्जनोंसें प्रश्नपूर्वक प्रार्थनाकी जातीहै सुनिए-

प्रश्न-श्रौतसूत्र गृह्यसूत्र स्मृतिआदिग्रन्थोंके कर्ता जो पुरातन महर्षिहैं वहभी क्या नवीनपण्डितोंजैसेही हुएहैं अथवा वह योगजन्य अतीन्द्रिय पदार्थोंके प्रत्यक्ष ज्ञानवाले योगारूढ़ हुएहैं ॥

इनमें प्रथमपक्ष कहो तो बस धर्माधर्म व योगशास्त्र व योगके साधन ध्यानादिकभी व्यर्थही सिद्धहोंगे उस्सें नास्तिकमतकोही पुष्पाञ्जलि देनी होगी क्योंकि पुरातन महर्षिओंकोभी ध्यानादिकोंकी परिपक्वतारूप योग व परमात्मा जीवात्मा प्रकृति धर्माधर्म, आदि अतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष नहीं हुआ तो नवीनपण्डितोंके योगारूढ़ता, व अतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष तो हैही

नहीं, इस्सें उक्तअतीन्द्रियपदार्थोंकी सिद्धि नहीं होनेसें नास्तिकमत सिद्ध होगा ॥

यदि द्वितीयपक्ष कहो तो—उन परमपूज्यपुरुषोंके योगजमहत्त्वको विस्मृतकर्के लोकवासनार्से, वा अधीरतार्से, वा अन्याकिसीनिमित्तसें उन दीर्घदृष्टि योगारूढ महर्षिओंके विधिवाक्यनसें बाहिर क्यों होतेहो, उन परमपूज्यपुरुषोंके वाक्यनको क्यों छिपातेहो, ।

क्या उनको तुम अपनेजैसे महात्मा नहीं समझते हो, वा उनको क्या तुम्हारेजैसा धर्मज्ञान नहींथा, वा उनके आचारको क्या तुम शिष्टाचार नहीं समझतेहो ।

हेभ्रातृजनों—तुम्हारे ख्याल किदर लगेहुएहैं, चित्तको सावधानकर्के विचारिये कि—वो योगारूढमहर्षि योगजपरमधर्मनिष्ठ प्रसिद्धहीहैं तो उनके आचरणको कौनआस्तिकपुरुष सदाचार नहीं कहसक्ता, ।

हेपाठको—ऋतम्भराप्रज्ञ होनेसें वो महर्षिही महात्मापदका वाच्यहैं, औरमेरेजैसे तो मानात्माहैं ॥

अथवा इससमयमें अपने२ ख्यालसेंही धर्माधर्म मानाजाताहै, पुरातन योगारूढ महर्षिओंके तो कहां श्रीस्वामिदयानन्दसरस्वतीजीकेभी वाक्यनका सम्मान नहींकराजाता, हे प्रियभ्रातृजनो—देखो संस्कारविधिग्रन्थमें स्वामीजी मांसभक्षणविषयका परमप्रमाण बृहदारण्यकउपनिषत्का मंत्र, तथा आश्वलायन गृह्यसूत्र लिख गएहैं, फिर उसका अर्थभी मांसभक्षणही लिखगएहैं, तो आप स्वामिजीके लेखका अनादर क्यों करतेहो, व अपनी जिदोजिदीकर क्यों क्षति पहुंचातेहो देखो प्रमाणांक ३२९में श्रीबालगंगाधरतिलकजीके भाषणको, तिलकमहाराजकेभी भाषणसें सिद्धहै कि जैनउपदेशकोंके कथनसें ही वेदविहित पशुयज्ञ व मांसभक्षण छोडा गयाहै, तो उनसबमहानुभावोंके

वाक्यनका मान न रखकर आप प्रक्षिप्त क्यों कहतेहो,

समाजी महात्मा स्वामीदर्शनानन्दजीनें 'स्थावरजीवविचार' कतावके सफा १३ पर लिखाहै कि–सत्यार्थप्रकाशके आठवेंसमुल्लासमेंभी किसीमहात्माने इस मजमूनको मिलायाहै स्वामीदर्शनानन्दजीके इत्यादिलेखसेंभी जाना जाताहै कि–समाजीभाईओं ने सत्यार्थप्रकाश का पाठ कहीं अधिक कहीं न्यून करडालाहै ॥

प्रार्थनासें कहताहूं कि–ऋतुम्भराप्रज्ञ दीर्घदृष्टि महर्षिओंके बराबर अयोगिजनोंकी बुद्धि नहींहोसक्ती अतः जिदोजिदीको छोडकर ऋतुम्भराप्रज्ञ महर्षिओंके विधिवाक्यनके अनुकूलही वर्ताव परमहितकर होगा ॥

पदोंके	अर्थ
अज–छाग	बकरा
शश	खरगोश
प्रभृति	आदि
मत्स्य	मछी
आर्ष	वेद व ऋषिओंका
ध्येय	जिसका ध्यान करें वो
ऋतम्भराप्रज्ञ	संप्रज्ञात योगावस्थामें जो ध्येयका संशयविपर्ययसें रहित यथार्थ प्रत्यक्षज्ञान हुआकरताहै उससत्यार्थको विषयकरने वाले प्रत्यक्षज्ञानकी ऋतम्भरा संज्ञाहै, वो ऋतम्भरा 'प्रज्ञा' ज्ञान जिनमहानुभावोंके उदयहुआहै वो ऋतम्भराप्रज्ञ, इसनामसें कहजातेहैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	आगख	श्रीगख
२	२१	सिद्धम	सिद्धम्
३	१	पदाथा	पदार्थों
४	५	घ्यय	ध्येय
५	५	आपको	आपको
५	१५	गृस्थ	गृहस्थ
७	१६	स्नेद्रा	स्नेहा
६	२	योबल	योगबल
१५	१	दि	यदि
१६	१६	मूल	भूल
१६	२	वदन्ति	वदन्ति
२०	१७	ग्रन्यन	ग्रन्थन
३२	५	रव्याति	ख्याति
३२	७	प्रज्ञान	प्रज्ञात
३४	२०	गृह्म	गृह्य
३५	१	बृंहदा	बृहदा
३५	२३	नहाथा	नहींथा
३८	३	ग्रन्थों	ग्रन्थ
४१	१७	गृह्य	गृह्य
४३	१७	बेममझी	बेसमझी
४४	१	गोगज	योगज
४६	८	पितरोंके	पितरोंका
४७	५	ब्राह्मा	ब्राह्म
४८	१५	आतिथि	आतिथि
		समर्पर्ण	समर्पण
४६	२	देवादी	देवादि
४६	८	श्रति	श्रुति
	१६	वद	वेद
५०	२१	तीनंमत्र	तीनमंत्र
५१	१	लखतो यहं	लिखातोयहां
५२	२१	बाधेक	बोधक
५३	५	हाकेर	होकर
५८	८	सर्वप्र	सर्वप्र
५६	१२	उपदशे	उपदेश
६०	२	गाबो	गावो
	१५	हीहैं	हीहैं
६२	५	महिंम	महिंसा
६३	७	अल्प	अल्प
	१८	हिंसाजन्य	हिंसाजन्या
६६	१	दवे	देव
६७	७	यज्ञस्य	यज्ञोऽस्य
७४	१२	अग्निषो	अग्नीषो
७६	४	ब्रह्मणो	ब्राह्मणो
	१२	तोवे	ताव
८०	१	श्राद्ध	श्राद्धे
	२	सुत्सृजेत्	मुत्सृजेत्
	१५	युधिष्ठर	युधिष्ठिर
	२१	दोप	दोष
८२	४	परन्तु	परंतु
	६	अर्थदि	अर्थादिखा
८४	१६	द्विज	द्विजः

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	२४	कर	करें
८५	२	युक्त	नियुक्त
८७	२३	ब्रह्मचारी	ब्रह्मचारी
८८	३	॥५॥	॥१॥
८६	१६	ब्राहो	वाहो
६४	१२	रूष	रूप
६६	२१	ब्राह्मणं	ब्राह्मणं
१०४	६	उनमसेएक	उनमेंसेएक
१०५	२२	निपेध	निषेध
११२	४	थका	थेका
११४	८	श्रति	श्रुति
	२०	ह	है
१२३	५	साख्य	सांख्य
१२४	४	शाम्त्र	शास्त्र
१२६	१३	रूष	रूप
१३३	१	दशर्न	दर्शन
	६	विंशं	विंशं
	६	अषराध	अपराध
१३४	८	जोषची	जोपची
१३५	१	हाकिर्मे	हीकर्म
	२०	ऐसें	ऐसे
	२१	अर्चिमा	अर्चिर्मा
१३६	१४	क्रमि	क्रमि
१४०	१०	कतह	कर्तेहैं
१४२	१४	छिपा	छिपा
	१६	भावतीय	भागवतीय
१५२	२३	ब्राह्मणाकों	ब्राह्मणोंका
१५३	१५	व्यासादिकें	व्यासादिकों
	१५	रजोंने	राजोंने
१५४	१६	कारस	कारसें
१५७	८	कर्तेहं	कर्तेहैं
१५८	४	शृङ्गी	शृङ्गी
१५६	१	जाताह	जाताहै
१६०	२१	निवार	नीवार
१६२	५	थोडेस	थोडेसे
१६७	२	हुए	हुए
	१६	मैढेके	मेंढके
१६८	१७	दयान्द	दयानन्द
१७१	६	रज्ञा	राज्ञा
१७२	२	लिखैह	लिखेहैं
१७४	६	दस्याप	दस्योप
	१२	मालभेत	मालभेत
	१५	लुभेत	लभेत
१७५	६	ब्रवीत	ब्रुवीत
१७७	५	जाकेथन	जोकथन
१७८	२	ब्रवीत	ब्रुवीत
	७	सके	सकें
	१७	मत्रों	मंत्रों
१८०	६	एवच्छागः	एषच्छागः
१८१	५	याग्ये	योग्य
१८४	२	हीहो	हीहै
१६२	१०	कुकल्लू	कुल्लूक
१६३	२०	दोषं	दोष

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६४	१५	समाचीन	समीचीन
१६६	३	विनार्मी	विनामी
२०२	६	मसमें	मासमें
	२०	व्यंनज	व्यंजन
२०३	११	वाकप्रमार	वाक्प्रसार
२०५	४	चाहतंह	चाहतांह
२०६	१०	टींनि	हींनि
	११	सान्ताने	सान्तानि
२०७	१४	दोप	दोप
	१५	त्राक्य	वाक्य
२०६	८	मांराको	मांसको
२०८	३	भ्रष्टरय	भ्रष्टस्य
२०८	४	पालं	पलं
२१०	५	कां	को
२१२	१५	दृष्टान्तानूखलुदार्शितुंच	दृष्टान्तानभिधातुमेव
२१३	१६	माष्मजी	भीष्मजी
२१४	२	ासद्ध	सिद्ध
२१७	२	हिसां	हिंसा
	५	शस्त्रों	शास्त्रों
२१८	६	रेमे	रेमे
२१६	६	वामाय	वासाय
	१२	हित्स्व	हित्स्वा
२२०	३	मांके	मांसके
	१०	अर्य	अर्थ
२२२	१	मेमर्ता	मेमर्तो
२२५	६	आत	आप्त
२२६	२	हुकम	हुक्म
	५	आरै	और
२२७	४	परिग्रहा	परिग्रहो
२३०	१३	इदमेव	इदमेक
२३१	७	नजा	प्रजा
२३४	४	मखक	मखके
२३६	१	पत्रसें	पात्रसें
२३७	३	परोक्षा	परीक्षा
२३८	१६	कर्मेग	कर्मण
२३८	१७	आद्यवों	माध्यवों
२४१	८	मांसनं	मासनं
२४८	६	कहमी	कहामी
२५०	१३	पूर्वपी	पूर्वपक्षी
२५१	५	पक्षाका	पक्षीका
२५२	१	स्हना	रहना
	१६	नचाहिये	नीचाहिये
२५४	१७	रचैहैं	रचेहैं
	२२	मेंसें	सें
२६०	६	स्मृभ्यों	स्मृतिभ्यों
२६२	३	ऽधार्मेमः	ऽधोधर्मः
	६	होंगा	होगा
	१८	ता	तो
	२०	जुके	चुके
२६३	३	श्रुति	श्रुति
२६४	७	बालमा	बालको

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	११	तृतिय	तृतीय
२६६	१२	वहां	वहां
२६७	१६	रहनी	रहने
२६८	१२	यया	यथा
२७५	८	प्य	प्य
२७६	८	शगीर	शरीर
२७७	२०	हे	हैं
२७८	४	ऋतुमें	ऋतुमें
	२२	पक्क	पका
२८०	१	जीवनन	जीवन
	२१	एंव	एवं
२८१	१२	जवि	जीव
२८५	६	भूलक	भूलकर
२८६	८	आंवं	आंव
२८९	२०	रागके	रोगके
	२१	सकल	सफल
२९६	१४	जा	जो
२९७	९	वया	क्या
२९९	७	सादा	सर्वदा
३०१	७	वेदवतो	वेदवेता
३०२	४	दुगार्कुड	दुर्गाकुंड
	९	ज्वला	ज्वाला
३०६	११	०यते	श्रूयते
३०७	२१	रहेह	रहेहैं
३०८	१	मिथाला	मिथिला
	१०	जट	जड़
	२०	श्रति	श्रुति
३११	१४	कसोथ	केसाथ
३१३	१६	महारजे	महाराजे
३१६	२	रवहशी	क्रूरवहशी
	३	तत्त	तात्त
३२०	२०	पौत्रों	पौत्रों
३२८	२०	विघातान	विधताने
३२९	५	त मारा	न मारा
३२९	५	पादैश	पैदाइश
३३०	१२	०००	१०००
३३१	३-८	प्रादैश	पैदाइश
	१७	प्रत्पुत	प्रत्युत
३३२	२२	जीवन्मुक्त	जीवन्मुक्त
३३८	६ ६	तयापि	तथापि
३३९	१	ग्रन्यका	ग्रन्थका

शुद्धि भूमिकाऽऽदिकी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	२	क्लेश	क्लेश
२	११	म्मृति	स्मृति
३	७	मांम	मांस
१४	१४	पदाथं	पदार्थ
४	१०	नारितक	नास्तिक
	११	मांम	मांस
६	२१	आलरयादि	आलस्यादि

> ओम् <

भक्ष्य निर्णय भास्कर

श्रीगणनाथायनमोनमः श्रीसरस्वत्यैनमोनमः ।

ध्याकरबन्दोताईशानं सबतेअधिकजोशक्तिमानं ।

हमरिधियोंकाप्रेरकजोई, सर्वकर्मफलदातासोई ॥

अथनिर्विघ्नग्रन्थकी समाप्तिलिये शिष्टाचारसें प्राप्त मंगलाचरणको प्रथम दो श्लोकोंसें कर्तेहैं ॥

ध्यात्वावन्देतमीशानं यःसर्वाधिकशक्तिमान् ।
धियोनः प्रेरयेद्यस्तु सर्वकर्मफलप्रदः ॥१॥
अत्रिकश्यपभृग्वाद्या येषांलोकेष्विमाःप्रजाः ॥
धर्मप्रवर्तकान्वन्दे सर्वांस्तानपिसादरम् ॥२॥

टीका—उस परमेश्वर को ध्यानकर्के मैं वन्दना कर्ताहुं जो सर्वसें अधिकशक्तिमानहै व जो हमारीबुद्धिओंको प्रेरे है क्योंकि सर्वजीवोंको सर्वकर्मोंके फलोंका देनेवालाहै अर्थात् सर्वकर्मोंके फलभोगवानेकेलिये सर्व जीवोंकी बुद्धिओंका प्रेरक है ॥ १ ॥ भूआदि लोकोंमें जिनोंकी यिह प्रत्यक्ष सन्तानाहैं ऐसेजो अत्रिकश्यप भृगु वसिष्टादि महर्षिजन धर्मोंके प्रवर्तकहैं उनसर्वयोगीन्द्र महर्षिओंकोभी मैं आदरसें वन्दना कर्ताहुं ॥२॥

ग्रन्थरचनाके हेतुको बोधनकर्तेहुए ग्रन्थके रचनकी अब प्रतिज्ञाकर्तेहैं ॥

विवदन्तेहिभक्ष्येषु तमसारुद्धबुद्धयः ॥ उदयामि ततश्चण्डम् भक्ष्यनिर्णयभास्करम् ॥ ३ ॥

टीका—तमकीन्याई तमोगुणसे वेष्टितबुद्धिवालेपुरुष अजशशहरिणाऽऽदिकोंके भक्ष्यमांसोंमें विवादकर्तेहैं, विवादसें अतिक्लेश पाते हैं उसहेतुसें चण्डसूर्यवत् तमकोदूरकरणेवाले भक्ष्यनिर्णयभास्करग्रंथको मैं उदयकर्ताहूं। इसग्रंथमें तीन विभागहोंगे उनमें प्रथम प्रमाणप्रकाश द्वितीयदृष्टान्तप्रकाश तृतीययुक्तिप्रकाश, नामसें होगा ॥३॥

हेपाठको—अन्यायमें सहायताका नाम पक्षपातहै जब किसीमतका वा पुरुषका पक्षपातहोताहै तब सत्यअर्थका निर्णय नहींहोसक्ता किंतु तब अवश्यंही अन्याय मिथ्याभाषणादि होतेहैं सो महापापहैं इस्से पक्षपातको त्यागकर आर्षमतानुसारी यिहग्रन्थ रचियेहै, यिहअबकहतेहैं ॥

पक्षपाताद्भवेत्पापं पुण्यंनिष्पक्षपाततः। निष्पक्षपातमाश्रित्य लिखाम्यार्षमतानुगम् ॥४॥

टीका—पक्षपातसें पाप और पक्षपातके त्यागसें पुण्यउदयहोताहै इस्से निष्पक्षपातको आश्रयकरके, आर्षमतका वेद व ऋषिओंके मतका अनुसारीग्रंथकोमें लिखताहूं ॥४॥

सर्वसांसारिक सुखसें विरक्तहुए जो केवलपरमात्माके ध्यानाभ्यासपरायणहैं उनपुरुषोंके खानेयोग्यअन्नको अबप्रथमकहतेहैं।

दृष्टश्रुतार्थेष्विहवीतरागा विश्रान्तिमिच्छन्तिपरावरेये। तैःस्निग्धमन्नंमृदुभक्षणीयं वेदेमनोह्यन्नमयंप्रसिद्धम् ॥५॥

टीका—स्त्रीपुत्रपति, धनभूमिगृह शब्दस्पर्शरूपरसादिक दृष्टपदार्थों में और इन्द्रलोकादिकोंके दिव्यश्रुतविषयोंमें विरक्तहुए जोपुरुष परमात्मामें चित्तकी समाधिरूपस्थितिकोचाहतेहैं अर्थयिह दृढवैराग्यसें ध्यानाभ्यास परायणहैं, इसजगतमें ऐसेनिवृत्तिमार्गवाले उनमनुष्योंने, स्निग्ध, गोके घृतदुग्ध आदिकोंसें मिश्रित मूंगदाल भातआदिक कोमलअन्न खानाचाहिये क्योंकि छान्दोग्यउपनिषदमें मनको अन्नमय कहाहै अतः जैसा २ कोमल वा बलिष्टपौष्टिकभोजन कराजाताहै वैसा २ मन होजाताहै, कोमलभोजनकरणें सें चित्तभी कोमलहोजाताहै, कोमलहुए चित्तको दीर्घकाल अभ्यासकर योगधारणामें स्थिर कर सकीताहै, अतः वीतराग ध्यानाभ्यासीपुरुषोंने अतिपौष्टिक मांसभोजनको त्यागकर दालभातदुग्धादिक कोमलआहार कराचाहिये, फिर धारणाकी दृढतासें अनन्तर ध्यानकी परिपक्कतालिये दालभातकाभी त्यागकर्के जलसेंमिश्रित, दुग्धकोहीपीवे, देखो महाभारत—

अपःपीत्वा पयोमिश्रा योगीबलमवाप्नुयात् ॥

पर्व १२ ॥ अ० ३०१ ॥ ४५ ॥ अर्थ—दुग्धसेंमिश्रितजलको पानकर योगाभ्यासीपुरुष, योगबलकों, चित्तस्थित करणेके बलको प्राप्तहो ।

गोरक्षशतक—**अङ्गानांमर्दनंकृत्वा श्रमसंजातवारिणा ।**
कट्वम्ललवण त्यागी क्षीरभोजनमाचरेत् ॥५३॥

अर्थ—प्राणायामादिकोंके प्रयत्न कर जो पसीना आवे उस पसीने के जलसें उर पृष्ठ उदर बाहुआदिअंगोंका मर्दनकर्के, कटु खट्टा लवणको त्यागकर योगाभ्यासीपुरुष दुग्धका भोजनकरे ॥

अब विचारिये कि जब निवृत्ति मार्गवाले योगाभ्यासीकेलिये कटु खट्टा लवनकाभी श्रीगोरक्षनाथजीने त्याग कहाहै तो उसलिये मांसादिकोंका खाना कैसे उचित होसक्ताहै

प्रश्न—ध्यानाभ्यासको निवृत्तिमार्ग क्यों कहतेहैं—

उत्तर—योगावस्थामें स्थाणुकीन्यांई शरीरभी बाहु ग्रीवा करचरणादि-कोंके व्यापारमें निवृत्तहोताहै, और श्रोत्रत्वकनेत्रआदिक इन्द्रियभी स्वस्व व्यापारमें निवृत्तहोतेहैं, और देशकालस्वशरीरआदिकोंको विस्मृतकरके एक-ध्येयमात्रमें स्थिरहुआ चित्तभी अन्यसर्वादिव्यादिव्य विषयोंसे निवृत्त होताहै, और प्राणअपानआदिकभीअपने २ व्यापारमें निवृत्तहोतेहैं, अतः ऐसेयोगकी ध्यानाभ्यासरूप साधनावस्थामें क्रमरसें शरीरके करचरणादिक अंगोंकोभी श्रोत्रत्वक नेत्रआदिक इन्द्रियोंकोभी प्राणअपानआदिकोंकोभी चित्तकोभी स्वस्वव्यापारसें निवृत्त करजाताहै अतः ध्यानाभ्यासको निवृत्ति मार्ग कहतेहैं ॥

सो योगाभ्यासरूप निवृत्तिमार्ग यद्यपि वैराग्य उदयहुए चारोंआश्रमों का धर्महै तथापि वानप्रस्थआश्रमका और संन्यासाश्रमका ग्रहण तो वैराग्य हुएहीयोग्यहै अतःवानप्रस्थका संन्यासीका साधुमात्रका तो यिहनिवृत्तिमार्ग नियत आवश्यक धर्महै, इस्से वानप्रस्थ संन्यासी साधुमात्रने अतिपौष्टिक मांसाहारको त्यागकरके दालभात दुग्धका मिताहारही करणायोग्यहै—

प्रश्न—यदि साधुमात्रने मृदुमिताहारही करणायोग्यहै तो वहुतसें साधु योगी कहलातेहुएभी मांसभक्षण क्यों कर्तेहैं

उत्तर—उनका नाम योगीहै परन्तु वो योगके लक्षणको, योगके अवान्तरभेदोंको, योगके साधनोंको योगके विघ्नोंको, योगके अवान्तरफल को योगके मुख्यफलको योगाभ्यासमें पथ्यअपथ्यको नहींजानते अतः अज्ञानसें मांसभक्षणकर्तेहैं ॥

ऐसे योगीओंसों मैंभी प्रार्थना कर्ताहूं कि—हेभ्रातृगण तुमारा योगी नामहै इस्से आप कृपया योगके लक्षणादिकोंको योगाभ्यासमें पथ्यापथ्य

को योगग्रन्थनमें देखो —श्रीगुरुगोरक्षनाथजीनेभी उक्तश्लोकमें योगाऽभ्यासी लिये लवणकाभी त्यागकर्के दुग्धही भोजनकरणाकहाहै अतः आपको मांसका त्यागकरणाहीयोग्यहै क्योंकि—आपप्रवृत्तिमार्गको त्यागचुकेहैं इस्सें मांसको त्यागकर मृदुमिताहार कर्तेहुए निवृत्तिमार्गपरायणहोना आपकोयोग्यहै ॥५॥

प्रश्न यदि निवृत्तिमार्गवाले विरक्तजनोंने दालभाताऽऽदिक कोमल भोजन कराचाहिये तो प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंने कैसाभोजन करणा योग्यहै, इसकाउत्तर अब कहतेहैं—

दारासुत स्वामिसुतादिसक्ता गोऽजाधराधाम-धनादिरक्ताः ॥ येकर्मिणोह्यार्षमतानुगास्तै मेंध्यंपलंवृष्यमपीहभोज्यम् ॥६॥

टीका—स्त्रीपुत्रपतिकन्याभ्राता सासुसुसरआदिकोंमें आसक्त, गौबकरी हस्तीअश्व रथादिकोंमें तथा भूमि गृह धनादिकोंमें रागवाले जोपुरुष संध्योपासन अग्निहोत्रादिककर्मकरणेवाले वेद व ऋषिओंके मतानुसारीहैं ऐसे उन प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंने 'मेध्य' शुद्ध पवित्र, वीर्यवर्द्धक अतिपुष्टिकारक मांसभी भोजनकराचाहिये ॥

विदितरहेकि—सत्यधर्मानुकूल शरीरकी प्रवृत्तिसें, नेत्र घ्राण कर चरणादिक इन्द्रियोंकी प्रवृत्तिसें लाभाऽलाभविषयक विचारादिरूप चित्तकी प्रवृत्तिसें, जो धनका उपार्जनहोवे उस धनसें उक्तत्रिविध प्रवृत्तिमय पंचमहायज्ञोंका करणा, अपनेआश्रितबालवृद्धादिकोंका पालन, और संन्यासादि-आश्रमिओंका पालन, धर्मानुसार संततिका उत्पादन, इत्यादिक प्रवृत्तिमार्ग है क्योंकि यह शरीरइन्द्रियमनकी प्रवृत्तिसें सिद्ध होनेवाला है ॥

हेपाठकभ्रातः—यद्यपि निवृत्तिमार्ग अत्युत्तमहै ॥

तथापि—बालवृद्धआर्तजनोंउपरि उपकारक होनेसें, और निवृत्तिमार्ग वाले संन्यासादिआश्रमोंकाभी मूल होनेसें आधारहोनेसें, अन्नवस्त्रादिकोंकी सेवाकर षष्ठांशपुण्यका भागीहोनेसें, गृहस्थाश्रमीओंका प्रवृत्तिमार्गभी अत्युत्तमहै ऐसे गृहस्थजनोंने वीर्यवर्द्धक अतिपुष्टिकारक पवित्रमांसभोजनभी करणा आवश्यकहै ॥

पूर्वपक्षी०—कोई मांसको भी शुद्ध व पवित्र कहता है ॥

आस्तिक०—जिनोंने धर्मशास्त्रों को सम्यक्‌नहीं विचारदेखा वा दुरा-ग्रहवालेहैं सो विहितमांसको अशुद्ध कहते हैं, धर्मशास्त्रोंमें तो श्वानके चण्डालआदिकों केभी मारे हुए अजशशहरिणादिकोंका मांस घृततैलकी न्याईं शुद्धहीकहाहै ॥

अब मांसकी शुद्धताके पवित्रताके प्रतिपादकप्रमाणोंको प्रथमदिखलाताहूं॥

ऋग्वेदसंहिता प्र० १—मेधंशृतपाकंपचन्तु ॥

अष्टक ३॥ मं० १॥ सूक्त १६२ ॥१०॥

इसमन्त्रपर सायणभाष्य प्र० २—मेधंमेध्यंयज्ञार्हंपश्ववयवं शृतपाकं देवयोग्यपाकोपेतं यथाभवतितथा-पचन्तु ॥ अर्थ—पकानेवालेपुरुष यज्ञके योग्य पवित्र पशुके अवयव मांसको पूरापाकवाला पकावें अर्थात् देवतोंके योग्य जैसापाक होताहै वैसा पकावें ॥

मनुस्मृति प्र० ३—श्वभिर्हतस्ययन्मांसं शुचि तन्म नुरब्रवीत् ॥ क्रव्याद्भिश्चहतस्यान्यै श्चण्डाला

र्वैश्वदस्युभिः ॥ अ० ५॥१३१॥ अर्थ--कुत्तेआदिकोंकर मारेहुए और चोरचण्डालआदिकोंकर मारेहुए अजआदिकोंका जो मांसहै उस मांसको मनुजी शुद्ध कहते भए अर्थात् ब्राह्मणक्षत्रियादिकोंकर मारे हुए अजआदिकोंके मांसका तो क्या कहनाहै श्वानचंडालादिकोंकर मारेहुए अजआदिकोंका मांसभी शुद्धहै ॥

बृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र प्र० ४—क्रव्याद्यैःसार मेयाद्यै र्हतंमृगादिकंहरेत् ॥ इदंशाकवदिच्छन्ति पवित्रं मुनिसत्तमाः॥ अ० ४॥३२१॥

अर्थ--कच्चामांसखानेवाले श्वानआदिकोंने मारेहुए मृगआदिको लेआवे इसको शाककीन्याई पवित्र श्रेष्ठ मुनिजन कहते हैं ॥३२१॥

उसीका प्र० ५--क्रव्यादाद्यैर्हतंमांसं सर्वदाशुचि-कीर्तितम् ॥३३१॥ अर्थ—महर्षिपराशरजी कहते हैं कि श्वान बाज आदिकोंकर मारेहुए मृगादिकोंका मांस सर्वदाशुद्ध धर्मशास्त्रोंमें कहाहै ॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० ६—शुचिगोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृति-स्थंमहीगतम् ॥ तथामांसंश्वचण्डाल क्रव्यादादि निपातितम् अ० १॥१९२॥

अर्थ—अपने शुद्धरूपसे स्थित, गोतृप्तिपरिमाणवाला महीगत जल शुद्धहै तथा श्वानचण्डालआदिकोंने मारेहुए मृगादिकोंका मांस शुद्ध है ॥

लिखितस्मृतिप्र०७ आमंमांसंघृतंचौद्रं स्नेहाश्चफल संभवाः अन्त्यभाण्डस्थिताह्येते निष्कृताः

शुचयःस्मृताः ॥६३॥ अर्थ—कच्चामांस, घृत, शहत, नारिकेल आदिफलोंके तेल, यिहचारों चण्डालके भाण्डेमें स्थितहों तो चण्डालके भाण्डेसें निकालेहुए यिहशुद्ध स्मृतिओंमें कहेहैं अर्थात चण्डालके भाण्डसें निकालाहुआभी कच्चा मांसघृततेलशहतकी न्याई शुद्धहीहै ॥

साक्षात्ब्रह्माकेपुत्र अत्रिमहर्षिकी अत्रिस्मृति प्र० ८

आर्द्रमांसंघृतंतैलं स्नेहाश्चफलसंभवाः॥
अन्त्यभाण्डास्थितास्त्वेते निष्क्रान्ताःशुद्धि-
माप्नुयुः ॥२४६॥

अर्थ—अशुष्कमांस घृततेल बादामआदिकोंके रोगन, यिह चंडालके भांडेमेंरखेहुएभी चंडालकेभांडेसें निकालेहुए शुद्धहोतेहैं, हेपाठक देखो घृततेलके समान मांसका शुद्धकहाहै

साक्षात्ब्रह्माकेपुत्र वसिष्ठजीकी वसिष्ठस्मृति प्र० ९

श्वहताश्चमृगावन्याः पातितंचखगैःफलम् ।
बालैरनुपरिक्रान्तं स्त्रीभिराचरितंचयत् ॥
परिसंख्यायतान्सर्वान् शुचीनाहप्रजापतिः ॥
अ० ३ ॥४४॥४६॥

अर्थ—श्वानोंने मारेहुए बनकेमृग, पक्षीओंने गिराए फल, बालोंने पकड़ा खाद्यवस्तु, स्त्रीओंने किया गृहका आचरण, गिनकर्के उनसर्वको ब्रह्माजी शुद्धकहते भए ॥

जब मुनिवर भरद्वाजजीने ससैन्य भरतजीको निमंत्रणकराथा तब योगबलसें भरद्वाजजीने देवतोंका आह्वानकर्के नानाप्रकारके मांसादिक भोज्यपदार्थ रचे, तब भरद्वाजजीनेकहा—वाल्मीकीयरामायण प्र० १०

मांसानिचसुमेध्यानि भक्ष्यन्तांयोयदिच्छति ॥

काण्ड २॥सर्ग९१॥५२॥ पृ० २८६

अर्थ—सुष्ठु पवित्र मांसोंको खावो और जोपुरुष जिस वस्तुको खाया चाहे सो उसको खावे ॥

हेमित्र-देखो जहां गंगायमुनासरस्वतीके प्रवाह चलरहेहैं तहां तीर्थराजप्रयागमें मुनिवर भरद्वाजजीने मांससें निमंत्रणकरा, और मांस मेध्य, पवित्रकहाहै ॥

वाल्मीकीयरामायण प्र० ११

तांतदादर्शयित्वातु मैथिलींगिरिनिम्नगाम् ॥
निषसादगिरिप्रस्थे सीतांमांसेनछन्दयन् ॥

कां २॥ स० ९६ ॥१॥

इदंमेध्यमिदंस्वादु निष्टप्तमिदमग्निना ।
एवमास्तेसधर्मात्मा सीतयासहराघवः ॥

२॥ इसकीटीका प्र० १२— ३०५ पृ०

छन्दयन् मांसविशेषप्रदर्शनेन लालयन् सान्त्वयन् ॥

अर्थ—तब चित्रकूटमें श्रीरामजी जानकीको मन्दाकिनीनदी दिखलायके पर्वतकी निवासयोग्यभूमिमें स्थितहुए सीताको मांसविशेषसें प्रसन्नकर्के

हुए कहा कि - यिह मांस 'मेध्यहै' पवित्रहै यिह स्वादुहै, यिहमांस अग्निसें भुनाहुआ गयाहै, ऐसे सीताको प्रसन्नकरतेहुए सोधर्मात्मा रामजी सीताके सहित स्थितहोतेभए ॥

वाल्मीकीयरामायण प्र० १३

क्रोशमात्रंततोगत्वा भ्रातरौरामलक्ष्मणौ ।
बहून्मेध्यान्मृगान् हत्वा चेरतुर्यमुनावने ॥

का० २॥सर्ग५५॥३२॥

अर्थ—भरद्वाजके आश्रमसें चलकर यमुनासें पार होकर उस्सें एक कोसमात्र जाकर रामलक्ष्मणदोनोंभ्राता यमुनाके बनमें बहुत पवित्रमृगोंको मारकर खातेभए ॥

भगवद्भागवत प्र० १४

सएकदाऽष्टकाश्राद्ध इक्ष्वाकुःसुतमादिशत् ।
मांसमानीयतांमेध्यं विकुक्षेगच्छमाचिरम् ॥

स्कन्ध ९॥अ०६॥६॥

सोइक्ष्वाकुमहाराजा एकसमय अष्टकाश्राद्धलिये विकुक्षि पुत्रको आज्ञा कर्ताभया कि-हेविकुक्षे श्राद्धलिये पवित्रमांसको ल्यावो, जाओ चिरमतकर ॥

हेपाठक—पौषमाघ फाल्गुनकी कृष्णाष्टमीमें जो श्राद्धहो सो अष्टका श्राद्ध कहाजाताहै ॥

मार्कण्डेयपुराण प्र० १५

शुचिगोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृतिस्थंमहीगतम् ।
तथामांसंचचण्डाल क्रव्यादादिनिपातितम् ॥

अ० ३२॥२५॥

अर्थ—अपने शुद्धरूपसेंस्थित, गोतृप्तिपरिमाणवाला, महीगतजल पवित्रहै, तथाचंडालादिकोंके मारेहुए मृगआदिकोंका मांस पवित्रहै ॥

विदितरहेकि—श्रुतिस्मृतिओंमें जिनअजशशहरिणादिकोंके तथा तित्तिर आदिकोंके मांसभक्षणका विधानहै उनकाही मांस शुद्ध कहाजानना क्योंकि वो श्रुतिस्मृतिओंसें विहितहै। और जिन उष्ट्रवानरश्वानादिकोंके मांसभक्षण का निषेधहै उनका मांस शुद्ध नहींजानना क्योंकि वो श्रुतिस्मृतिआदिकोंसें निषिद्धहैं, यिह व्यवस्था अर्थसें जानीजातीहै ॥

वेदस्मृतिओंसेंविहित मांस शुद्धहै इसीसें स्मृतिआदिक धर्मशास्त्रोंमें कहाहै कि-यदि कोई ब्रह्मचर्य्यसें पीछे ब्राह्मणको मांसदेवे तो उस मांसको 'हटावे नहीं' वापस नहीं फेरे किन्तु ग्रहणकरलेवे, इसअर्थके विधायक प्रमाणोंको अब दिखलाताहूं ॥

मनुस्मृति प्र० १६

शय्यांगृहान्कुशान्गन्धा नपःपुष्पंमणीन्दधि।
धानामत्स्यान्पयोमांसं शाकंचैवननिर्णुदेत् ॥

अ०४॥२५०॥

अर्थ—शय्या गृह कुशा कपूरादिगन्ध जल पुष्प मणि दधि भूनेयव मत्स्य मांस शाक, इनवस्तुओंको 'हटावे नहीं' वापस नहींफेरे ॥

आपस्तम्बस्मृति प्र० १७—

आमंमांसं मधुघृतं धानाः क्षीरंतथैवच।
गुडस्तक्रंरसाग्राह्या निवृत्तेनापिशूद्रतः ॥

अ० ८ ॥ १७ ॥- उसी का प्र० १८—

शाकंमांसंमृणालानि तुम्बरुः सक्तवास्तिलाः।

रसाःफलानिपिण्याकं प्रतिग्राह्याहिसर्वतः ॥१८॥

अर्थ- कच्चामांस, शहत घृत भूनेयव दुग्ध गुड तक्र रस, यिह पदार्थ निवृत्तपुरुषने भी शूद्रसें ग्रहणकरलेने ॥१७॥ शाक मांस, कमलमूल, धनिआं मनु तिल रस फल तिलोंकी खल, यिहपदार्थ सर्वतें ग्रहणकरलेने ॥

बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र प्र० १९

दधिक्षीराज्यमांसानि गन्धपुष्पाम्बुमत्स्यकान् ।
शय्यातथासनंशाकं प्रत्याख्येयंनकर्हिंचित् ॥

अ०४॥२३३॥

अपिदुष्कृतकर्मभ्यः समायातमयाचितम् ।
पतितेभ्यस्तदातेभ्यः प्रतिग्राह्यमसंशयम् ॥२३४॥

दधि दुग्ध घृत मांस कपूरादिकगन्ध पुष्प जल मत्स्य शय्या आसन शाक, यिहपदार्थ कवीभी वापस नहींहटाने ॥२३३॥ जब बिनामांगे दुष्कृत कर्मीओंसें भी प्राप्तहोवें तब उनपतितोंसें यिहपदार्थ संशयरहितहोकर ग्रहण करलेने ॥२३४॥

याज्ञवल्क्य स्मृति प्र० २०

कुशाःशाकंपयोमत्स्या गन्धःपुष्पंदधिक्षितिः ॥
मांसंशय्याऽऽसनंधानाः प्रत्याख्येयंनवारिच ॥

अ० १॥२१४॥

अयाचिताहृतंग्राह्य मपिदुष्कृतकर्मणः ।
अन्यत्रकुलटाखण्ड पतितेभ्यस्तथाद्विषः॥२१५

अर्थ कुशाशाक दुग्ध मत्स्य कपूरादिगन्ध पुष्प दधि भूमि मांस शय्या आसन भूनेयव जल, यिह पदार्थ वापस नहींहटाने ॥२१४॥ बिनामांगे किसीनेदिये यिहपदार्थ दुष्कृतकर्मीओंसेंभी ग्रहणकरलेने परन्तु व्यभिचारिणी स्त्री, नपुंसक, पतित, शत्रु, इनचारजनोंसें यिहपदार्थ ग्रहण न करें ॥२१५॥

हेपाठक–पहिले बृहत्पाराशरीयप्रमाणमें पतितशब्दसें दुष्कृतकर्मीका ग्रहण है, और यहां पतितशब्दका जातिपतित अर्थजानना ॥

हेभ्रातः–इत्यादिक मांसकी शुद्धताके और ग्राह्यताके प्रतिपादक वाक्यनको तथा वक्ष्यमाण अजशशहरिणादिकोंके बलिप्रदानके और मांस भक्षणके विधायक वाक्यनको केईनवीनसमाजी भ्रातृजन प्रक्षिप्तकहतेहैं वो उनका कथन असत्यहीहै, क्योंअसत्यहै तथाही कहताहूं सुनिये ॥

१—श्रीस्वामीदयानन्दसरस्वतीजीनें अपने बनाए सत्यार्थप्रकाशके समुल्लास ३ पृष्ट ४५ वेंपर वेदानुसारी लिखाहै सत्यार्थप्रकाश प्र० २१

वेदब्राह्मण और सूत्रपुस्तकोंमें चारप्रकार के पदार्थ होमकेलिखेहैं एक तो जिसमें सुगंध गुण होय जैसेकि–कस्तूरी केशरादिक, और दूसरा जिसमें मिष्टगुणहोय जैसेकि–मिश्री शर्करादिक, और तीसरा जिसमें पुष्टिकारक गुणहोय जैसाकि–दूधघी और मांसादिक, और चौथा जिसमें रोगनिवृत्तिकारक गुणहोय जैसा कि–वैद्यकशास्त्रकी रीतिसें सोमलतादिक

औषधिआं लिखीहैं, इनचारोंका यथावत् शोधन उनका परस्परसंयोग और संस्कार करकें होमकरै सायं और प्रातः ॥

इससत्यार्थप्रकाशके समुल्लास ४ पृष्ठ १४८ पर स्वामी दयानन्दजी लिखतेहैं देखो प्र०२२ इसके कहनेसें अजामेधादिकोंका त्याग नहींआया ॥

अर्थयिह वहां—पहिले स्मृतिश्लोकमें जो अश्वमेध गोमेधादिकोंकाकरणा कलियुगमें विवर्जित कराहै इसपर स्वामीजी लिखतेहैं कि—इसके कहनेसें अजामेधादिकों का त्यागनहींआया अर्थात् अजमेधादिकोंके करणेका तो कलियुगमेंभी निषेध नहींकरा ॥

सत्यार्थप्रकाश प्र० २३—मांसको जो खाताहोय तो उसके वास्ते मांसके पिण्डकरनेका विधानहै इस्सें मांसके पिण्डदेनेमेंभी कुछपाप नहिं ॥ समुल्लास ४॥ पृष्ठ १४६॥

सत्यार्थप्रकाश प्र० २४—जो मांस खाय अथवा घृतादिकोंसें निर्वाहकरे वेभी सब अग्निमें होम के विना न खाय ॥ समुल्लास १०॥ पृष्ठ ३०३॥ सत्यार्थप्रकाश में इत्यादिक बहुतलम्बे २ मांसविषयके स्पष्टलेख स्वामीदयानन्दजीनें

लिखेहुएहैं सो हेभ्रातृजन यदि मांसविषयकेवाक्य प्रक्षिप्त होते तो स्वामीजी ऐसेलेख न लिखसके परंतु स्वामीदयानन्दजीने वेदब्राह्मण और सूत्रपुस्तकों के अनुसारी सायंप्रातः मांसके होमकरनेका विधानलिखाहै अजामेधादिकों के विधानको अंगीकार कराहै, मांसके पिण्डदानसें निष्पापता कहीहै, मांस वा घृतादिकोंको होमकेबिना न खाय, इसकथनसें होमकर्के मांसादिकों के खानेका उपदेशकराहै तो अपने आचार्यसें विरुद्धकहना समाजीभ्राताओं का समीचीन नहीं किंतु असत्यहीहै ॥

हेपाठकभ्रातः-जोसत्यार्थप्रकाश स्वामीजीने रचकर्के संवत् १९३२ सन् १८७५ ईसवीमें राजाजयकृष्णदासद्वारा बनारसमें छपवायाथा वोही प्रथमावृत्तिछपा सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्दसरस्वतीजीका बनायाहुआ माननेयोग्यहै क्योंकि-फिर संवत् १९४० कार्तिकवदि १५-तदनुसार सन् ईसवी १८८३ अकटोबर तारीख ३० में स्वामीजी परलोकगामी होगए तबतक द्वितीयवार सत्यार्थप्रकाश नहीं छपा । और जो स्वामीजीके परलोकगमनसेंपीछे सन् १८८४सें लेकर द्वितीयावृत्तिप्रभृति सत्यार्थप्रकाश समाजीभ्रातृजनोंने छपवाएहैं वो स्वामीदयानन्दजीके रचित माननेयोग्य नहीं क्योंकि स्वामीजीके छपवाए प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाशसें पीछेछपे सत्यार्थप्रकाशनमें बहुतपाठ समाजीभाईओंने कहीं न्यून कहींअधिक कर दियाहै, कहीं अदलबदल करडालाहै ॥

समाजीभ्राता०—जो सत्यार्थप्रकाश संवत् १९३२ में स्वामीजीने छपवायाथा उससें तीनवर्षपीछे संवत् १९३५ में स्वामीजीने एकवि-ज्ञापनपत्रभी निकालाथा उसमें स्वामीजीने लिखने और शोधनवालोंकी भूलकहीहै ।

ग्रन्थकर्ता—सत्यार्थप्रकाश छपानेसें तीनवर्षपीछे जो विज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने लेखकशोधककी, भूललिखीहै सो तर्पण और श्राद्धविषयमेंही भूललिखीहै क्योंकि उसविज्ञापनपत्रमें स्वामीजी ऐसे लिखतेहैं देखो-

इत्यादि तर्पण और श्राद्धके विषयमें जो लिखा गयाहै सो लिखने और शोधनेवालोंकी भूलसें छप गयाहै—इत्यादि इसविज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने तर्पण और श्राद्धको छोड़कर औरकोईलेख सत्यार्थप्रकाशका अशुद्ध नहीं बतलाया इस में निश्चितजानाजाताहै कि तर्पण और श्राद्धमेंबिना औरसमग्र प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश स्वामीदयानन्दजीका स्वीकृतथा

सत्यार्थप्रकाशके बहुतजगोंमें जो स्वामीजीने वेदब्राह्मण और सूत्र पुस्तकोंके अनुसारी मांसके होमका, मांसके पिण्डदानका, होमकर्के मांसके खाने का विधानकराहै, इत्यादिक मांसके बहुतलेखोंमें तो स्वामीजीने किसकी कोईभूल नहींलिखी और नाहीं विज्ञापनपत्रमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त लिखाहै तो अपनेस्वामीजीसे विरुद्धकहना समाजीभाईओंका समीचीननहीं किंतु असत्यहीहै ॥

हेभ्रातः उससंवत् १९३५के विज्ञापनमें स्वामीजी आपलिखतेहैं कि

–,,मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कार विधि,, अर्थात् सो प्रथमावृत्तिछपा सत्यार्थप्रकाश स्वामीदयानन्दजीने बनायाहै स्वामीजीने छपवायाहै उसमें यदि भूलरहैगईथी तो उससत्यार्थ-प्रकाशमें शुद्धिपत्रभी स्वामीजीने लगायाहै उसशुद्धिपत्रमें स्वामीजी भूलनि-कालदेते फिरजबग्रन्थ छापकर तियारहोगए स्वामीजीने अधिकारीजनोंको देदिये बाहिर भेजदिये और तीनवर्षतक अतिदीर्घकाल व्यतीतहोगया इतने दीर्घकालमें उससत्यार्थप्रकाशको स्वामीजी कईपुरुषोंको सुनातेरहे पढातेरहे उसका उपदेशकर्तेरहे तोफिर इतना तीनवर्षरूप दीर्घकालपर्य्यन्त स्वामी-जीको अपने ग्रन्थके लम्बे लम्बे प्रसंगोंकी भूल प्रतीतही नहींहुई यिहभी

एक अतिआश्चर्यकीबातहै, हेपाठक क्या ऐसेहोसक्ताहै किजोविद्वान् आप-ग्रन्थको बनावे, आप छपावे, फिर ग्रन्थको बांटकर तीनवर्षोंतक ग्रन्थका प्रचार करे तो ऐसेकरनेपरभी तीनवर्षोंतक अपने बनाए ग्रन्थमें लम्बे२ प्रसंगोंकी भूलग्रन्थकर्ताको बनीहीरहे, यिह क्या विचारमें आसक्ताहै ॥—

सत्यार्थप्रकाशके ४७ वें पृष्ठमें स्वामीजीने मृतपितरोंके तर्पण और श्राद्धकरणेसे सातगुण अर्थात् सातलाभ दिख लाएहं सो स्वामीदयानन्द-जीका लिखा पाठ मैं यहां लिखताहुं देखिये —मरेभये पित्रादिकोंका तर्पण और श्राद्धकरताहै उस्से क्या आताहै किजीतेभयेकी अन्न और जलादिकोंसे सेवा अवश्यकरनीचाहिये यह जानागया, दूसरा गुण जिनके ऊपर प्रीतिहै उनकानामलेके तर्पण और श्राद्ध करेगा तब उसके चित्तमें ज्ञानका संभवहै कि–जैसे वे मरगये वैसे मुझको भी मरनाहै मरणके स्मरणसे अधर्मकरनेमें भयहोगा धर्मकरनेमें प्रीतिहोगी, तीसरा गुण यहहै कि–दायभाग बाटनेमें संदेह न होगा क्योंकि इसका यह पिताहै इसका यह पितामहहै इसका यह प्रपितामहहै ऐसेही छःपीडीतक सभोंका नाम कण्ठस्थ रेहेगा वैसेही इसका यह पुत्रहै इसका यह पौत्रहै इसका यह प्रपौत्रहै इस्से दायभा-

गमें कभी भ्रम न होगा, चौथागुण यहहै कि--
विद्वानोंको श्रेष्ठधर्मात्माओंहीको निमंत्रण भो-
जनदान देनाचाहिये मूर्खोंकोभी नहीं इस्सें क्या
आताहै कि--विद्वान्लोग आजीविकाकेबिना क-
भी दुःखी नहोंगे निश्चिन्तहोके सबशास्त्रोंको
पढावेंगे और विचारेंगे सत्य२ उपदेशकरेंगे
और मूर्खोंका अपमान होनेसें मूर्खोंकोभी विद्या-
के पढनेमें और गुणग्रहणमें प्रीतिहोगी पांच-
वांगुण यहहै कि--देवऋषिपितृसंज्ञा श्रेष्ठोंकीहै
देवसंज्ञा दिव्यकर्म करनेवालोंकीहै पठनपाठ-
नकरनेवालोंकी तो ऋषिसंज्ञाहै और यथार्थ-
ज्ञानियोंकी पितृसंज्ञाहै उनको निमन्त्रणदेगा
तब उनमें बातभी सुनेगा प्रश्नभी करेगा उस्सें
उनको ज्ञानकालाभहोगा, छठवांप्रयोजन यहहै
कि--श्राद्धतर्पणसबकर्मोंमें वेदोंके मन्त्रोंको कर्म-
करनेकेलिये कण्ठस्थ रक्खेंगे इस्सें उसपुस्तकका
नाश कभी न होगा फिर कोई उसविद्याका प्रचार
करेगातब पदार्थ विद्या प्रगटहोगी इस्सें मनुष्यों-

को बहुतलाभ होगा, सातवां प्रयोजन यहहै कि—
वसून्वदन्तिवैपितॄन् रुद्रांश्चैवपितामहान् ॥ प्रपि-
तामहांश्चादित्यान् श्रुतिरेषासनातनी ॥—यह
मनुस्मृतिका श्लोकहै इसका यहअभिप्रायहै
कि—वसुजोहै सोई पिताहै जोरुद्रहै सोई पिता
महहै जोआदित्यहै सोई प्रपितामहहै येतीनों नाम
परमेश्वरहीकेहैं इस्से परमेश्वरहीकी उपासना
तर्पणसे और श्राद्धसे आई—

हेभ्रातः इत्यादिक औरभी सत्यार्थप्रकाशके कईजगोंमें स्वामीदयानंद
जीने जो मृतपितरोंके तर्पण और श्राद्धके विधान विस्तृतयुक्तिओंमें लम्बे२
लेखोंमें लिखे हैं वोभी युक्तियुक्तलम्बे२ लेख किसकीभूलमें नहींलिखेजासक्ते
किंतु स्वामीजीके बुद्धिपूर्वक लिखेहुएहैं क्योंकि इसलेखमें देवपितृआदिकों
का अर्थभी समाजकीही रीतिसें कराहुआहै इस्से जानाजाताहै कि—पहिले
ख्याल औरथा स्वामीजीका फिर ख्याल बदलगया ऐसे तर्पणश्राद्धमेंकी न्यांई
यदि मांसविषयकभी स्वामीका ख्याल बदलजाता तो स्वामीजी संवत्
१९३५ के विज्ञापनपत्रमें अवश्यं२ बोधनकर्ते परंतु सत्यार्थप्रकाशके बहुत
जगोंमें जो मांसके विधानलिखेहैं उनमेंसे एककोभी स्वामीजीने विज्ञापनपत्र
में अस्वीकृत नहींबोधनकराहै इस्से जानाजाताहै कि—पशुबलिप्रदानेके व
मांसभक्षणादिकोंके विधायक सर्ववाक्य स्वामीदयानन्दजीको स्वीकृतथे,
मनजूरथे तो अपनेस्वामीदयानन्दजीसें विरुद्धकथन समाजीभाईओंका
समीचीननहीं किंतु असत्यहीहै ॥

---

२ -हेभ्रातृजन इससमयमें तो छापा प्रचलितहै उसमें छपते ग्रन्थमें कोई पुरुष एकवाक्यको प्रक्षिप्तकरडाले तोभी हज़ार ग्रन्थमें वा जितनेछपवायें उतने ग्रन्थों में वो एकवाक्य प्रक्षिप्त जायसक्ताहै, भारतवर्षके सर्वग्रन्थनमें वो एकवाक्यभी नहींजायसक्ता, जबपहिले रेलगाड़ीभी नहींथी अतः समग्रभारतवर्षमें एकपुरुषका भ्रमणभी असंभवहीथा, छापाभी नहींथा, तब कौनपुरुष भारतखण्डके असंख्यग्रन्थन में हजारोंवाक्यनको प्रक्षिप्तकरसक्ताथा ॥

दृष्टान्त सुनिये—जैसे एक मनुस्मृतिग्रन्थ भारतखण्डमें लाखोंथे उनलाखों मनुस्मृतिग्रन्थनमें एकश्लोककोभी कोई पुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता था क्योंकि—एकनगरमेंभी जिन २ विद्वानोंके गृहमें मनुस्मृतिग्रन्थथे उनमें एकविद्वानभी अपने अनुकूल विश्वस्तपुरुषसेंबिना अन्यकिसीको ग्रन्थ देता नहीं, ऐसे यदि किसीपुरुषको जो विद्वानपुरुष ग्रन्थ देवेभी तोफिर वोपुरुष उसग्रन्थमें कोईश्लोक प्रक्षिप्तकर देवे तो उसप्रक्षेपकपुरुषको सोविद्वानपुरुष क्या कुछ नहींकहता अर्थात् उसका तिरस्कार नहींकर्ता, फिर उसप्रक्षिप्त श्लोकको सोविद्वानपुरुष अपनेग्रन्थसें निकाल नहींडालता, तथा उसनगरके मनुस्मृतिग्रन्थोंवाले सर्वविद्वान अपना२ग्रन्थदेकर प्रक्षिप्तश्लोकको लिखवाते ही जातेथे, ऐसे कभीनहींहोता, हेमित्र ऐसे कबीनहींहोसक्ता ॥

एवंयदि एकनगरके सर्वमनुस्मृति ग्रन्थनमें कोईपुरुष किसीश्लोकको प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता तो वो प्रक्षेपकपुरुष समग्रभारतवर्षके लाखोंमनुस्मृतिग्रन्थन में एकश्लोकको प्रक्षिप्त कैसेकरसक्ताहै, यदि भारतखण्डके लाखोंमनुस्मृति ग्रन्थनमें एकश्लोककोभी कोईपुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता तो मनुस्मृतिके उन लाखोंग्रन्थनमें पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक अनेकश्लोकों को प्रक्षिप्त कौन करसक्ताथा ॥

हेमित्र – इसप्रकार जैसेभारतखण्डके समग्र एक मनुस्मृतिग्रन्थनमें कोईपुरुष किसीश्लोकको प्रक्षिप्त नहीं करसक्ता तो भारतवर्षके वेदस्मृतिसूत्रा-

दिक असंख्य पुस्तकोंमें कौनपुरुष किसी वाक्यको प्रक्षिप्तकरसक्ताथा, अतः उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

३—यदि आप कहेंकि—इतिहास पुराणादिकोंमें प्रक्षिप्तश्लोकभी प्रक्षिप्तअध्यायभी देखने सुननेमें आतेहैं तो वोठीकहै परन्तु उक्तप्रकारसें दूसरोंके ग्रन्थमें तो कोईपुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता और जोकोई धर्मानभिज्ञ-पुरुष अपनेग्रन्थमें किसीश्लोकको अथवा अध्यायको लिखडाले तो टीकाकार सूचनकर देतेहैं कि—यिहश्लोक प्रक्षिप्तहै, यिहअध्याय प्रक्षिप्तहै, फिर उस प्रक्षिप्तश्लोकको अध्यायको संख्यामें नहींल्याते, अतःयदि इतिहासपुराणा-दिकोंमें मांसविधायकवाक्य प्रक्षिप्तहोते तो उनके टीकाकार अवश्यंबोधनकर्ते परन्तु उनके टीकाकारोंने तो पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्त तो नहींलिखाहै किंतु उन वाक्यनका पशुबलिप्रदान और मांसभक्षणही अर्थलिखाहै अतः इतिहासपुराणोंमेंभी पशुबलिदानके व मांस भक्षणके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

४—हेभ्रातृजन पहिलेभी ऐसाकोईसमय नहींहुआ कि जिससमय शैव वैष्णव शाक्त जैनआदिकमतोंमें किसीएकही मतके विद्वान्थे समग्रभारतवर्ष में उसएकही मतका प्रचारथा, ऐसाकोईसमय न हुआहै, नाहींहोसक्ताहै किंतु केई नगरोंमें शैवमतके वा शाक्तमतके विद्वान् बहुतहुए अन्य मतके विद्वान् थोड़ेहुए, होरकेईनगरोंमें जैनमतके विद्वान् बहुतहुए अन्यमतोंके थोड़ेहुए, ऐसीही व्यवस्था पहिलेहुईहै ऐसीही दशा अब है—ऐसीदशामें अन्यमतके विद्वान्पुरुषोंके विद्यमान होते वेदस्मृति आदिक धर्मपुस्तकोंमें कौनपुरुष किसी वाक्यको प्रक्षिप्त करसक्ताहै ॥ यदि कोईपुरुष अपनेपुस्तकमें किसीवाक्यको अध्यायको प्रक्षिप्त करदेवे तोफिर जब उसको अन्य विद्वान् देखेहै तब सो विद्वान् पुरुष कदापि उसप्रक्षिप्तवाक्यको सहन नहीं करसक्ता किंतु उसप्रक्षिप्तको अवश्यबोधन करदेताहै—

जैसे वाल्मीकीयरामायणकी रामायणतिलक टीकामें षष्ठेकाण्डके २३वें सर्गसे अनन्तर बोधनकराहै देखिये ॥

इतउत्तरंपञ्चसर्गाःप्रक्षिप्ताबोध्याः॥

अर्थ—इससे अनन्तर पांचसर्ग प्रक्षिप्तजानने ॥—ऐसे पांच सर्गोंको प्रक्षिप्तबोधनकरके ग्रन्थके सर्गोंकी संख्यामें इनपांच सर्गोंको मिलाया नहीं अतः ग्रन्थसे पृथक् बोधनकरेहैं, इसीप्रकार इतिहासपुराणोंमें जहांजहां कोई श्लोक वा अध्याय प्रक्षिप्तहोवे तो वहां टीकाकार अवश्यसूचनकर देतेहैं परंतु इतिहासपुराणोंमेंभी जो पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक अनेक २ श्लोकहैं उनको प्राचीनटीकाकारोंनेभी प्रक्षिप्तबोधन नहींकराहै अतः इतिहास पुराणोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त कहना नवीन समाजीभाइओंका असत्यहीहै ॥

५—यदि तुम कहो कि-किसीदेशमें किसीने कोईवाक्य प्रक्षिप्तकर दिया, अन्यकिसीदेशमें औरकिसीने कोई वाक्य प्रक्षिप्त करडाला, इसप्रकार बहुतवाक्य प्रक्षिप्त होगए तो यिह आपका कथनभी समीचीननहीं क्योंकि जिनोंने प्रक्षिप्तकरेहैं उनोंने कईवाक्य निकालभी डालेहोंगे यदि ऐसेहोता तो एकएकग्रन्थके नानाप्रकारके विलक्षण २ पाठ होजाते और देशदेश में तो बहुत पाठोंका भेद होजाता जैसे मनुस्मृति का पंचनददेशमें विलक्षण, गौड़देशमें विलक्षण, द्रविडदेशमें विलक्षण, मरुस्थलदेश में, विलक्षण, बहुत क्या एकएकनगरमें विलक्षण २ पाठ होजाना चाहियेथा परंतु ऐसे तो हुआनहीं क्योंकि देखो—कलकत्ता मुंबई पूनाऽऽदिकों के छापाखानोंमें जोग्रन्थपहिले छापतेहैं उसग्रन्थकी कई प्रतिएं कईदेशोंसे मगाकर छापतेहैं, उनप्रतिओंमें जहां कुछ पाठभेद होवे तो सूचन करदेतेहैं, ऐसे प्रामाणिक कलकत्ता मुंबई प्रयाग पूना करांची लखनऊ देहली लाहौर आदिकोंके—छापाखानोंमें छपेहुए गृह्यसूत्र श्रौतसूत्र मनुस्मृतिआदिक

धर्मपुस्तकोंमें ऐसा विलक्षण२पाठ नहींहै कि कलकत्तामें छपेमनुस्मृतिग्रन्थ में पशुबलिप्रदानके विधायक श्लोकहैं और मुंबइमें छपेमनुस्मृतिग्रन्थमें सो श्लोक नहींहैं, लाहोरमें छपे मनुस्मृतिपुस्तकमें मांस भक्षणकेविधायक श्लोक हैं और लखनऊमें छपेमनुस्मृतिग्रन्थमें सोश्लोक नहींहैं, ऐसाविलक्षण २ पाठहैनहीं हुआनहीं-ऐसेही समग्रभारतखण्डमें तथा यूरप आदिकोंमेंभीसर्व वेदग्रन्थोंका श्रौतसूत्रगृह्यसूत्रग्रन्थोंका स्मृतिपुस्तकोंका 'सदृशही' एकजैसाही पाठहै इसहेतुसेंभी वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थन में पशुवालिविधायक मांसभक्षण विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहैं ॥

६—स्वामीदयानन्दजीके देहान्तसें पीछे छपाए संस्कार विधिग्रन्थमें भी संन्यासप्रकरणमें तैत्तिरीयआरण्यकके प्रबलप्रमाणसें संन्यासीका यज्ञरूप कर वर्णनकराहै वहांभी जो संन्यासीमेंक्रोधहै वह पशुकहाहै यहांनिर्णय करिये कि-वेदोंनें यज्ञमें पशुबलिप्रदानका विधान कराहुआहै तबी तो संन्यासीरूपयज्ञमें मारणेयोग्यक्रोधको पशुरूप वर्णनकराहै तो आप क्यों हठसें उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहतेहो वा अर्थ बदलतेहो। और ऊंहांसंस्कार विधिग्रन्थनमें जो "मलवत् छोड़ने योग्यहै" ऐसे अर्थ लिखाहै सोभीमूलसें विरुद्ध लिखने कर असत्यहीहै क्योंकि मूलतैत्तिरीय आरण्यकमें क्रोध पशुरूप कहाहै वहां क्रोध मलरूप नहींकहाहै ॥

७—यदि पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक वाक्य वेदसूत्र-स्मृतिओंमें प्रक्षिप्तहोते तो जैनमतवाले जैनी भाई वेदस्मृतिआदिकोंको त्यागकर पृथक क्यों होजाते, अर्थयिह (जैनमतभी अतिबहुतकालसें प्रचलितहै,) ऐसे जैनमतके पुरातनविद्वानोंने भी अपनेग्रन्थनमें कहींयिह तो नहीं कहाहै कि-वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसविधायक वाक्य प्रक्षिप्तहैं यद्यपि जैनमतवाले वेदन को पौरुषेय मानतेहैं तथापि वेदसूत्रस्मृतिओंमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहीं

कहते किंतु उनवाक्यनको वेदसूत्रस्मृतिओंकेही वाक्य मानतेहुए वेदमतको छोड़दिया, इसहेतुसेंभी पशुबलिप्रदानके मांसभक्षणके विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्त कहना नवीनसमाजीभाईओंका असत्यहीहै ॥

———— ——

८—यदि वेदनमें सूत्रग्रन्थोंमें पशुबलिप्रदानादिकोंके विधायकवाक्य प्रक्षिप्तहोते वा उनका कुछहोरहीअर्थ होता तो वैष्णवोंके आदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामीजी शारीरकके अ०३॥पाद१॥सूत्र२५वेंके श्रीभाष्यमें अग्नीषोमीयआदिपशुके मारणको स्वर्गलोककी प्राप्तिका हेतु क्यों लिखते, अहिंसारूप कैसे मानसक्तेथे ॥

अर्थयिह—वोश्रीभाष्य तो प्रमाणांक ५६ में लिखूंगा वहां देख लीजियेगा, उसश्रीभाष्यमें श्रीरामानुज स्वामीजी स्पष्ट लिखतेहैं कि—अग्नीषोमीयआदिपशुका मारणा स्वर्गप्राप्तिका हेतुहै अतः वोहिंसा नहींहै किंतु वोरक्षाहै जैसे चिकित्साके गुणजाननेवालेपुरुष तच्च अल्पदुखकारीभी चिकित्सकको रक्षकही कहतेहैं अर पूजतेहैं ॥

अग्नि और सोमदेवतानिमित्त जो अजपशुका मारणा वेदमें कहाहै उस 'अजका' बकराका नाम अग्नीषोमीय पशुहै हेभ्रातृजन—यहां विचार कीजिये कि—वैष्णवग्रन्थनमें तो कोईभीपुरुष किसीवाक्यको प्रक्षिप्त न कर सक्ताथा अर नांही प्रक्षिप्त करसक्ताहै क्योंकि—जबसें श्रीमहानुभाव रामानुज स्वामीजीसें वैष्णवसंप्रदाय प्रचलितहुआहै तबसें वो वैष्णव मतवाले उत्तर२ अधिकबलको प्राप्तहैं अद्यावधि दृढबलवान्हैं अतः उससंप्रदायके आदि आचार्य्य श्रीरामानुज स्वामीकृतग्रन्थमें तो वाक्यके प्रक्षेपकी मूढजनोंकोभी संभावना नहींहोसक्ती, उसरामानुजस्वामीने वेदप्रमाणदेकर वेदविहितहिंसाको स्वर्गप्राप्तिका हेतु मानीहै अतः 'अहिंसा रूप' मानीहै इस्सें उनवाक्यनको

प्रक्षिप्त कहना नवीनसमाजीभाईओंका असत्यहीहै ॥

९–श्रीपण्डित चतुर्वेदी गिरिधरशर्माजीनेभीस्मृतिविरोधपरिहारग्रन्थमें स्पष्टलिखाहै देखिये पृ० २५–यह कौन प्रतिज्ञा करसक्ताहै कि–यज्ञोंमें (पशुहिंसा) व मांसभक्षण श्रुतिविहित नहींहै। यदि ऐसाहीहोता तो जैनबौद्धआदिसंप्रदाय सनातनआर्य्यधर्मसे पृथक्ही क्यों होते हां आज कहींके नव्यसमाजी व कोई २ वैष्णवभी किसीकी देखादेखी विना अपनेधर्म समझे चाहे यह कहनेका साहसकरे कि वेद में पशुहिंसा नहींहै परन्तु वैष्णवोंके आदि आचार्य्य भगवान् श्रीरामानुजस्वामी अशुद्धमितिचेन्नशब्दात् ।३।१।२५।सूत्रके भाष्य में स्पष्ट वेदमें पशुहिंसा स्वीकारकर्तेहैं ॥ श्रीपण्डित चतुर्वेदी गिरिधरशर्माजीके ऐसेस्पष्टलेखसेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना समाजीभाईयोंका असत्यहीहै ॥

१०—अपनेबनाए, आपछपवाए सत्यार्थप्रकाशके बहुतजगेंजो स्वामी दयानन्दजीने वेदानुसारी मांसके विधान लिखेहैं वो केवल सत्यार्थप्रकाश मेंही नहींलिखे किन्तु अपनेबनाए अपनेछपवाएहुए प्रथमावृत्ति संस्कार विधिग्रंथमेंभी ११वें पृष्ठपर गर्भाधानसंस्कारविधिमें बृहदारण्यकउपनिषद मन्त्रके व्याख्यानमें स्वामीदयानन्दजीने मन्त्रवेदोंके पढानेवाले अर्थात् अति

श्रेष्ठपुत्रकी उत्पत्तिलिये मांसखानेका विधानालिखाहै वो स्वामीजीका लेख तो प्रमाणांक १८६में लिखुंगा वहांसे देखलेना–हेभ्रातृजन इस उपनिषदमन्त्रको स्वामीजीने प्रक्षिप्त नहींलिखाहै किन्तु इसमंत्रका मांसभक्षणहीअर्थ लिखा है अतः स्वामीदयानन्दजीसे विरुद्धकहना समाजीभाइओंका समीचीननहीं अर्थात् असत्यहीहै ॥

११—बृहदारण्यकउपनिषद्की टीकामें डी० ए० वी० कालिजके संस्कृतप्रोफेसर श्रीपं० राजारामजीनेंभी अथय इच्छेत् इत्यादिकइसमंत्रका अर्थ ऐसालिखाहै–प्र० २६—और जो चाहे कि–मेरे पुत्र पं०प्रख्यात सभामें जानेवाला,,सबकी भलाईके कामोंमें सम्मिलितहोनेवाला,, जिसको लोग सुननाचाहतेहैं ऐसीवाणीका बोलनेवाला प्रसिद्धवक्ता उत्पन्नहो चारोंवेदोंको जाने और पूरी-आयु भोगे तो वे दोनों दम्पती, मांसौदन पकाकर घीडालकर खाएं तो वे ऐसीसन्तान उत्पन्नकरनेको समर्थहोंगे ॥

हेभ्रातः--यदि मांसभक्षणके विधायक वाक्य प्रक्षिप्तहोते तो पण्डितराजाराम-जी अवश्यंबाधनकर्ते परन्तु प० राजारामजीने इसमंत्रको प्रक्षिप्त तो नहींलिखा किंतु इस मंत्रके अर्थमें मांसभक्षणका विधानही लिखाहै इससेंभी मांसभक्ष-णके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्त कहना (समाजीओंका) असत्यहै ॥

१२—केवलबृहदारण्यकके मंत्रपरहीनहीं किंतु पास्करगृह्यसूत्रादिकोंके हिन्दी भाष्य में भी पं० राजारामजीने सूत्रोंकेअनुसारी मांसभक्षणके बहुत विधान लिखेहैं उस डी०ए०वी० कालिजके संस्कृत प्रोफेसर पं० राजाराम-जीसें विरुद्धकथन केईसमाजीभाईयोंका असत्यहीहै

१३ बहुतलिखनेसें क्याहै जब समाजीभाईयोंने अपने आचार्यस्वामी दयानन्दजीके रचितग्रंथके पाठको तोड़फोड़देनेमें पाठका बदलदेनेमें संकोच नहींकरा तो होग्रंथनके वाक्यनकोप्रक्षिप्त कहदेना वा उनका पाठ तोड़ फोड़ देना, पाठबदलदेना, उनसमाजीभाइयोंके आगे क्या बड़ीबातहै, यदि आपपूछेंकि- ऐसेकिससमाजीनें कराहै, तोहेभ्रात: यद्यपि समाजीजनभी मेरे भ्रातृजनहीहैं वो प्राय: पढे लिखेहैं अत: मेरेप्रियभ्राताहैं तथापि सर्व धर्मोंकामूल सत्यहै, सर्वसुखोंका मूल धर्महै अत: सत्यधर्माभिलाषसें सत्यअर्थका निर्णयकरके सत्यअर्थका प्रकटकरना श्रेष्ठविद्वानोंका मुख्यधर्महै इसलिये सुभ्रातृभावसे कुछक लिखताहूं देखिये

प्रथमावृत्तिसंस्कारविधिग्रन्थके ११वें पृष्ठपर जो स्वामीदयानन्दजीने बृहदारण्यकउपनिषदका अथयइच्छेत्,, इत्यादिक मन्त्रलिखाहै उसमें **"मांसौदनम्"** ऐसापाठहै स्वामीदयानन्दजीनेंभी ऐसाहीपाठ लिखाहै फिर स्वामीजीने उसकाअर्थभी मांसही लिखाहै

उपनिषद्पुस्तकोंमेंभी **"मांसौदनम्"** ऐसाही पाठ है शांकर भाष्य में भी 'मांसौदनम्' ऐसा पाठ लिखकर मांसयुक्तभात अर्थकराहै।

बृहदारण्यकउपनिषदके मिताक्षराटीकामेंभी **'मांसौदनम्"** ऐसाहीपाठहै मांसयुक्तभातही अर्थ लिखा है॥

डी० ए० वी० कालिजके संस्कृत प्रोफेसर पं० राजारामजीनेभी **"मांसौदनम्"** ऐसाहीपाठलिखाहै मांसौदनही अर्थलिखाहै—

ऐसेही औरभाषाटीकाओंमें तथा संस्कृतटीकाओं में **मांसौदनम्** ऐसाहीपाठहै इनसबनोंमें विरुद्ध अर्थात् भाष्यकारों से टीकाकारोंसे विरुद्ध तथा पं० राजारामजीसे और अपने आचार्यस्वामी दयानन्दजीसेभी विरुद्ध शिवशंकरशर्मासमाजीभाईने अब पाठ बदलादिया अर्थयिह **"मांसौदनम्** इसकीजगेमें माषौदनं लिखडाला इस्से सबधर्मोंके मूल सत्यधर्मकी अपेक्षा नहीं रखी किन्तु अपनेरायकोही धर्म समझा ॥

खेदहै कि - उपनिषद्ग्रन्थमें अबतक किसीने ऐसे नहींकराथा बहुत क्या जैनीभाईओंको नास्तिककहतेहैं उनजैनीविद्वानोंनेभी वेदादिकों को छोडदिया परंतु पाठको नहींबदला अब समाजीभ्राताओंने ऐसाअसद व्यवहारभी करदिखलाया—

सत्य है कि—**पूर्णः पूर्णं जगत्पश्ये त्कामुकः कामुकं जगत्॥ आर्तोऽप्यार्तिमयं विश्वं लुब्धो लुब्धंस्वचित्तवत्॥** अर्थात पूर्णपुरुष को जगत पूर्ण भास्ता है, कामुक पुरुषको जगत् कामुक भासेहै, दुःखीपुरुषको समग्रजगत् दुःखी प्रतीत होता है, लोभी को जगत् लोभीही दीखे है, भावयिह जैसा अपनाचित्त होता है वैसाही सब जगत् भास्ता है, इसीसे समाजीभाई प्रक्षिप्त प्रक्षिप्त पुकारते रहते हैं, और आप उपनिषद्ग्रन्थोंके पुरातन पुस्तकोंके क्या अपने स्वामीजी के पाठों को भी बदल देनेमें तोड-फोड देने में कुछभी संकोच नहीं करते ।

हे भ्रातृजन—शिवशंकरशर्माने जैसा अयोग्य कार्य किया वो किया परंतु यदि सत्य में श्रद्धा व रुचि होती तो समाजीभाई शिवशंकर-

शर्मासें पूछते कि–महाराजजी जब पुरातन भाष्यकारों ने तथा टीकाकारों नें अर भाषाटीकाकारोंने और डी॰ ए॰ वी॰ कालिजके संस्कृत अध्यापक पं॰ राजारामजी ने तथा हमारे परमआचार्य्य स्वामी दयानन्द जीनें भी "मांसौदनम्" ऐसापाठ लिखाहै तो इनसबके लेखों का निरादर करके तुमने उपनिषद् के पाठ को क्युं बदलादिया ।

हे पाठकभ्रातः––इससमय में तो, हम सत्यका ग्रहण और असत्य का त्याग कर्ते हैं" यिह कथनमात्र किया जाता हैं क्योंकि उपनिषद्पाठ के बदलदेनेकर असत्यका ग्रहण और सत्यका त्याग कर दिखलाया है ॥

समाजी भाईओं ने महाभारतप्रभृति इतिहासादिकों के भी पाठ तोडफोड डाले हैं अर्थात् 'अपनीसम्मति को, अपने रायकोही धर्म समझा है, युक्तयोगी परमेश्वरके और युञ्जानयोगी महर्षिओं के वाक्यन में विश्वास नहीं रखा ॥

हेमित्र–शुभाशुभ कर्मो में जन्य जो चित्त में पुण्यपापहैं वो अतीन्द्रियपदार्थ हैं, अपने रायसें अतीन्द्रियपदार्थो का विज्ञान नहीं हो सक्ता किंतु उनके विज्ञान में योगयुक्त पुरुषोंकृत वेदशास्त्रही कारण हैं, यिह देखो प्रमाणांक ५७ में श्रीशंकराचार्य्यों ने भी स्पष्ट कहाहै ॥

तात्पर्य्य यिह है कि–दृढसमाधि करही अतीन्द्रिय पदार्थों का प्रत्यक्ष होता है, युक्तयोगी ईश्वरने और युञ्जान योगीमहर्षिओं नें प्रत्यक्ष देखकर जिस जिस कर्म से पुण्य वा पाप कहा है, उन वाक्यनसेंही अयोगीजनोंको पुण्य पाप का निश्चय होसक्ता है उन वाक्यन का अनादर करके जो पुरुष अपने रायमेंही धर्माधर्म को कथन कर्ते हैं वो पुरुष योग्यबुद्धिमानोंमें धर्मवेत्ता नहीं कहलायसक्के, व उनका कथन भी माननीय नहीं होसक्ता ॥

द्वितीयावृत्तिछपे सत्यार्थप्रकाश के समुल्लास ८ पृष्ठ २२३ में [मनुष्याऋषयश्चये ततोमनुष्याअजायन्त, यह यजुर्वेद में लिखा है] ऐसापाठ है ॥ पंचमावृत्ति के छपे सत्यार्थप्रकाश में भी द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश के सदृशही पाठ है, बारवींवार के सत्यार्थप्रकाश में (मनुष्याऋषयश्चये ततोमनुष्या अजायन्त ॥ यह यजुर्वेद और उसके ब्राह्मण में लिखा है] ऐसा पाठ करदिया ॥

और प्रथमावृत्ति के सत्यार्थप्रकाश में वहां यिह पाठ स्वामीदयानन्द जी ने लिखाही नहीं ॥

हे भ्रातः-अब कहो कि इन तीनों में स्वामीजी का लिखा हुआ कौनसा पाठ मानना चाहिये इनमें ! यदि सम्यक विचार करें तो प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश ही स्वामी दयानन्दजी का रचाहुआ है (क्योंकि यिह मंत्र यजुर्वेद में हैही नहीं अतः वो स्वामीजी ने आप छपवाए प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश में यिह मंत्र लिखाही नहीं फिर (स्वामीजी के देहान्त से एक वर्ष पीछे समाजी भाइयों ने जो द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश छपवाया है उसमें किसी समाजी भाईने यह मनोघड़ित संस्कृतपाठ लिखकर 'यह यजुर्वेद में लिखा है,) ऐसालिखडाला फिर बहुत वर्ष ऐसाही पाठ छपाते रहे पुनः देखभाल पूछ होने पर जब यिहमंत्र यजुर्वेदमें नहींमिला तो वो संस्कृतपाठ लिखकर (यह यजुर्वेद और उसकेब्राह्मणमें लिखाहै) ऐसे पाठको अधिककरडाला परन्तु उससमाजी-भाईने यिह तो नहींलिखा कि-यिहमंत्र यजुर्वेदके कौनसे अध्यायमेंहै कितनी संख्याका मंत्रहै क्योंकि यजुर्वेदमें यिहमंत्र हैही नहीं तो वो कैसे

लिखसक्राथा इस्सें उसनें (और उसके ब्राह्मणमें) इतना होरअधिकपाठ लिखकर रौलेमें रौला करडाला ॥

द्वितीयावृत्तिछपे सत्यार्थप्रकाशके समु०३। पृष्ठ४० वींमें—[प्राणायामादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः ॥ यह योगशास्त्रका सूत्रहै] ऐसापाठहै पंचमावृत्तिआदिक सत्यार्थप्रकाशोंमें । [योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः—योगसाधनपाद सू० २८] ऐसापाठ करडाला परन्तु--- अर्थ वो प्राणायामहीरखा॥—

और प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाशमें यिहसूत्र स्वामीजीने लिखाहीनहीं—

हे भ्रातृजन--अब कहियेकि- इनमें स्वामीजीकालिखा कौनसापाठहै; यदि वास्तवनिर्णयकरें तो प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाशही दयानन्दस्वामीका रचितहै क्योंकि --द्वितीयावृत्तिके सत्यार्थप्रकाशमें जो सूत्रलिखाहै सो मनोघड्तिहै और सूत्रका अर्थभी असंगतही लिखाहुआहै क्योंकि इससूत्रमें प्राणायाममात्रका फल नहींकहाहै और नांही प्राणायाममात्रके करणेसें आत्माका ज्ञान होसक्राहै ॥ —

योगदर्शनके साधनपाद ४९वें सूत्रमें प्राणायामका साधारणलक्षण कहकर ५०वें और ५१वें इनदोसूत्रोंमें चारप्रकारके प्राणायामका निरूपण कराहै फिर —

ततःक्षीयतेप्रकाशावरणम् ॥ पाद२॥५२॥

धारणासुचयोग्यतामनसः ॥ २॥५३॥

अर्थ—उसप्राणायामके अभ्याससे प्रकाशरूपबुद्धिका पापरूपआवरण क्षीण होजाताहै ॥५२॥ और धारणाओंमें मनकी योग्यता होतीहै ॥ ५३ ॥ इनदो सूत्रोंमें प्राणायामकाफल कहाहै और तुमारे लिखेसूत्रमें तो समाधिपर्य्यन्त अष्टअंगोंके अनुष्ठानकर क्रमरसे अविद्याऽदिपंचक्लेशरूप और कर्मारूप अशुद्धिके क्षयहुए विवेकख्यातिपर्य्यन्त ज्ञानका प्रकाश होताहै; यिहअर्थहै ॥

हेपाठक—आत्माके प्रत्यक्षज्ञानरूप जो विवेकख्यातिहै सो संप्रज्ञात योगावस्थामें योगरूपहीहोतीहै क्योंकि-आत्मा अतीन्द्रियपदार्थहै अतीन्द्रिय वस्तुका प्रत्यक्ष समाधिविना नहींहोसक्ताः यिह आत्मिक्षणप्रमाणाकेग्रथमें युक्तिप्रमाणोंसे निश्चयहोचुकाहैः ऐसी योगरूपविवेकख्याति धारणाध्यान समाधिकी परिपक्वताविना केवलप्राणायामकरही नहींहोसक्ती क्योंकि— संप्रज्ञातयोगके धारणाऽदिसाधनत्रय अन्तरंगहै और यमआदिकपंचसाधन तो बहिरंगहै यिह पातंजलदर्शनके - त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः- ॥पाद३॥७॥इससूत्रमेंभी प्रतिपादनकरांहै ॥

सूत्रका अर्थ यमानियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार, इन पहिलेपांच बहिरंगोंसे धारणाऽदित्रय संप्रज्ञातयोगके अन्तरंगहै

हेमित्र-जो परम्परासे साधन हो वो बहिरंग कहलाताहै —

विदितहो कि पापदुर्वासनाऽदिक जो चित्तका मलहै और स्थूलता स्पन्दादिक जो प्राणोंका मलहै अर विषयोंमें अभिमुखतादिक जो इन्द्रियों का मलहै; और स्थूलताऽदिक जो शरीरका मलहै; ऐसोयिह चित्तप्राणादि-कोंके मल समाधिके प्रतिबन्धकहै ॥

चित्तप्राणादिकोंके मलरूप प्रतिबन्धकोंकी निवृत्तिद्वारा यमानियमासन प्राणायामादिक पांच संप्रज्ञातयोगके साधनहै साक्षात्साधननहीं इससे प्राणायामादिक पांचअंगोंके अनुष्ठानकर उनमलोंकी निवृत्तिहुएतें अनन्तर

धारणाध्यानसमाधिद्वाराही संप्रज्ञातयोगावस्था उदयहोतीहै तब आत्माका विवेकख्यातिरूप प्रत्यक्षज्ञानका प्रकाशहोताहै वो। प्राणायाममात्रकरही नहीं होसक्ता ॥

यदि प्राणायाममात्रकरही विवेकख्यातिपर्य्यंत ज्ञानकाप्रकाशमानोगे तो योगशास्त्रमें कथनकरे धारणाध्यानसमाधिरूप अन्तरंगत्रय व्यर्थहोगें इस्से प्राणायामकरही विवेकख्याति पर्य्यंत ज्ञानका प्रकाशलिखना असंगतहै ॥

हेभ्रातृजन—ऐसाअसंगत अर्थ व असंगतअर्थके अनुकूल मनोघड़ित सूत्र स्वामीदयानन्दजीका लिखामानना योग्यनहींहै ॥

स्वामीदयानन्दजीके बनाए स्वामीजीके छपवाए प्रथमावृत्तिसत्यार्थ-प्रकाशमें यिहसूत्र व असंगतअर्थ स्वामीजीनें लिखाभी नहींहै ॥

फिर–सन्१८८२ ईसवीमें(स्वामीजीके देहान्तसें एकवर्षपीछे सन्१८८४ में समाजीभाईओंने छपवाए द्वितीयावृत्तिके सत्यार्थप्रकाशमें मनोघड़ितसूत्र व असंगतअर्थलिखडाला,) फिर पंचमावृत्तिसमूलसत्यार्थप्रकाशमें सूत्रतो ठीककरदिया परंतु अर्थ वोही असंगतहीरहा, ऐसेपाठको अधिकन्यूनसमाजी भाईकरदियाकर्तेहैं ॥

यदि आप कहोकि—द्वितीयावृत्तिसत्यार्थप्रकाशमेंभी स्वामीजीनेंही लिखाहै, तो ऐसाअसंगतअर्थस्वामीजीकालिखा नहींहोसक्ता ॥

और प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाशके ।। बहुतप्रसंगहो निकालडालेहैं ॥

समाजीभ्राता०—वो सत्यार्थप्रकाश प्रमाण नहींहै–

ग्रन्थकर्ता०—यिहनवीनही आश्चर्य्यकथनहैकि जो स्वामीजीके परलोक गमनसें पीछे छपवायाहै वो तो प्रमाणहै और जो सत्यार्थप्रकाश आप बनाकर स्वामीदयानन्दजीने आपही छपवायाहै वो प्रमाणनहींहै, ऐसाकथन क्या हासगोचर नहींहै ॥

समाजी० स्वामीजीने पहिलेसत्यार्थप्रकाशके छपवानेसें तीनवर्षपीछे जो विज्ञापनपत्र निकालाथा उसमें लेखकशोधककी भूललिखदी तो फिर क्या -

ग्रन्थकर्ता० -स्वामीदयानन्दजीने विज्ञापनपत्रमें यिह तो नहींलिखाकि प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाश प्रमाण नहीहै तो तुम कैसे कहसक्तेहोकि—वो प्रमाण नहींहै और उसीविज्ञापनमें स्वामीजीलिखतेहैं कि- "मेरेबनाए सत्यार्थप्रकाश व संस्कार विधि" इस्सें वो सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्दजीका बनायाहै यिह उनकेलेखमेंही सिद्धहै और लेखकशोधककी भूलतो अक्षरकी पदकी पंक्तिकीहोसक्तीहै लम्बे२ बुद्धिपूर्वकप्रसंगोंकी भूल नहीं होसक्ती

और लेखकशोधककी भूलभी स्वामीदयानन्दजीने तर्पणश्राद्धमेंही लिखीहै, उससत्यार्थप्रकाशके बहुतजगोंमे जो मांसके नानाविधान लिखेहैं उनमें तो स्वामीजीने लेखकशोधककी भूल नहींलिखी इस्सें वो मांसके सर्वविधानस्वामीजीको स्वीकृतहीरहे, मन्जूरहीरहे वो मांसके अनेकप्रसंगभी समाजीभाइओंनेही निकालडालेहैं

और प्रथमावृत्तिछपे संस्कारविधिग्रन्थमेंभी जो स्वामीजीने बृहदारण्यक उपनिषदका मंत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्र मांसभक्षणके विधायक लिखे थे वो भी समाजीभाइओंने निकालडालेहैं

अब कहिये कि संस्कारविधिग्रन्थमें तो स्वामीजीने किसीकी कहीं भी भूल नहींलिखी तो संस्कारविधिग्रन्थमें वोमन्त्र और गृह्यसूत्र क्यों निकालडाले

समाजी०—वोमंत्र और गृह्यसूत्र अत्यन्तउपयोगीनहींथे

ग्रन्थकर्ता०-यिह आपका कथन समीचीननहीं क्योंकि वहां संस्कार

विधि ग्रंथके ११वें पृष्टपर जो बृहदारण्यकउपनिषद्का मन्त्र स्वामीजीने लिखाहै वोमन्त्रसबवेदोंकेजाननेवाले अतिश्रेष्ठगुणोंवाले पुत्रकी उत्पत्तिलिये मांसयुक्तभातखानेका विधानकर्ताहै, ऐसाहीउसमन्त्रका अर्थ स्वामीजीने भी लिखाहै तो वो मंत्र अत्यन्तउपयोगीक्यों नहींहै अर्थात् ऐसेअतिश्रेष्ठ पुत्रहोनेलिये यिहमन्त्र अत्यन्तउपयोगीहीहै।

और संस्कारविधिग्रंथके ४२वें पृष्टपर अन्नप्राशनसंस्कारमें जो स्वामी दयानन्दजीने आश्वलायनगृह्यसूत्रलिखाहै वोसूत्रभी "ब्रह्मतेजलिये" वेदादि विद्यामें निपुणतालिये बालकको तित्तिरके मांसखुलानेका विधानकर्ताहै तो वोसूत्र अत्यन्तउपयोगी क्योंनहीहै अर्थात पुत्रके विद्वान्होनेकेलिये भक्ष्य वस्तुका विधायकहोनेमें यिहसूत्रभी अत्यन्तउपयोगीहीहै ॥

समाजी०—पहिले सत्यार्थप्रकाशके और संस्कारविधिके मांसविषयके प्रसंग स्वामीजीनें आपही निकालडालेहैं क्योंकि हमविचारकर्तेहैं कि—

पहिले श्रीस्वामीदयानन्दजी—परमात्मा निराकारको शिवनामसे बतलायाकर्तेथे, रुद्राक्ष और भस्मभी पहनते व लगाते और दूसरोंकोभी उपदेश कर्तेथे ,यिह लेखरामके बनाए स्वामीदयानन्दजीके जीवनचरित्रमें हिस्सादूसरेके सफा ३८में स्पष्टलिखाहीहै ॥

फिरजब सत्यार्थप्रकाश बनाकर संवत् १९३२ में छपवायाथा तब वो रुद्राक्षके भस्मके ख्याल तो स्वामीजी के नहींरहे किंतु मृतपितरोंके तर्पण व श्राद्धका उससत्यार्थप्रकाशमें कईजगे दृढयुक्तिओंसे विधान कराहै अतः- तब तर्पणमें श्राद्धमें स्वामीजीका विश्वास हैहीथा, फिर तीनवर्षपीछे संवत् १९३५ में तर्पण श्राद्धका ख्यालभी स्वामीजीका बदलगया अतएव संवत १९३५ में विज्ञापनपत्र निकालाउसमें मृतपितरोंके तर्पणका श्राद्धका प्रतिषेध लिखदिया परन्तु मांसविषयक ख्याल तो संवत् १९३५ मेंभी बदला नहींथा क्योंकि-पहिले सत्यार्थप्रकाशमें अपनेलिखेहुए मांसके अनेकविधानोंमें

किसीएककाभी स्वामीजीने उसविज्ञापनपत्रमें प्रतिषेध नहींकराहै ।।

एवंहेमित्र– जैसे रुद्राक्षके भस्मके धारणका ख्याल स्वामीजीका बदल-गया फिर तर्पणका श्राद्धका ख्यालभी बदलगया ऐसेही फिर मांसविषयक ख्यालभी स्वामीजीका बदलगयाहोगा ।

ग्रन्थकर्ता० यिहकथनभी समीचीननहीं क्योंकि जो सत्यार्थप्रकाशकी भूमिका संवत १९३९ में स्वामीजीनें उदयपुरमें लिखीथी उस १९३९ संवतकी भूमिकामें भी पहिलेसत्यार्थप्रकाशमें लिखेहुए मांसके विधानों का स्वामीजीने प्रतिषेध तो नहींकराहै प्रत्युत उसभूमिकामें स्वामीजीनें लिखाहै कि— [अर्थकाभेद नहीं कियागयाहै प्रत्युत विशेष तो लिखागयाहै] यहां विचारकरिये कि— जब पहिले सत्यार्थप्रकाशमें अर्थका भेद नहींकियागया प्रत्युत विशेष लिखाग-याहै तो इसस्वामीजीके लेखमें जानाजाताहै कि संवत १९३९ पर्यन्त स्वामीजीका पहिलेलिखे मांसके विधानोंका ख्याल बदलानहींथा फिर १९४० संवतमें स्वामीजी परलोकगमन करगए यदि १९४० संवत्मेंभी स्वामीजीका ख्याल बदलजाता तो स्वामीजी विज्ञापन पत्रद्वारा अवश्यबोधन करदेते ,,—

और जब वेदब्राह्मणसूत्रउपनिषदपुस्तकोंके अनुसारी मांसके होमका, मांसके पिण्डदानका, मांसके भक्षणका विधान स्वामीदयानन्दजी लिखचुकेहैं तो एकस्वामीदयानन्दजीके ख्याल बदलनेमें वेदशास्त्रादिकोंके असंख्यवाक्य प्रक्षिप्त तो सिद्ध नहींहोसके ,,—

और जब संवत् १९३९ की भूमिकामें स्वामीजीने लिखाहै कि— पहिलेसत्यार्थप्रकाशमें अर्थका भेद नहीं कियागया प्रत्युत विशेषलिखागयाहै, तो स्वामीदयानन्दजीके इसलेखमें जानाजाताहै कि— पहिलेसत्यार्थप्रकाशके

अनेकप्रसंग समाजीभाईओंनेही निकाल कर अर्थकेभेद कर डालेहैं"

स्वामीदयानन्दजीके देहान्तसेंपीछे समाजीभाईओंनेही सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि आदिक ग्रन्थोंके पाठ तोड़फोड़ अधिक न्यून कर दिये हैं—इसीपर स्वामी ज्ञानानन्दजी ने मांसमीमांसाग्रन्थमें विस्तार सें लिखा है जिसको देखने की इच्छा हो वो मांसमीमांसाग्रन्थ में देखसक्ता है॥

१४—समाजीभ्राता०—संवत् १९३५ के विज्ञापनपत्रमें स्वामीजी लिखते हैं कि—**मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कार-विधि आदि ग्रन्थों में गृह्यसूत्रों मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुतसे लिखे हैं वे उनउन ग्रन्थों के मतोंको जतानेके लिये लिखेहैं॥**

ग्रन्थकर्ता० - हेभ्रातः –स्वामीदयानन्दजीके इसलेखसेंही तुम्हारा प्रक्षिप्तवाद खण्डित सिद्धहोताहै अर्थात् मांसभक्षणके विधायक वाक्यन को प्रक्षिप्त कहना असत्यही सिद्ध होताहै, क्योंकि— स्वामी दयानन्दजीनें संस्कारविधिग्रन्थमें मांसभक्षणका विधायक बृहदारण्यकउपनिषद्का मंत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्र लिखे हैं, और यहभी तुमारी बात मानली कि–वे उनउनग्रन्थोंके मतोंको जतानेके लिये लिखेहैं तथापि –स्वामीदयानन्दजीके इसलेखसें ही सिद्ध हुआ कि–संस्कारविधि ग्रन्थ के गर्भाधान संस्कार में जो मांस भक्षणका विधायक बृहदारण्यक उपनिषदका मंत्र लिखाहै श्रेष्ठ गर्भाधानलिये मांससहित भातका भक्षण उसका विषय है वो बृहदारण्यकउपनिषद्का मत है, और अन्नप्राशनसंस्कारमें जो मांस भक्षणके विधायक आश्वलायन गृह्यसूत्र लिखेहैं ब्रह्मतेजआदिकों लिये छमिहनेके बालको मांससें भोजन खुलाना, उन गृह्यसूत्रोंका विषयहै

वो गृह्यसूत्रोंका मतहै, यिह स्वामीजीके लेखमेंही सिद्धहुआ हेभ्रातः वो वाक्य प्रक्षिप्त सिद्ध नहीं होसके अब विचारो कि सनातनधर्म में तो वेदकाही भाग उपनिषदग्रन्थ हैं, और स्वामी दयानन्दजीके मत में ब्राह्मणभाग-उपनिषद हैं, ईशावास्यउपनिषद तो संहिताभागकी है दोनोंप्रकारसें इतिहासपुराणादिकोंते उपनिषदवाक्यगृह्यसूत्र अतिबलवान् प्रमाणहैं ॥

हेभ्रातः—जब स्वामीदयानन्दजीके लेखमें मांसभक्षणके विधायक उपनिषदवाक्यहैं गृह्यसूत्रादिकोंकेवाक्यहैं तो उपनिषदकेगृह्यसूत्रोंके अनुसारी ही मांसभक्षणकेविधायक इतिहासपुराणादिकोंके वाक्यहैं अतःअपने आचार्य्य स्वामीदयानन्दजीसें विरुद्धकहना अर्थात मांसभक्षणकेविधायक उपनिषद वाक्यको वा गृह्यसूत्रादिकोंके वाक्यनको वा तदनुसारी मांसभक्षणके विधायक इतिहासपुराणादिकोंके वाक्यनको प्रक्षिप्तकहना, दुराग्रह नहीं है तो होर क्याहै अर्थात अपनेस्वामीदयानन्दजीके लेखमें विरुद्ध कहना समाजी भाईओंका असत्यहीहै ॥

१५—हेभ्रातृजन सत्यधर्ममें आपही निर्णयकरलीजियेकि वेदोंके भाष्यनमें सायणाचार्य्यआदिकोंनेभी पशुबलीप्रदानके व मांसभक्षणके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै,और कात्यायन आश्वलायन पारस्कर गोभिल गौतमप्रभृतिमहर्षिओंनेभी श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थनमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै व उनके कर्कभाष्यादिकोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै, और मनु वसिष्ठ याज्ञवल्क्य पराशर व्यासप्रभृतिमहर्षिओंनेभी स्मृतिग्रन्थनमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, तथा मनुस्मृतिआदिकोंके कुल्लूकभट्टआदिक टीकाकारोंनेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, और सांख्यन्यायमीमांसाप्रभृतिशास्त्रोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै तथा उन शास्त्रोंके भाष्यकारभगवद्व्यास विज्ञानभिक्षु शबरस्वामी शंकराचार्य्य

रामानुजस्वामीआदिकोंनेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै ॥

प्रत्युत-सायणाचार्य्यआदिक भाष्यकारोंनेभी, सूत्रग्रन्थनके स्मृतिग्रन्थनके कर्तामहर्षिओंनेभी उनके टीकाकारोंनेभी, तथाशंकराचार्य्य रामानुजस्वामीजी नेंभी वेदसूत्रस्मृतिआदिकोंके उनवाक्यनका पशुबलिप्रदान व मांसभक्षणही अर्थलिखाहै उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै ॥

तो मनुस्मृतिकीभाषाटीकाकरणेवाले तुलसीरामस्वामीके कानोंमें क्या कोईफरिश्ता प्रक्षिप्त२ सुनागयाहै ॥

शंका-

नियुक्तस्तुयथान्यायं योमांसंनात्तिमानवः ।
सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम् ॥

मनुस्मृतिअ०५-श्लोक३५कीटीकामें तुलसीरामजी लिखतेहैं कि-"नखावे तो२१ जन्मतक पशुबने" क्या इसमेंभी मांसभक्षीवाममार्गिओंका प्रक्षेप नहींजानपड़ता-

समाधान-केवलमनुस्मृतिमेंही नहीं किंतु देखो प्रमाणांक ८२ आदिकों में व्यास वसिष्ट प्रभृतिमहर्षिओंनेभी विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष लिखेहैं तो तुलसीरामजीको इसमें क्यों असंभव प्रतीतहुआ ॥

हेभ्रातः-जब हाकमोंकी हुकमअदूलीमें और वैद्यजनोंकी आज्ञाके नहीं पालनेसें अतिदोष अतिकष्ट प्राप्तहोताहै तो युक्तयोगीपरमेश्वर युंजानयोगी महर्षिओंके रचितश्रुतिस्मृतिओंके विधिवाक्यनका उल्लंघनकरणेकर अतिदोषका अतिकष्टका होना संभवहीहै, इसअर्थमें इसमनुअ०५के३५वें श्लोक पर देखो कुल्लूकभट्टकी टीका प्र०२७-**श्राद्धे मधुपर्केच यथा शास्त्रंनियुक्तःसन्योमनुष्योमांसंनखादति समृतः सन्नेकविंशतिजन्मानिपशुर्भवति । यथाविधिनियुक्तस्त्वित्येतन्नियमातिक्रमफलविधानमिदम् ॥**

अर्थ-श्राद्धमें और मधुपर्कमें यथाशास्त्र प्रेराहुआ जो मनुष्य मांसकोनहींखाता वो मनुष्य मरकर २१जन्म पशुहोताहै -इसमें कुल्लूकभट्ट टीकाकार कहते हैं कि-जैसेशास्त्रविधिमें प्रेराहुआहै ऐसे इसनियमके उल्लङ्घनके फलका विधान यिहहै ॥

इसीअर्थमें इसमनु अ०५के ३५वें श्लोकपर देखो गोविन्दराजकी टीका प्र०२८— **श्राद्धमधुपर्कयोः शास्त्रमर्यादानतिक्रमेण नियुक्तःसन्योमनुष्योमांसंनाश्नाति सम्मृतः सन्नेकविंशतिजन्मानि पशुत्वंप्राप्नोतिइति ॥ यथाविधिनियुक्त स्त्विति एतान्नियमव्यतिक्रमफलकथनम् ॥**

अर्थ-शास्त्रकी मर्यादाको नहीं उल्लंघन करके नियमविधिमें प्रेराहुआ जो मनुष्य श्राद्धमें और मधुपर्कमें मांसको नहींखाता वो मनुष्य मरकर २१जन्म पशु बनेहैं । इसमें गोविन्दराजटीकाकार कहतेहैं कि-जैसेशास्त्रविधिमें प्रेराहुआहै ऐसे इसशास्त्रीयनियमके उल्लंघनके फलका कथनकराहै ॥

हेपाठक—देखो ३ टीकाओंमेंभी संस्कृतटीकाकारोंने नियमविधिके उल्लंघनकाही यिह अशुभ फल स्पष्टकहाहै तो तुलसीरामजी क्यों दुराग्रहकररहेहैं ॥

विचारदेखिये किन्हहुतालोंमें जैनमतानुयायिओंके व्याख्यानोंद्वारा जैनमतका हिन्दुओंमें वेममझीसे असर पड़नेकर जबसे बलिप्रदानका व विहितमांसके खानेका संकोच हुआहै तबसे वैदिकमतवाले हिन्दू नीचेसे नीचे गिरते गए यहांतककि-इनको मरी हुई कोम कहने लगे अर्थात् मरी हुई कोम बनगए ॥

तुलसीरामजीसें पूछाचाहिए कि—डी० ए० वी० कालिजके संस्कृत प्रोफेसर पं० राजारामजीने जोमांसभक्षणविषयका बृहदारण्यक उपनिषद्कामंत्र और पारस्कर गृह्यसूत्रादि लिखे हैं, उनका अर्थभी मांसभक्षणही लिखा है तो क्या राजारामजीके ग्रन्थोंमेंभी वाममार्गिओंका प्रक्षेपहै, यिह इसवर्तमान समयमें कोई कहसक्ता है स्वामीदयानन्दजीने प्रथमावृत्ति छपवाए संस्कारविधिग्रन्थमें जो उपनिषद् मंत्र और आश्वलायनगृह्यसूत्र लिखे हैं उनका अर्थभी मांस भक्षणही स्वामीजीने लिखाहै तो क्या संस्कारविधिग्रन्थमेंभी वाममार्गिओंका प्रक्षेप है, यिहतो कोई भूलकरभी नहीं कहसक्ता फिर देखो संवत् १९३५ का स्वामीदयानन्दजीका लिखा विज्ञापन पत्र प्र० २९—**मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कारविधिआदिग्रन्थोंमें गृह्यसूत्रों मनुस्मृतिआदि-पुस्तकोंके वचनबहुतसे लिखेहैं वे उन२ग्रन्थोंके मतोंको जनानेकेलिये लिखेहैं ॥**

हेपाठक—यहां विचारकरोकि प्रथम तो स्वामीदयानन्दजीने संस्कारविधिग्रन्थमें मांसभक्षणका विधायक बृहदारण्यकउपनिषदका मंत्र और गृह्यसूत्र लिखेहैं उनदोनोंके अर्थभी मांसभक्षणही लिखाहै तो स्वामीजीके इसलेखसेंही यिह सिद्धहोताहै कि—उपनिषद् काही मंत्र मांसभक्षणका विधायकहै और गृह्यसूत्रभी मांसभक्षणके विधायकहैं, स्वामीजीके इसलेखसेंभी यदि तुलसीरामजीका भ्रमदूर नहींहुआ तो फिर तीन वर्षपीछे स्वामीदयानन्दजीनेंजो एकविज्ञापनपत्र निकाला उस संवत्१९३५के विज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने तुलसीरामजीका तथा हारसमाजी मेरेसब भ्राताओंका भ्रम दूर-

करणेवाला यिहलेख लिखाहै कि—मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कार-विधिआदिग्रन्थोंमें गृह्यसूत्रआदिकोंके वचन उनउनग्रन्थोंके मतोंको जताने-केलिये लिखेहैं

हेभ्रातृजन—जबस्वामीदयानन्दजी गृह्यसूत्रादि ग्रन्थोंका मत लिखतेहैं तो तुलसीरामजीका वारंवार प्रक्षिप्तलिखना अपनेआचार्य्यस्वामीदयानन्दजी से विरुद्ध तथा मनुस्मृतिके संस्कृतटीकाकारोंसे विरुद्ध दुराग्रहहीहै ॥

हेपाठक-उनवाक्यनको प्रक्षिप्त कहसकेहैं जिनको पुरातन भाष्यकार टीकाकारोंने प्रक्षिप्तकहाहो उक्तमहर्षिओंने उनवाक्यनको प्रक्षिप्तनहींकहाहै किन्तु उनवाक्यनके अनुसार विहितमांसके भक्षणका विधानकराहै तो उनसर्वपुरातन भाष्यकार सूत्रकार स्मृतिकार शास्त्रकार टीकाकारप्रभृतिमह-र्षिओंसे विरुद्ध नवीनसमाजीजनोंका प्रक्षिप्तवाद असत्यहीहै ॥

१६—जब जब किसीने अत्याचार कराहै व करियेहैं तबतब उस २ अत्याचारके बोधकग्रन्थ रचकर विद्वज्जनोंने प्रचलित करेहैं और करियेहैं, जैसे रावणआदिराक्षसोंके और कंसदुर्योधनआदिकोंके अत्याचारोंके बोधक संस्कृतइतिहासग्रन्थ विद्वज्जनोंके रचित प्रचलितहैं, और राजोंके पातशाहोंके अत्याचारोंविषयकभी अंगरेजीमें फारसीमें, हिन्दीभाषाऽऽदि-कोंमें असंख्य ,तारीखें, इतिहासग्रन्थ रचेगएहैं ॥

यदि—वेदोंके संहिताभागोंमें, ब्राह्मणभागोंमें, उपनिषद्भागोंमें उनके भाष्यपुस्तकोंमें, श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थोंमें, स्मृतिओंमें, उनकी टीकाओंमें, इत्यादिक असंख्यग्रन्थनमें असंख्यवाक्य प्रक्षिप्त करेजातेतो ऐसेमहाऽत्याचारोंके बोधकभी अनेकग्रन्थ रचकर विद्वज्जन अवश्यंप्रचलित कर्ते क्योंकि—असंख्यपुस्तकोंमें असंख्यवाक्यनको दश वीस मनुष्य तो प्रक्षिप्त करहीनहींसके अतः यिह कोइ थोडीबात नहींहै परंतु पहिले

किसीभीविद्वान्नें इसविषयका कोईभीग्रन्थ नहींबनाया, और पुरातनको ईभीआचार्य्य उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखगया तो अब तुलसीरामादि नवीनसमाजीभ्राताओंका प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

१७—यदि आप पूछेंकि—पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायकवाक्य यदि प्रक्षिप्त नहींहैं तो बहुतवैदिकमतवालोंकी पशुबलि-प्रदानमें व विहितमांसके भक्षणमें प्रवृत्ति दूर क्योंहोगई तो

उत्तर—जैनीसाधुओंके व्याख्यानोंकर जैनमतका असर हिन्दुओंमें बेसमझीसें होनेकर उसमेंप्रवृत्ति दूरहोगई ।

जैनीभाई आपभी स्पष्टकहतेहैं देखो भीमज्ञानत्रिंशिकाग्रन्थकी भूमिकाके ७ वें पृष्ठकी ७वींपंक्तिमें प्र० ३०—

ब्राह्मणोंके धर्मको वेदमार्गको तथा यज्ञमें होतीहिंसाको खण्डनका इसीधर्मने लगायाहै ॥ कुलहिंदुस्तानमेंसें पशुयज्ञ निकलगयाहै फ़क्क-छेक दक्षिणमें जहां बौध या जैनोंकी छाया पड़नहींसकीहै वहांही कायमहै ॥

जैनीभाईओंके इत्यादिकलेखोंमें निश्चितहोताहै कि—पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक वाक्य प्रक्षिप्तनहींहैं किंतु हिंदुओंमें बेसमझीसें जैनमतका असर होनेकर उनकाप्रचार नहींरहा अतः उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

हेप्रियपाठक—यिह प्रक्षिप्तहै यिह अप्रमाणहै, हारेहुएपुरुषोंकी यिह दोडंगोरीहैं—क्योंकि विचारिये कि—अतीन्द्रियपदार्थविषयक पूर्ण-

योगजज्ञानवाले जो सूत्रस्मृतिग्रन्थोंके कर्तामहर्षिहैं उनके वाक्यनको योगजज्ञानसे शून्यपुरुष अप्रमाण कैसे कहसक्तेहैं और जिनवाक्यनको पुराननकिसीभाष्यकार टीकाकारने प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, फिर स्वामीदयानन्दजीभी जिनवाक्यनको संस्कारविधिग्रन्थमें लिखचुकेहैं उनवाक्यनको अब प्रक्षिप्त कौनकहसक्ताहै ॥

भावयिह—इससमय अपनीसम्मतिको अपने रायको धर्म समझतेहैं उक्तमहर्षिओंके वाक्यनकी अपेक्षा नहींरखते अतः जब अर्थके निर्णयमें प्रमाणदिखाएजातेहैं तब उनमें निरुद्धहुए थकितहुए मेरेभ्राता समाजीओंको या अप्रमाणरूप या प्रक्षिप्तरूप ढंगोंगीका आश्रय लेनापड़ताहै वास्तवमें पशुबलिदानके व मांसभक्षणके विधायक आर्षवाक्य न अप्रमाणहैं, नांही प्रक्षिप्तहैं किंतु आस्तिकपुरुषोंसे माननीय प्रबलप्रमाणहैं ॥

अतः श्रुतिस्मृतिओंमें विहितहोनेकर विहितमांसके भक्षणसे कुछदोष नहींहोसक्ता ।

पूर्वपक्षी०—कहीं धर्मशास्त्रनमें मांसभक्षणको निर्दोषभीकहाहै ॥

आस्तिक०—धर्मशास्त्रनमें बहुतजगें कहाहैकि-देवतापितरआदिकोंको पूजकर समर्पणकरके मांसभक्षणमें कोईदोषनहींहोसक्ता ।

ऐसेमांसभक्षणमें निर्दोषताके प्रतिपादकप्रमाणोंको मैं अब दिखलाताहूं

मनुस्मृति अ०३१—**क्रीत्वास्वयंवाऽप्युत्पाद्य परोपकृतमेववा ॥ देवान्पितॄंश्चार्चयित्वाखादन्मांसंनदुष्यति ॥** अ० ५ ॥ ३२ ॥

इसश्लोकपर मेधातिथिका मनुभाष्य अ० ३२ — **मृगपक्षि**

मांसविषयमिदंशास्त्रम्। रुरुपृषतादीनां शशकपिञ्जलादीनांमांसंदेवानांपितॄणांचार्चनंकृत्वा खादतोनदोषः ॥ अर्थ—मृगपक्षीआदिकोंके मांसको मोललेकर वा आप मारकर वा किसीभ्राताामित्रआदिकने दियाहो, ऐसेतीनप्रकारके मांसको देवतापितरोंको पूजकर खानेवालेपुरुषको दोष नहींहोता ॥

मनुस्मृति प्र० ३३—चराणामन्नमचरा दंष्ट्रिणामप्यदंष्ट्रिणः ॥ अहस्ताश्चसहस्तानां शूराणांचैवभीरवः ॥ अ० ५ ॥ २९ ॥

मनुस्मृति प्र० ३४—नात्तादुष्यत्यदन्नाद्यान् प्राणिनोऽहन्यहन्यपि ॥ धात्रैवसृष्टाह्याद्याश्च प्राणिनोऽत्तारएवच ॥ ५ ॥ ३० ॥

इसश्लोकपर सर्वज्ञनारायणकीटीका प्र० ३५—अहन्यहन्याहारबुद्ध्याऽदन्नपि न दुष्यति न पापं लभते॥

इसीमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकीटीका प्र० ॥ ३६ ॥

भक्षयिता भक्षणार्हान्प्राणिनः प्रत्यहमपि भक्षयन्नदोषंप्राप्नोति, यस्माद्विधात्रैव भक्षणार्हा भक्षयितारश्च निर्मिताइति

हरिणगौआदि चरजीवोंका अचर तृणपत्रादिक अन्नहै और व्याघ्रादिक दंष्ट्रावालेजीवोंका दंष्ट्रारहित हरिणादिकजीवअन्नहै, हस्तवालेमनुष्यनका हस्तरहित मत्स्यआदिक अन्नहै, सिंहप्रभृति शूरोंका हस्तीआदिकभीरुजीव अन्नहै ॥२९॥

भक्षणयोग्यजीवोंको हररोज खाताहुआ मनुष्य दोषवाला नहींहोता क्योंकि— विधातानेंही भक्ष्यजीव और उनके भक्षकजीव रचेहैं ॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० ३७— **देवान्पितृन्समभ्यर्च्य खादन्मांसंनदोषभाक्** ॥अ०१॥ १७८ अर्थ देवतोंको पितरोंको पूजकर मांससेंहोमकर मांसखानेवाला मनुष्य दोषभागी नहींहोता

भीष्मपितामहका वाक्य महाभारत प्र० ३८—**विधिनावेददृष्टेन तद्भुक्त्वेहनदुष्यति ॥ यज्ञार्थे पशवःसृष्टा इत्यपिश्रूयतेश्रुतिः** ॥ प०१३ ॥ अ० ११६ ॥ १४ ॥ अर्थ वेदमें देखेविधिसें उसमांसको खाकर मनुष्य दोषवाला नहींहोता, क्योंकि यज्ञोंकेलिये पशुओंको रचाहै, यिहभी वेदवाक्य सुननेमें आताहै

महाभाररत प्र० ३९ **अत्रापिविधिरुक्तश्च मुनिभिर्मांसभक्षणे ॥ देवतानांपितॄणांच भुंक्तेदत्वापियःसदा ॥ यथाविधियथाश्राद्धं नप्रदुष्यतिभक्षणात्** पर्व३ ॥ अ० २०८ ॥ १४ ॥ अर्थ यहां मांसभक्षणमें मुनिओंने विधिकहाहै कि-विधिसें देवतोंको और श्राद्धमें पितरोंको जोपुरुष सदादेकर्के मांसको खाताहै वोपुरुष मांसभक्षणसें दोषवाला नहींहोता ॥-

मार्कण्डेयपुराण प्र०४० **पितृदेवादिशेषंच श्राद्धेब्राह्मणकाम्यया ॥ प्रोक्षितंचौषधार्थंच खादन्मांसंनदुष्यति** ॥ अ० ३२ ॥ ४ ॥ अर्थ—पितृकर्मश्राद्धमें अवशिष्टमांसको, और देवता अतिथिआदिकोंको अर्पणकर्के अवशिष्टमांसको और ब्राह्मणोंकी कामनासें सिद्धकरे मांसको, अर प्रोक्षितमांसकोअर्थात् यज्ञलिये वेदमंत्रनसें संस्कृत मांसको, और औषधलिये मांसको खानेवाला पुरुष दोषवाला नहींहोता

भविष्यपुराणप्र०४१—**प्राणात्ययेप्रोक्षितंचश्राद्धेचद्विजकाम्यया । पितृन्देवांश्चार्पयित्वा भुञ्जन्मांसंन दोषभाक्** ॥ब्रह्मपर्व१ अ०१८६॥२९॥

अर्थ प्राणान्तसमय अर्थात् औषधलिये मांसको, और प्रोक्षितमांसको श्राद्धमेंमांसको अर ब्राह्मणोंकी कामनासें सिद्धकरे मांसको, और देवतोंको पितरोंको अर्पणकर्के मांसको खानेवालापुरुष दोषभागी नहींहोता ॥

विदितहो कि—वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसविषयकेइत्यादिकनानावाक्यनको देखकर जैनीभाईजी अपनेग्रंथमें । **ऐसेनिर्दयानिर्लज्जोंको ऋषिओंमेंबतलायाहै ॥ धिगहैऐसेसतयुगको और धिगहैजिनबतलायाहै** ॥ इत्यादिक कुत्सितशब्द परमपूज्य महर्षिओंमें लिखेहैं सो ऐसेशब्दोंका लिखना उसलेखकजैनीभाईकी "अयोग्यताहै" नालायकीहै क्योंकि—निवृत्तिमार्गवाले और प्रवृत्तिमार्गवाले सर्वमनुष्यमात्रप्रति मांसके त्यागका उपदेश एकजैनमतमेंहीहै, होरकिसी

मतमें ऐसा उपदेश नहींहै तो हेभ्रातः होरसवमतोंसे विरुद्धहोनेकर युक्तिहीन एकस्वमतमें दुराग्रहकर अन्यमतोंके आचार्य्योंको निकृष्टशब्दकहने क्या अयोग्यता नहींहै ॥

हेपाठक-आश्चर्य्यहै कि-सर्वमतोंके आचार्य्योंको और 'लायक' योग्य बुद्धिमानोंको जैनीभाई कुछ जानतेहीनहीं॥

हेभ्रातः-मनुष्यमात्रको मांसका त्याग उचितहै अथवा अधिकारभेदसें किसीको मांसका त्याग किसीको मांसका खाना उचितहै,इसअर्थका निर्णय तो अब अवश्यंकराहीचाहिये, जैनीभाइओंसें प्रमाणोंद्वारा वो निर्णय नहीं होसक्ता क्योंकि उनके और हमारे माननीयप्रमाण भिन्नरहैं अतः जैनी भ्राताओंसें विचार तो युक्तिओंद्वारा होसक्ताहै इस्में वो निर्णय तृतीययुक्ति प्रकाशमें कराजावेगा ॥

पूर्वपक्षी०—यदि मांसखानेसें दोष न होतातो पहिलेदेवतापितर अतिथिआदिकोंको समर्पणकरनेकी क्या आवश्यकताथी अर्थात् देवताऽदिकोंको समर्पणकरे विनाही मांसको खालेते ॥

आस्तिक०-देवताअतिथिआदिकोंको वोही पदार्थ समर्पणकराजाताहै जो निर्दोषहो शास्त्रविहितहो, नो कि निषिद्धभी । और धर्मशास्त्रोंमें मांस कीन्यांई देवताअतिथिआदिकोंके उद्देशसेंविना अन्नकेभी पकानेसें व खानेसें महापापकहाहै देखिये-

भगवद्गीता-**भुञ्जतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकारणात् ॥अ०३॥१३॥—**

मनुस्मृति-**अघंसकेवलंभुंक्ते यःपचत्यात्मकारणात् अ०३॥११८॥**

इसमनुवाक्यपर कुल्लूकभट्टकी टीका—**यस्त्वात्मार्थमेवान्नं पक्त्वाभुङ्क्ते देवादीभ्योनददाति स पापहेतुत्वा त्पापमेवकेवलंभुङ्क्ते नान्नम् । तथाचश्रुतिः— केवलाघोभवतिकेवलादी ॥**

अर्थ-जोपुरुष अपनेवास्तेही अन्नपकाकर खाताहै देवताअतिथिआदि-कोंको नहींदेता वो पापका हेतुहोनेकर वोपापीपुरुष अन्न नहींखाता किंतु केवलपापकोहीखाताहै अर्थात् वो अन्नखाना पापहीहै,

वैसेही श्रुति कहतीहै कि- केवलआपही खानेवाला केवलपापी होताहै ॥

इत्यादिक प्रबलप्रमाण जैसे देवताऽदिकोंके उद्देशसें बिना अन्नके पकानेमे खानेमे पाप कहतेहैं, वैसेही देवताऽऽदिकोंके उद्देशसे बिना मांसके पकाने खानेसे पाप कहते हैं अतः विहितअन्न व विहितमांस तुल्य ही है ॥

विदित हो कि-वेदोंकी प्रत्यचनिन्दाका ही नाम नास्तिकता नहींहै किन्तु वेदपाठका, परिवर्तन, बदल देना वा दुराग्रहसें विपरीत अर्थ करना, वा वेदवाक्यनके सत्यअर्थका दुराग्रहकर नहीं मानना, इत्यादिकभी नास्तिकताके लचणहैं क्योंकि यह सबलचण वेदोंमें अश्रद्धाकर होते हैं, यदि वेदोंको ईश्वररचित मानें तो श्रद्धाहो फिर यह सबलचण नहीं हो सकते ॥

अतः वेदमतसें विपरीतनिश्चयवालेका नाम नास्तिक है, इससें हेभ्रातजन नास्तिकनाम किसीनिन्दाका बोधक नहींहै अतः नास्तिक नामके श्रवणसें जैनीभाईआदिकोंको चोभ करना योग्य नहीं ।—

पूर्वपची० यद्यपि उक्त बहुतप्रमाणोंमें मांसको घृततैलशाकआदिकों-

कीन्यांई शुद्धपवित्र कहाहै, और विनामांगे कोईदे तो उसमांसके वापसहटानेका निषेधकराहै. उसके ग्रहणकरणेका विधानकराहै. और देवतापितरआदि-कोंको अर्पणकर्के मांसखानेसें कोईदोष नहींहोता,, यिहभी स्पष्टबोधनकराहै तथापि अहिंसाप्रदीपके द्वितीयभागमेंलिखाहै कि—वेद स्वतःप्रमाणहैं इस-लिये हम मांसत्यागके विषयमें प्रमाणराज वेदकेही पहिले प्रमाण दिखा कर पीछे औरसब शास्त्रादिकोंकेभी प्रमाण देंगे ॥—

श्रीवेदभगवान्—इषेत्वा १॥ऊर्जेत्वा २॥वायवस्थ ३॥ देवोवःसविता प्रापयतु श्रेष्ठतमायकर्मण आ प्यायध्व मघ्न्या इन्द्राय भागम्प्रजावती रनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यातबह्वीः ४॥यजमानस्य पशून्पाहि ५॥यजुरकाण्डिका १ ॥ अर्थ पूर्वप्रकरणमें अर्थयिह है कि हेगौओ सबका प्रेरक ज्योतिःस्वरूप परमेश्वर तुमको यज्ञस्वरूप श्रेष्ठकर्मकेलिये बहुतघासवाले वनमें पहुंचावे जिसमें तुम अपनी इच्छा के अनुसार घासोंको खाकर हेनमारणेयोग्य गौओ, इन्द्रके वास्तेहविबनानेके लिये उस हविके कारण, दुग्धको बढाओ, ॥ जीवितसन्तानवाली, कृमिपीडाआदि क्षुद्ररोगरहित, तुमको चोरपुरुष चुरानेको मत समर्थहो, चण्डाल वा व्याघ्रादिकजीव मारनेको मत समर्थ हो, इस गौओंकेस्वामी यजमानके पास निरन्तर रहने वाली बहुतसी हो ॥

आस्तिक० १ हे मित्र, इषेत्वा, इत्यादिक पहिले तीनमंत्रनका अर्थ तुमने क्यों नहीं लिखा । यदि कहो कि इनमंत्रनका अर्थ मांसके प्रसंग

में उपयोगी नहींथा इसलिये नहींलिखा तो यहां इनमंत्रोंके लिखने का भी कुछ उपयोग नहीं था ॥

२-यिह चतुर्थमंत्रभी प्रकरणमें उपयोगी नहींहै क्योंकि-तुमारेलिखे अर्थानुसारभी इसचतुर्थमंत्रमें मांसका कोईप्रसंग नहींहै, मांसकाबोधककोई-पदभी नहींहै मांसका त्यागभी नहींकहाहै अतः यिहचतुर्थमंत्रभी प्रकरणमें उपयोगीनहींहै ॥ —

पूर्वपक्षी०-**यजमानस्य पशून्पाहि** ॥ यह यजुर्वेदके प्रथमाध्यायकी १ कण्डिकाका पंचममंत्रहै, भाव-हेदेवते यजमानके पशुओं-की व्याघ्रचोरादिदुष्टजीवोंसे रक्षाकर

आस्तिक०—हेमित्र इसपंचममंत्रका शाखादेवताहै अतः हेपलाशशा-खादेवते, ऐसेलिखना योग्यथा—

यहां प्रसंग यिहहै कि —इषेत्वा इसमंत्रसे जो पलाशशाखा गौओंसे वछडोंको अलगकरनेकेलिये काटीथी वो कार्य्यकरके उंचेस्थानपर उसशाखा-को इसपंचममंत्रसे स्थापनकर्तेहैं —

इसपंचममंत्रमेंभी पलाशशाखादेवतासे यजमानके गौवत्सआदिपशुओं-की व्याघ्रचोरादिकोंसे रक्षाकी प्रार्थनाकीहै ॥

हेपाठक—इसपंचममंत्रमेंभी मांसका वाचककोईपद नहींहै, मांसका प्रसंगभी नहींहै, मांसभक्षणका त्यागभी नहींकहाहै, अतः यिह पंचममंत्रभी प्रकरणमें अनुपयोगीहीहै ॥

पूर्वपक्षी-मांसखानेके केवल त्यागसे गोरक्षा और गोवृद्धि होसक्ती है इसलिये मांसका त्याग करा चाहिये ॥

आस्तिक०-रामलक्ष्मणआदिक अवतार और वेदवेताब्राह्मण तथा नल

अम्बरीष युधिष्ठिरप्रभृति महाराजे मांसकोखाते खुलातेरहेहैं, वो गौओंकी रक्षावृद्धिभी कर्तेरहेहैं, अतः मांसके त्यागमें गौओंकी रक्षावृद्धि नहींहोसक्ती किंतु गौओंकी सेवाकर पालन पोषणकर गोरक्षावृद्धि होसक्तीहै ॥

पूर्वपक्षी० नीचेलिखे मंत्रमें परमेश्वरसें प्रार्थना की जातीहै कि-यह गौ यजमानको पूर्णआयु देनेवालीहो यथा—**माविश्वायुः** ॥यजु. क. ४॥१॥ यज्ञमें आचार्य्य गोदोहनेवालेसें कहताहै कि-हेगोदोहक जिसगौको तुमने दुहाहै वह गौ विश्वायुः इसनामसें कहनेयोग्यहै तात्पर्य्य कि-मैं ईश्वरसें प्रार्थना कर्ताहुं कि-वहगौ तुझे पूर्णआयु देनेवालीहो ॥

आस्तिक०-हेमित्र-यदि यज्ञमें ईश्वरसें आचार्य्यनें ऐसी प्रार्थनाकी तो हछाकरा परन्तु अजआदिकोंके मांसभक्षणके प्रसंगमें तो कुछभीसिद्ध नहींहोता, आश्चर्य्य है कि प्रसंगमें अनुपयोगी ऐसेऐसेप्रमाण लिखतेहुए तुमको लज्जाभी नहींआती ॥

पूर्वपक्षी ० **माविश्वकर्मा** ॥ यजु.क.४॥२॥

हे गौदोहक जिस गौको तुमने दुहा है वहगौ संसारकी स्थितिका कारण है क्योंकि-यज्ञों में हविका साधन होकर सब की कामनाओंको सिद्ध करती है वह हमारे इस यजमानकी कामनाको सिद्ध करे ॥

आस्तिक० --इसमंत्रका तो-हेगौदोहक हविलिये घृतदुग्धका साधनहोनेकर वो गौ संपूर्ण कर्मकाण्डको सम्पादन करने वाली है, यह अर्थहै होर अधिकअर्थ तो तुमारी कल्पना है वोभी स्वीकार कर्ता हूं तथापि मांसके प्रकरणमें यह वाक्यभी उपयोगी नहींहै क्योंकि-इस मंत्रमें मांसका कोई प्रसंगभी नहीहै मांसका बोधक कोई पदभी नहीं है, मांसभक्षणका त्यागभी नहीं कहाहै अतः मांसके प्रसंगमें यह

मंत्रभी अनुपयोगीहीहै, हे भ्रातः क्या विद्वान्पुरुष प्रकरणमें ऐसे अनुपयोगी वाक्यका प्रमाण देते हैं ॥

पूर्वपक्षी—गौ हविका कारण होकर जगतको स्थिर रखतीहै, इसमें और भी, श्रुतिप्रमाणहै जैसे—**अग्ने वैधूमोजायते धूमादभ्रमभ्राद्वृष्टिः** यज्ञकीअग्निसें धूम पैदाहोकर मेघबनताहै, फिर मेघसें वर्षा होती है, इसीपर श्रीकृष्णभगवान्की व मनुजी की सम्मतिएं हैं ॥

आस्तिक०हेमित्र, यज्ञलिये दुग्धका कारण गौहै परंतु श्रुति गीता मनुजीके इन वाक्यनमेंभी मांसका कोई प्रसंग नहींहै, मांस का वाचक कोई पद भी नहीं है, मांसभक्षणका त्याग भी नहीं लिखा है अतः मांस के भक्ष्याभक्ष्यके प्रकरणमें यह वाक्य भी अकिंचित्करहैं अर्थात् कुछ सिद्ध नहीं कर सकते इससें प्रकरणमें अनुपयोगी ही हैं ॥

पूर्वपक्षी०—यदि कृष्णजीके वचनपर विश्वास रखते हो, संसार को स्थिर रखना चाहते हो, तो मांस छोडकर श्रीकृष्णजीकीन्याई गौओंकी सेवा करो ॥

आस्तिक०—हे भ्रातः—यद्यपि श्रीकृष्णजी जबतक नन्दगोप के गृह में गोपालरूपधारेरहे, तबतक वच्छेओं को गौओं को चराते रहे हैं तथापि श्री कृष्णजीका ऐसा वाक्य तो कोईएकभी तुमने नहीं लिखा कि जिसमें श्री कृष्णजीने कहाहो कि, मांसको मत खावो प्रत्युत ब्रजमें नन्दगोपआदिकोंको स्वयं श्रीकृष्णजीने प्रेरणाकीथी कि तुम मेध्यपशुको मारकर गोवर्द्धनकी पूजा करो, ऐसी कृष्णजीकी प्रेरणासें ब्रजवासी नन्दआदि गोपालजनोनेभी वैसेही कराथा, तब क्या संसार स्थिर नहीं रहाथा, देखो—

विष्णुपुराणप्र०४२—तस्माद्गोवर्द्धनःशैलो भवद्भिर्विविधार्हणैः। अर्च्यतांपूज्यतांमेध्यंपशुंहत्वाविधानतः

अंश ५॥ अ० १० ॥ ३८ ॥

अर्थ—जिसहेतुसें वैश्यजनगोपालोंके गौ और पर्वतही पूज्यहैं उससें तुम नन्दप्रभृतिगोपालोंने विधिसें मेध्यपशुको मारकर नानापुष्पादिकोंसें गोवर्द्धनपर्वतकी सेवापूजाकरणीयोग्यहै ॥

विष्णुपुराणप्र०४३—तथाचकृतवन्तस्ते गिरियज्ञं-व्रजौकसः। दधिपायसमांसाद्यैर्ददुःशैलबलिंततः॥ द्विजांश्चभोजयामासुःशतशोऽथसहस्रशः ॥ अं०५॥अ०१०॥४४॥

अर्थ —फिर ऐसीश्रीकृष्णजीकी प्रेरणासें ब्रजवासी नन्दआदिक गोपभी वैसेही गिरियज्ञकोकर्तेभए, दधिदुग्धमांसादिकोंसें गोवर्द्धनपर्वतप्रति बलिकोदेतेभए, और सैंकड़ेहजारोंब्राह्मणोंको भोजनकरवातेभए ॥

हेपाठक-देखो विष्णुपुराणमें साक्षात्कृष्णजीने श्रीमुखसें गौओंकी रक्षालिये वृद्धिलिये पशुबलिप्रदानमें नन्दआदिकगोपजनोंकोप्रेरणाकी, फिर नन्दप्रभृतिगोपजनोंनभी वैसेहीकृष्णजीके कथनानुसार मांसादिकोंसें बलिप्रदानकिया और ब्राह्मणोंकोखुलाया ॥

हेमित्र-श्रीकृष्णजीके ऐसे पशुबलिप्रदानकेविधायक स्पष्टवाक्यनको छिपाकर विपरीतअर्थके लिखनेसें तुम क्या आस्तिक कहलाय सक्केहो ॥

हेपाठक-गोपजनोंनेदी उसबलिको पर्वतके देवतारूपहुए कृष्णजी

खातेभीभए, यिहभी वहांही कहाहै देखो विष्णुपुराणअं०४४—

गिरिमूर्द्धनिकृष्णोऽपि शैलोऽहमितिमूर्त्ति-
मान् । बुभुजेऽन्नंबहुविधं गोपपर्याहृतंद्विज ॥
अं०५॥अ०१०॥४६॥ तेनैवकृष्णोरूपेण गोपैः-
सहगिरेः शिरः ।अधिरुह्यार्चयामास द्वितीया-
मात्मनस्तनुम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—गोवर्धनपर्वतके शिखरमें "मैंपर्वतहूं" ऐसेसत्यसंकल्पसें पर्वतके देवमूर्त्तिहुए कृष्णजी गोपजनोंने प्राप्तकरे बहुतप्रकारके उसअन्नको खाते-भए ॥४६॥

और पहिले उसीकृष्णरूपमें गोपोंकेसाथ गोवर्धनपर्वतके शिखरपर चढ़कर उक्तबलिप्रदानसें पूजा करतेभए और दूसरीपर्वतकी देवतामूर्त्तिसें उसको खाते भए ॥

हेमित्र=यदि कृष्णचन्द्रमें तुमारीश्रद्धाहै, व तुम आस्तिकहुएचाहतेहो तो इसकृष्णजीके उपदेशको देखकर श्रुतिस्मृतिओंके अनुसारीवर्तावकरो ॥

पूर्वपक्षी० नीचेलिखे मंत्रोंसेंबढ़कर पवित्र और सत्यभूतोंकी दयाका उपदेश औरक्याहोसक्ताहै देखो—

भेषजमसि भेषजङ्गवेऽश्वायपुरुषायभेषजम् ।
सुखम्मेषायमेष्यै ॥यजु०अ०३॥५९॥

अर्थ—हेरुद्र आपऔषधकेसमान सबउपद्रवोंके दूरकरणेवालेहो इस कारण हमारे गौ घोड़े पुत्रपौत्रादिकपरिवारके रोगदूरकरनेलिये औषधिदो

'मेष' छतरा मेषोंके शान्तिपूर्वकजीवनकेलिए अपनेसुखदायक स्वरूपका प्रकाशकरें ॥

यथासमसद्द्विपदेचतुष्पदे॥यजु०अ०१६॥४८॥

अर्थ हेरुद्र हमारे द्विपदजीवोंका कल्याणहो, हमारे चतुष्पद गौआदि पशुओंको कल्याणहो ॥

आस्तिक०—इनमंत्रोंमें रुद्रपरमात्मासे प्रार्थनाकीहै कि–हेरुद्रपरमात्मन् आप औषधकेसमान रोगोंकेनिवर्तक अपनेसुखस्वरूपका प्रकाशकरो जिससें हमारे द्विपद पुत्रआदिकोंके चतुष्पद गौआदिपशुओंके सुखरहे ॥

हेमित्र–एसीप्रार्थनातो पुत्रआदिपरिवारवाले और पशुओंवाले सर्व मनुष्यनको करणीयोग्यहीहै क्योंकि–द्विपदपरिवारके, चतुष्पद गौअश्व आदिकोंके और मेषआदिक क्रीडामृगोंके, नीरोगता सुख अपेक्षितहीहै परन्तु–इसमेंभी अजशशहरिणादिकोंके मांसभक्षणकेप्रसंगमेंतो कुछसिद्ध नहींहोता क्योंकि–अजशशहरिणादिकजो भक्ष्यहैं सोभीबालवृद्धरोगी अज आदिकभक्ष्यनहींहैं किन्तु नीरोग युवा मारेहुएही भक्ष्यहैं, यिह चरकसंहितादिकग्रन्थोंमें प्रसिद्धहीहै ॥

देखो–शहरोंमें जो खानेलिये भेडबकराआदिक मारेजातेहैं उनकी नीरोगताकी परीक्षा प्रथमडाकटरकर्ताहै उस्सेंपीछेवो मारेजातेहैं, परीक्षामें जो भेडबकरा बीमार मालूमहोवेतो उसको डाकटरसाहिब हुकमन मारनेसें रोकदेताहै, इस्सें अजआदिक भक्ष्यजीवोंकीभी नीरोगता रक्षा अवश्यंअपक्षितहीहै उसीसें मुसलमानभाईभी कहाकर्तेहैं कि–

"मालजानकी खैर माल जानकी खैर" ॥

हेभ्रातः–तुमारेलिखे इनमंत्रोंमेंभी न तो कोई मांसका प्रसंगहै, और मांसकाबोधक कोईपदभी नहींहै, मांसकेभक्षणका त्यागभी नहींकहाहै,अतः

मांसकेप्रसंगमें यिह मंत्रभी अनुपयोगीहीहैं। हेमित्र ऐसेऐसे अनुपयोगी वाक्य लिखकर तुम वेदनके सिद्धान्तको बदलतेहो

पूर्वपक्षी ०—**माहिंस्यात्सर्वाभूतानि** ॥ श्रुतिः किसीभी-जीवकी हिंसा नहीं करणीचाहिये ॥

आस्तिक०—१—हे मित्र यिह सामान्यविधिवाक्यहै इसीको उत्सर्गविधि कहतेहैं, और **अग्नीषोमीयं पशुमालभेत**,, इत्यादिक विशेषविधिवाक्य हैं, इनहीको अपवादविधि कहतेहैं, यिहशारीरकके अ०२। पाद १॥ सूत्र २५ वेंके भाष्यमें श्रीशंकराचार्य्यस्वामीजीभी स्पष्टलिखेतेहैं देखो शाङ्करभाष्य प्र०४५—**ननु नहिंस्यात्सर्वाभूतानि इतिशास्त्रमेव भूतविषयांहिंसा मधर्मइ त्यवग-मयति वाढम् उत्सर्गस्तुस अयंचापवादः अग-नीषोमीयं पशुमालभेतइति ॥ उत्सर्गापवाद योश्च व्यवस्थितविषयत्वम्** ॥ अर्थ—शंका यिहहै कि-"सर्वजीवोंकी हिंसा नकरे" यिहशास्त्रही जीवोंकी हिंसाको अधर्मरूप बोध-नकर्ताहै, इसका उत्तर भाष्यकार कहतेहैं कि—यद्यपि ऐसेहै तथापि सो उत्सर्गविधिहै और **अग्नीषोमीयं पशुमालभेत** ॥ अर्थ—अग्नि और सोमदेवतानिमित्तक अजपशुको मारे, यिह अपवादविधिहै इनदोनोप्रकारके विधिवाक्यनका भिन्नभिन्न सामान्य और विशेष विषयहो-ताहै अर्थात् उत्सर्गविधिका सामान्य और अपवादविधिका विशेषविषय-होताहै अतः इनविधिवाक्यनका परस्पर विरोध नहींहै इस्सें इनदोनों विधि-वाक्यनका परस्पर बाध्यबाधकभावभी नहींहै ॥

जैसे दृष्टान्त मनुस्मृति—**मत्स्यादःसर्वमांसाद स्त-स्मान्मत्स्यान्विवर्जयेत् ॥ अ० ५ ॥१५॥**

अर्थ—मत्स्यके खानेवाला सर्वमांसखानेवाला कहियेहै अतः मत्स्यन को नखाए, यिहउत्सर्गविधिहै, और मनुस्मृति अ० ४६—**पाठीनरोहि तावाद्यौ नियुक्तौहव्यकव्ययोः ॥ राजीवान्सिंह-तुण्डांश्च सशल्कांश्चैवसर्वशः ॥ अ० ५ ॥१६॥**

अर्थ—पाठीन रोहित मत्स्य भक्ष्यहैं वो देवकर्म पितृकर्ममेंभी विहितहैं, राजीव सिंहतुण्ड और सर्वप्रकारके सशल्क मत्स्यभी भक्ष्यहैं ॥ यिह अपवादविधिहै ॥

हेपाठक—अपवादविधिके विशेषविषयसें भिन्न शेषसामान्यविषयमें उत्सर्गविधि वर्तेहै, यिह सार्वत्रिकनियमहै ॥

जैसे दृष्टान्तमें मनुस्मृतिका१६वांश्लोकरूप अपवादविधिका विषय जो पाठीन रोहित राजीव सिंहतुण्ड सशल्क,, यिहपांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यहैं उनसेंभिन्न शेषमत्स्यनके त्यागमेंमनुका१५वांअर्द्धश्लोकरूप सामान्यविधि वर्तेहैं ॥

दार्ष्टान्त—**अग्नीषोमीयं पशुमालभेत,**

इत्यादिकअपवादविधिवाक्यनके विशेषविषय अजशशहरिणादिकोंसें भिन्न सर्वसामान्यजीवोंकी हिंसाकेत्यागमें **नहिंस्यात्सर्वाभूतानि,—**

यिहउत्सर्गविधि वर्तेहै

ऐसा उत्सर्गविधिका सामान्यजीवरूप विषय भिन्नहै और—

'अग्निषोमीयं पशुमालभेत' इत्यादिक अपवादविधिओंका अजशशहरिणादिरूप विशेषविषय भिन्नहैं ॥

ऐसे अपवादविधिओंसें विहित अजशशहरिणादिक विशेषजीवोंके बलिप्रदान और मांसभक्षणके प्रसंगमें उत्सर्गविधिका प्रमाणदेना अनुपयोगीहीहै॥

२—हेभ्रातः-ऐसावाक्य सामवेदकी छान्दोग्यउपनिषदमेंहै वोदेखो प्र० ४७—अहिंसन्सर्वाभूतान्य न्यत्रतीर्थेभ्यः ॥

इसकी टीका—तीर्थनाम शास्त्रानुज्ञाविषय स्ततो ऽन्यत्रेत्यर्थः सर्वाश्रमिणां चैतत्समानम् ॥

अर्थ—तीर्थोंमें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसा न करे अर्थ यिह यहां शास्त्र की आज्ञाके विषयका नाम तीर्थहै ऐसे 'तीर्थोंसें' शास्त्रकीआज्ञाके विषयोंसें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसा न करे, यिहउपदेश सर्वआश्रमीओंको समानहै ॥

तात्पर्य यिहहै कि—संन्यासीओंके भिक्षाटनादिकोंसें जो क्षुद्रजीवोंकी हिंसाहोतीहै, और गृहस्थजनोंके जो देवयज्ञआदिकोंमें हिंसाहोतीहै वो शास्त्रोंसें विहितहै अर्थात् वेदशास्त्रोंकी आज्ञाकाविषयहैं वो यहांउपनिषद्में तीर्थपदका अर्थहै उनसें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसानकरे, यिह उपनिषद् वाक्यका अर्थहै, यही—माहिंस्यात्सर्वाभूतानि, इसउत्सर्ग विधिवाक्यका अर्थहै ॥

पूर्वपक्ष०—औरदेखोवेदमें गौओंकी कितनी स्तुति और प्रार्थना

कीगईहै जिनकेलिए आपके हृदयमेंकुछभी प्रीतिनहींहै तथथा- यूयंमे गावो मेदयथा कृशंचिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् । भद्रंगृहंकृणुथा भद्रवाचोवृहद्वोवयउच्यते-सभासु ऋ, ६ ॥ २८ ॥ ६ ॥

हेगौओ तुम दुबलेकोभी हृष्ट पुष्ट बना देती हो, हे भली बानी वालिओ मेरे घर को भद्र, कल्याणयुक्त, बना दो हमारी सभाओं में तुम्हारी बड़ीशक्ति कहीजातीहै ॥

आस्तिक०-गौओंकी स्तुति और प्रार्थनाकीहै तो हच्छाकियाहै परंतु इसमंत्रमेंभी यह तो नहींकहा है कि-अजशशहरिणआदिकोंका बलिप्रदान मतकरो.अजआदिकोंके मांसको मतखाओ अतः मांसभक्षणके प्रसंगमें यिहमंत्रभी अनुपयोगीहीहै बहुत क्या लिखुं हेअसत्यप्रतिज्ञ तुमने प्रतिज्ञा कीथी कि-हम मांसत्यागके विषयमें प्रमाणराज वेदकेही पहिले प्रमाण दिखाकरपीछे और सबशास्त्रादिकोंकेभी प्रमाणदेंगे, सो वेदका तुम एकभी प्रमाण नहींलिखसके ॥

और जो लिखेहैं वो प्रकरणमें अनुपयोगीहीहैं क्योंकि उनवाक्यनमें मांसका वाचकपदभीनहींहै, मांसकाप्रसंगभी नहींहै, मांसकेभक्षणका निषेधभी नहींकराहै ॥

प्रश्न-यदि पूर्वपक्षीने वेदोंमें ऐसाकोईवाक्य नहींदेखा अतःनहींलिख सका तो प्रमाणराजवेदके प्रमाणदेनेकी प्रतिज्ञा क्योंकरदी ॥

उत्तर-नास्तिकतासें प्रतिज्ञाकरदी अर्थयिह जिनकेचित्तमें यिहविश्वास है कि, वेद ईश्वरसें प्रकटहुएहैं अतःपरमप्रमाणहैं, वेदनसें विहितअर्थ हमारे

लिये परमपथ्यहै, उनकीआस्तिकसंज्ञाहै, वो आस्तिकजन वेदोंके वास्तव अर्थको छिपाकर अन्यथाअर्थ लिखनहींसक्के, और जो विश्वासके अभावसें वेदनकेअर्थको बदलतेहैं वो आस्तिक नहींकहलायसक्के क्योंकि—वो वेदोंसें विरुद्धनिश्चयवालेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—आपनेयदि पशुबलिप्रदानमें और मांसभक्षणमें कोईवेद वाक्य देखाहै तो दिखाना चाहिये ॥

आस्तिक०—हेमित्र—ऐसे वेदसूत्रस्मृतिओंके वाक्य बहुतहीहैं उनमें केईकवाक्य दिखलावुंगा परंतु अबी धैर्य्यकरो पहिले तुमारे वाक्यनका निर्णय तो करलवुं ॥

पूर्वपक्षी०—अहिंसापर भगवान्पतञ्जलिजीकी सम्मति **अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्य्यापरिग्रहायमाः** यो.पा, २॥ ३०॥अर्थ मनमें व वाणिसे व शरीरसे किसीभीजीवको पीडादेनी हिंसा कहातीहै और सबप्रकारसें सबसमयमें किसीभीजीवकेसाथ द्रोहनकरणा अहिंसाहोतीहै ॥

आस्तिक०—इत्यादिक तुमारेलिखे पातंञ्जलसूत्रभी इसप्रकरणमें अनुपयोगीहीहैं क्यों अनुपयोगीहै सुनिये ॥

१, सम्पूर्णपातञ्जलशास्त्र योगाभ्यासरूप निवृत्तिमार्गसें संबन्ध रखता है निवृत्तिमार्गवाले योगाभ्यासीको मांस खाना उचित नहीं है" यिहपूर्व लिखचुकाहुं अतःप्रवृत्तिमार्गके मांसभक्षणप्रसंगमें निवृत्तिमार्गके सूत्र लिखने अनुपयोगी स्पष्टहीहैं ॥

२—यदि प्रवृत्तिमार्गके प्रकरणमें निवृत्तिमार्गके सूत्रकथनकरोगे तो इसीपातञ्जलसूत्रमें कथनकरा मैथुनका त्यागरूपब्रह्मचर्य्य,और धनादिकों का असंग्रहरूप अपरिग्रहभी प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोके लिये कहनाहोगा

वो गृहस्थजनोंलिये अपरिग्रहआदिकोंकाकथन तो अयुक्तहीहै अतःप्रवृत्ति मार्गके प्रसंगमें निवृत्तिमार्गके पातंजलसूत्रलिखने अनुपयोगीहीहैं ॥

३--देखो प्रमाणांक ४६ आदिकोंमें महर्षिओंने वेदविहितहिंसा अहिंसा रूपही मानीहै ॥

पूर्वपक्षी०-श्रीभगवान्कृष्णजीकी सम्मति **ब्रह्मचर्य्यमहिंसाच शारीरंतपउच्यते** ॥ गी०अ० १७॥१४॥ आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य और योगशास्त्रमें कहीहुई ८१ प्रकारकी हिंसाकाअभाव अहिंसा, यहसब शरीरका तप कहाताहै ॥

अहिंसासत्यमक्रोध स्त्यागःशान्तिरपैशुनम् ॥
दयाभूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवंह्रीरचापलम् ॥

अ, १६ ॥२॥ हे अर्जुन अहिंसा, सत्यबोलना, क्रोध न करना, कोमलता, लज्जा अचपलता, इत्यादिकसब दैवीसम्पत्के गुणहैं, किसीभी जीवको दुखदेना राक्षस कहलाताहै ॥

आस्तिक०-अज्ञानका महिमा अतिप्रबलहै देखिये तुम आपही गीता श्लोकके अर्थमें आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य, और त्यागआदि लिखतेहो तो तुमारीबुद्धिमें यह विचार उदय नहींहुआ कि, आठ प्रकारके मैथुनका त्यागरूप आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य और त्यागआदि, यिह साधन क्या प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंकेलिये श्रीकृष्णजी कथनकररहेहैं अथवा निवृत्ति मार्गवाले योगाभ्यासीओंकेलिये कहरहेहैं ॥

हार जो दैवीसम्पत्में अहिंसा कहीहै वोभी वृथाहिंसाका त्यागरूप अहिंसाजाननी क्योंकि, धर्मपुस्तकोंमें वेदविहितहिंसा अहिंसारूपहै मानी है।

वो शारीरकके अ० ३ ॥ पा, १ ॥ २५ वें सूत्रके श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीजीनेंभी वेदविहितपशुहिंसाको रक्षारूपहीमानाहै देखो श्रीभाष्य प्र० ४८—**अतिशायिताभ्युदयसाधनभूतोव्यापारोऽल्पदुःखदोपि नाहिंसा प्रत्युत रक्षणमेव। चिकित्सकंच तादात्त्विकाल्प दुःखकारिणमपि रक्षकमेव वदन्ति पूजयन्ति चतज्ज्ञाः।** अर्थ अधिकइष्टसाधनरूप जो व्यापारहै वो अल्पदुःखदायीभी हिंसारूप नहींहोता प्रत्युत रक्षाहीहै जैसे चिकित्साके गुणजाननेवाले पुरुष चिकित्साकालमें अल्पदुःखकारीभी चिकित्सकको रक्षकही कहतेहैं और पूजतेहैं ॥

हेमित्र-धर्मग्रन्थोंमें वेदविहितहिंसा अहिंसारूपही मानीहै अब इसअर्थमें औरभी प्रमाणोंको दिखलाताहुं मनुस्मृति प्र० ४९—**यावेदविहिताहिंसा नियताऽस्मिंश्चराचरे। अहिंसामेवतांविद्याद्वेदाद्धर्मोहिनिर्बभौ** ॥ अ.५ ॥ ४४ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० ५० **वेदविहितो यःप्राणिवधः सोऽस्मिञ्जगतिचरचरे स्थावरजङ्गमे नियतोनित्योऽनादिः। अहिंसामेवविद्यात्**

इसमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ५१—

अहिंसामेवतांजानीयात् हिंसाजन्यधर्मविरहात् धर्मोवेदादेव निःशेषेणप्रकाशतांगतः

इसीपर राघवानन्दकी टीका प्र० ५२

वेदविहिताहिंसा न हिंसेत्याह । हिंसातोऽधर्मोयथा वेदप्रमाणकस्तथायज्ञेहिंसातोधर्मस्तत्प्रमाणक इति ॥

इसपर नन्दनाचार्य का मानवव्याख्यान प्र० ५३

वेदविहितहिंसाहिंसात्वेनवक्तुंनयुक्तेत्यभिप्रायः ॥

इसपर रामचन्द्रकी टीका प्र० ५४ अस्मिञ्चराचरेया वेदविहिता हिंसा विध्युक्ताहिंसा तां हिंसा महिंसामेव विद्याज्जानीयात् ॥

मनुभाष्य और टीकासहित मनुश्लोकका अर्थ—इसचरअचरजगत्में जो वेदविहितहिंसाहै वो नित्यहै अनादिहै उसको अहिंसाहीजानो, धर्म वेदसेंही प्रकट हुआहै इस्सें वेदविहितहिंसाको हिंसाकहना युक्त नहींहै

यथा हिंसासें पाप वेदप्रमाणसें सिद्धहै तथा यज्ञमें हिंसासें पुण्य वेदप्रमाणसें सिद्धहै ॥

वेदान्तशास्त्रशारीरक प्र० ५५ अशुद्धमितिचेन्नशब्दात् ॥ अ. ३ ॥ पा. १ ॥ २५ ॥

इससूत्रपर (रामानुजस्वामीका श्रीभाष्य प्र० ५६—इति चेन्न कुतः शब्दात् अग्नीषोमीयादे स्संज्ञपनस्य स्वर्गलोकप्राप्तिहेतुतया हिंसात्वाभावशब्दात् पशोर्हिसंज्ञपननिमित्तां स्वर्गलोकप्राप्तिं वदन्तं

शब्दमामनन्ति । हिरण्यशरीर ऊर्ध्वः स्वर्गं लोकमेति इत्यादिकम् । अतिशयिताभ्युदय साधनभूतोव्यापारोऽल्पदुःखदोपि न हिंसा प्रत्युत रक्षणमेव तथाच मन्त्रवर्णः—नवाएत न्म्रियते न रिष्यासि देवान् इदेषि पथिभिः सुगोभिः यत्रयन्ति सुकृतोनापि दुष्कृत स्तत्र त्वा देवस्सविता दधातु इति ॥ चिकित्सकंच तादात्विकाल्पदुःख कारिणमपि रक्षकमेववदन्ति पूजयन्तिच तज्ज्ञाः ॥

सूत्र व श्रीभाष्यका अर्थ-हिंसायुक्तयज्ञादिककर्म अशुद्धम्, पापमिश्रितहैं ऐसे यदिकहो तो वो समीचीन नहींहै क्योंकि-अग्नीषोमीयआदिपशुका मारणा स्वर्गलोककी प्राप्तिका हेतुहोनेकर वेदमें अग्नीषोमीयआदिपशुके मारणमें हिंसात्वका अभावकहनेसें तुमारा कथन समीचीननहींहै ॥

"प्रकाशमय शरीरवालाहुआ ऊर्ध्वस्वर्गलोक को प्राप्तहोताहै" इत्यादिक पशुमारणनिमित्तसें स्वर्गलोककी प्राप्तिके बोधक वैदिकशब्दोंको वैदिकपुरुष कथनकर्तेहैं ॥—

अधिक इष्टसाधनरूप जो व्यापार वो अल्पदुःखदायीभी हिंसारूप नहीं होता प्रत्युत रक्षाहै, वैसे वेद मंत्र कहताहै "हेपशो यिह तूं मरता नहीं हैं तूं हिंसित नहींहोता किंतु प्रकाशवाले मार्गोंसें तूं देवतोंको प्राप्तहोताहैं पुण्यवान्पुरुष जहांजातेहैं पापीजन जहांनहींजासक्के तहां तुझको सविता

परमात्मदेव स्थितकरे" इति ॥ चिकित्साकालमें अल्पदुःखकारीभी चिकित्स कको रक्षकही कहतेहैं अर पूजतेहैं ॥

हेपाठक देखो यहां वेदान्तसूत्रके अनुसारी श्रीभाष्यमें—रामानुजस्वामी वेदप्रमाण दिखाकर वेदविहितहिंसाको अहिंसाही मानतेहैं और उससें स्वर्गलोक की प्राप्ति कहतेहैं ॥

'इसीवेदान्तसूत्रपर शाङ्करभाष्य प्र० ५७ - शास्त्रहेतुत्वाद्धर्माधर्मविज्ञानस्य अयंधर्मोऽयमधर्म इतिशास्त्रमेव विज्ञानेकारणम् अतीन्द्रियत्वात्तयोः । तेन न शास्त्राहते धर्माधर्मविषयं विज्ञानं कस्यचिदस्ति शास्त्राच्च हिंसानुग्रहाद्यात्मको ज्योतिष्टोमो धर्म इत्यवधारितम् स कथमशुद्धइतिशक्यतेवक्तुम् ॥

अर्थ—धर्मअधर्मके निश्चयका हेतु शास्त्रहै क्योंकि—धर्माधर्म अतीन्द्रियपदार्थहैं अतः यिहधर्महै यिहअधर्महै, अर्थात् इसकर्मसें यिहधर्म इसकर्मसें यिहअधर्म पैदा होताहै, ऐसेविज्ञानमें शास्त्रहीकारणहै इस्सें किसी कोभी शास्त्रसेंबिना धर्माधर्मका विज्ञान नहींहोसक्ता, हिंसा व अनुग्रहआदि रूप ज्योतिष्टोमयज्ञ धर्महै" यिह शास्त्रसें निश्चितहै तो वो पापयुक्त कैसे कहसक्तेहैं अर्थात् वेदविहितहिंसा पाप नहींहै अतः अहिंसाहीहै ॥

भगवद्भागवत प्र० ५८—तथापशोरालभनंनहिंसा ॥ स्कन्ध ११।अ०५।१३॥

इसपर श्रीधरी टीका प्र० ५९—देवतोद्देशेन यत्पशुहननं

तदालभनम् ॥ ६

अर्थ—देवताके उद्देशकर जो पशुका मारणा वो हिंसा नहींहै अर्थात् अहिंसाहीहै ॥१३॥ देवताके उद्देशकर जो पशुका मारणाहै वो आलभन-पदका अर्थहै ॥

हेपाठक—चिन्तन और अभिलाष उद्देशपदका अर्थहै ॥

मनुस्मृति प्र० ६०—यज्ञार्थंपशवःसृष्टाः स्वयमेव-स्वयंभुवा ॥ यज्ञस्यभूत्यैसर्वस्य तस्माद्यज्ञेव-धोऽवधः ॥ अ० ५॥३९॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ६१—यज्ञसिद्ध्यर्थं प्रजा-पतिनाऽऽत्मनैवादरेण पशवः सृष्टाः। यज्ञश्चाग्नौ प्रास्ताहुतिन्यायात्सर्वस्यास्यजगतो विवृद्ध्यर्थः। तस्माद्यज्ञेवधोऽवधएववधजन्यदोषाभावात् ॥

इसपर नन्दनाचार्यका मानवव्याख्यान प्र० ६२—

यज्ञेवधोवधकार्याभावादवधः ॥

इसपर रामचन्द्रकी टीका प्र० ६३—यज्ञः अस्यद्विजस्य सर्वस्यक्षत्रियादेः भूत्यैऐश्वर्यायभवति तस्माद्यज्ञेवधोऽवधएव ॥

इनटीकाओंसहित मनुश्लोकका‌अर्थ—यज्ञकी सिद्धिलिये आपब्रह्माजीने पशु रचेहैं, सबजगत्की वृद्धिका और ब्राह्मणक्षत्रियआदिकोंके ऐश्वर्यका कारण यज्ञहै इस्सेंयज्ञमें जो बधहै वो अवधहीहै, अहिंसाहीहै क्योंकि—वो दोपका कारण नहींहै ॥

वासिष्टस्मृति प्र० ६४—**नाकृत्वाप्राणिनांहिंसांमांसमुत्पद्यतेक्कचित्। नचप्राणिवधःस्वर्ग्यस्तस्माद्यागेवधोऽवधः ॥ अ०४ ॥ ७॥**

अर्थ—प्राणिओंकी हिंसाकरे विना मांसकहीं पैदानहींहोता, अर प्राणीओंका वध स्वर्गकाहेतुनहींहै, इस्सें यज्ञमें बधअबधहीहै, अर्थात् यज्ञमें पशुहिंसासें स्वर्गकीप्राप्ति श्रुतिस्मृतिओंमें कहीहै अतः वृथाहिंसा स्वर्गका हेतु नहींहै और यज्ञमेंहिंसा अहिंसाहीहै ॥

शंकरविजयाडिण्डिमटीकाप्र०६५- **यागीयस्याहिहिंसनस्यनिगमे धर्मत्वमुक्तंस्फुटम् ॥ सर्ग १५ ॥**

२८ वेंश्लोककी टीकामें श्रीशंकराचार्य्यजी जैनीको कहतेहैं कि—यज्ञसम्बन्धीहिंसाको वेदमें धर्मरूप स्पष्टकहाहुआहै ॥

होर जो तुमनेकहा कि—"किसीभीजीवकोदुःखदेना राक्षस कहलानाहै" वो यद्यपि वृथाहिंसाविषयकसत्यहै तथापि विहितहिंसाविषयक वो कथन नास्तिकतासेंहै अतः अयुक्तहीहै ॥

१ वैद्यडाकटरआदिकोंसें निश्चितहै कि—मलकेरुधिरके दद्रुप्लेगआदि सब रोगोंके कृमि भिन्नभिन्नजातिके होतेहैं गौअश्वगर्दभआदिकोंके व्रणपर मक्षिका मलकरदेतीहै तो अनेककृमि पैदाहोजातेहैं

विरेचनसें मलकृमिओंकी, औषधसेवनसें दद्रुआदिरोगकृमिओंकी, व्रण

शोधकऔषधसें व्रणकृमिओंकी कुलोंका विनाशहोताहै ॥

हेमित्र—औषधोंका सेवन तुमभीकर्तेहीहो करातेहीहो तो तुमभी राक्षस ही कहलातेहो क्योंकि—औषधोंकर व्रणकृमिआदिअसंख्यजीवोंको प्राणान्त दुःखदेतेहो ॥

और वर्षाकालमें गेहुं चना चावलआदिकोंमें असंख्यजीवपैदाहोजातेहैं तब गेहुंचनाऽऽदिकोंको धूपमेंफैलायके उनअसंख्यजीवोंको क्या तुम प्राणान्तदुःखनहींदेतेहो, देतेहीहो तो क्या तुमभी राक्षसही कहलातेहोगे ॥

२—हेमित्र—वेदवेत्ताब्राह्मण और रामआदिकअवतार युधिष्ठिरप्रभृति महाराजे विहितमांसको खाते खुलातेहीरहेहैं तो उनमहानुभावोंको कौन आस्तिकपुरुष राक्षस कहसक्ताहै ॥

हेभ्रातः—यदि श्रीकृष्णजी वेदविहितहिंसाको अहिंसारूप न मानते तो नन्दप्रभृतिगोपोंको पशुबलिप्रदानालिए प्रेरणा कभीनकर्ते, और ३०१ पशुओंके बलिप्रदान जिसमें हुएथे ऐसे युधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञमें कृष्णचन्द्र कभीस्थित नहोते, परन्तु कृष्णचन्द्रने नन्दप्रभृतिगोपोंको प्रेरणाकर्के गिरि यज्ञालिये पशुको मरवायके मांसका बलिप्रदान करवाया वो देखोप्रमाणांक ४२ आदिकोंमें कहाहीहै, प्रमाणांक ११९ युधिष्ठिरके यज्ञमें ३०१ पशुओं का बलिदान कियागया वहां श्रीकृष्णचन्द्रजी विद्यमानहीथे, उसयज्ञालिये युधिष्ठिरको प्रेरणाभी करीथी अतः पशुबलिप्रदानमें व विहितमांसके भक्षण में कृष्णचन्द्रकी सम्मति स्पष्टहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—सम्मति मनुजीकी—**योऽहिंसकानिभूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया । सजीवंश्चमृतश्चैव नक्वचित्सुखमेधते ॥ अ० ५ ॥ ४५ ॥**

जो अपने सुखकेवास्ते खानेकेलिये दुर्बलजीवोंको मारताहै वह इस लोक परलोकमें कहींभी सुख नहींपाता ॥

मनुस्मृति-योबन्धनबधक्लेशान् प्राणिनांनचिकीर्षति । ससर्वस्यहितप्रेप्सुः सुखमत्यन्तमश्नुते ॥५ ॥४६॥ यद्ध्यायतियत्कुरुतेधृतिंबध्नातियत्रच । तदवाप्नोत्ययत्नेन योहिनास्तिनकिञ्चन ॥ ४७॥ नाकृत्वाप्राणिनांहिंसां मांसमुत्पद्यतेक्वचित् नचप्राणिबधःस्वर्ग्य स्तस्मान्मांसंविवर्जयेत् ॥ ४८॥ समुत्पत्तिंचमांसस्य बधबन्धौचदेहिनाम् । प्रसमीक्ष्यनिवर्तेत सर्वमांसस्यभक्षणात् ॥४९॥ फलमूलाशनैर्मेध्यै मुन्यन्नानांचभोजनैः । नतत्फलमवाप्नोति यन्मांसपरिवर्जनात् ॥५४॥

अर्थ—प्राणिओंके बन्धनके और बधके क्लेशोंको जो नहीं कियाचाहता सो सर्वके हितचाहनेवालापुरुष अत्यन्तसुखको पाताहै ॥ ४६ ॥ जो किसी की हिंसा नहीं कर्ता सोमनुष्य जिसपदार्थका चिन्तनकर्ताहै, जिससाधन को कर्ताहै, जिसमे धारणाकर्ताहै, उसको विनाक्लेशसें प्राप्तहोताहै ॥ ४७ ॥ प्राणीओंकी हिंसाकरेविना मांस कहींपैदा नहींहोता अर प्राणीओंका बध स्वर्गका हेतु नहींहै उस्सें मांसको त्यागदेना चाहिये ॥ ४८ ॥ शुक्रशोणित सें मांसकी उत्पत्तिको और जीवोंके बधबन्धनोंको देखकर सर्वमांसकेभक्षणसें

निवृत्तहोवे ॥ ४६ ॥ पवित्रफलमूल और नीवारआदिक मुनिओंके अन्नके भोजनसें सोफल नहींमिलता जो मांसके त्यागसें मिलताहै ॥ ५४ ॥

आस्तिक० - यिह सबश्लोक अविहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागको कहतेहैं अर्थयिह श्रुतिस्मृतिआदिकोंकी 'आज्ञाका' प्रेरणाका नाम विधिहै विधिसें कहेहुएअर्थका नाम विहितहै, जो विहित न हो वो अवि-हित कहाजाताहै, ऐसीजो विहितहिंसा नहीं, विहितमांसभक्षण नहीं उसअ-विहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागका उपदेश यिहश्लोककर्तेहैं वोदे-खो इनश्लोकोंकी टीकामें स्पष्टकहाहै —

४८ वेंश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ६६—**तस्मादविधि-ना मांसंनभक्षयेत्** । अर्थ—जिस्सें अविहितमांस स्वर्गका हेतु नहीं इस्सें विधिबिना मांसको नहीं खाए।

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० ६७—**मांसमविधिसंप्राप्तं वर्जयेतनभक्षयेत्** ।अर्थ विधिसेंबिना मांसको न खाए ॥

हेपाठक—श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें देवतापितरअतिथिआदिकोंके निमित्त-कर भेडबकराऽऽदिकोंकी हिंसाका विधानहै, विधिहै वोदेखो प्रमाणांक १०१ व, १२१ व, ६८ व, १७५ आदिकोंमे स्पष्टहै ॥—

इसीसें देखो प्रमाणांक ६६ आदिकोंमें विहितहिंसाका उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही वर्णनकराहै और जो देवतापितरअतिथिआदिकोंके निमित्तको नहींरखकर हिंसाकीजावे वो अविहि तहिंसाहै उसीका अनिष्टफल स्मृतिओंके उक्त इत्यादिक श्लोकोंमें कहाहै।

हेभ्रातृजन—श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें देवतापितर अतिथिआदिको पूजकर

देकर शेषमांसके भक्षणका विधानहै,, विधिहै हुकमहै वोदेखो प्रमाणांक १९५ व २०९ व २१४ इत्यादिकोंमें प्रकटहीहै ऐसेविहितमांसके खानेसें कोईदोष नहीं होता यिहअर्थदेखो प्रमाणांक ३१ आदिकोंमें स्फुटवर्णन कराहुआहै, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर नरकआदिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफलही वर्णन कराहै, इस्सें यिह सिद्धहुआ कि—अविहितहिंसाका अविहितमांसका त्यागही कराचाहिये। और विहितपशुबलिप्रदान व विहितमांसभक्षण अवश्यं कराचाहिये —

इसीसें अविहितहिंसाके अविहितमांसके त्यागलिये स्मृतिआदिकोंमें रोचकवाक्यनमें त्यागका माहात्म्यभी कहाहै जैसे यहां ४६ वें ४७ वें और ५४ वें श्लोकमें कहाहै औरकेइजगे स्मृतिआदिकोंमें अविहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागलिये भयानकवाक्यनसें दोषभी सुनायाहै जैसे यहां ४५ वें ४८ वें और ४९ वें श्लोकमें कहाहै ॥

हेमित्र–विहितपशुबलिप्रदानके व विहितमांसभक्षणके त्यागलिये यिहश्लोक प्रवृत्तनहींहै क्युंके–स्मृतिआदिकोंमें विहितहिंसाका श्रेष्ठफलही कहाहै, अब इसअर्थमें प्रमाणोंको दिखाता हूं।

मनुस्मृति प्र० ९८—मधुपर्केचयज्ञेच पितृदैवतकर्मणि॥ अत्रैवपशवोहिंस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः। अ. ५ ॥ ४१ ॥

मनुस्मृति प्र० ९९—एष्वर्थेषुपशून्हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः। आत्मानंचपशुंचैव गमयत्युत्तमांगतिम् ॥ ५ ॥ ४२ ॥

अर्थ—मधुपर्कमें यज्ञमें पितृकर्ममें देवकर्ममें इनहीमें अजआदिपशु मारणे इनसेंअन्यत्रनहीं, एवं मनुजी कहतेभए ॥४१॥ इनमधुपर्कआदिकोंनिमित्त पशुओंको मारताहुआ वेदतत्त्वका वेताद्विजपुरुष अपनेको और पशुको उत्तमगतिमें पहुंचावेहै अर्थात् विधिविहिताहिंसाका उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफल होताहै ॥४२॥

मनुस्मृति प्र० ७०—ओषध्यःपशवोवृक्षा स्तिर्यञ्चः-पक्षिणस्तथा । यज्ञार्थेनिधनंप्राप्ताःप्राप्नुवन्त्यु-च्छ्रितीःपुनः ॥५॥ ॥४०॥

इसपर नन्दनाचार्यकी टीका प्र० ७१—यज्ञार्थेवधे न केवलं यजमानस्यैवाभ्युदयः किंतु पश्वादीना-मपीत्याह ओषध्यइति ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र०७२—ओषध्योव्रीहियवाद्याः पशवश्छागाद्याःवृक्षायूपाद्यर्थाः तिर्यञ्चः कूर्मा-दयः । पक्षिणः कपिञ्जलाद्याः यज्ञार्थं विनाशं गताः पुनर्जात्युत्कर्षंप्राप्नुवन्ति ॥

इसपर गोबिन्दराजकी टीका प्र०७३—तेततःतमधर्मार्जितं निकर्षंहित्वा पुनरात्मज्ञानाधिकृतशरीरलाभे-नोत्कर्षान्प्राप्नुवन्ति ॥

इनटीकांसहित मनुश्लोककाअर्थ—यज्ञलिये बधकरणेसें केवलयजमानको

ही शुभलाभ नहींहोता किन्तु पशुआदिकोंकोभी शुभलाभहोताहै यिहअर्थ इसश्लोकमें कहतेहैं ॥

व्रीहियवआदिओषधि, अजआदिपशु, यूपआदिकोंके लिये वृक्ष, तिर्यक् कूर्मआदि, कपिञ्जलआदिपक्षी यिहसबयज्ञकेलिये नाशकोप्राप्तहुए उत्तम जातिकोप्राप्तहोतेहैं। इसमें गोविन्दराज कहतेहैं कि—अधर्मसेंप्राप्तहुई निकृष्टताको त्यागकर वो पशुआदिक आत्मज्ञानके अधिकारीशरीरके लाभसें उत्कृष्टताकों प्राप्तहोतेहैं ॥

हेपाठको—देखो मनुस्मृतिकेपुरातनसंस्कृतटीकाकार कैसा स्पष्टअर्थ लिखतेहैं परन्तु भाषाटीकाकार तुलसीरामजी अपना भिन्नही गीतगातेहैं ॥

श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीजीनेभी विहितहिंसाका स्वर्गप्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही वर्णनकराहै औरउसमें वेदमन्त्रप्रमाणभी लिखाहै देखो—

श्रीभाष्य—**अग्निषोमीयादेस्संज्ञपनस्यस्वर्गलोकप्राप्तिहेतुतया** ॥ इत्यादिकपाठ और अर्थ प्रमाणांक५६ में लिख चुकाहुं ॥

शंकरविजयडिण्डिम टीका प्र० ७४॥

अग्निष्टोममुखेक्रतौखलुपशोःस्वर्गप्रदंहिंसनं ।
श्रुत्याचाररतैरुपेयमपरे पाखण्डिनोविस्फुटम् ॥

सर्ग १५॥२८ वें श्लोककी टीकामें श्रीशंकराचार्यजी जैनीको कहतेहैं कि—अग्निष्टोमआदियज्ञमें पशुका हिंसन स्वर्गका देनेवालाहै इससें वेदविहित आचारमें प्रीतिवालेपुरुषोंनें वो यज्ञनिमित्त पशुका हिंसनरूपआचार ग्रहणकरणायोग्यहै, होरजो अर्थात् वेदविहितआचारके नहींकरणेवालेहैं वो पाखंडी स्पष्टहैं ॥

बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र प्र० ७५ ॥

एवंपञ्चमखान्कुर्वन् मधुमांसाज्यपायसैः ।
समंतर्प्यपितृन्देवा न्मनुष्यान्स्वर्गमाप्नुयात् ॥

अ० ४॥८०॥

अर्थ-ऐसे पंचयज्ञनको कर्ताहुआ गृहस्थजन पितरोंको देवतोंको अतिथिमनुष्यनको शहतमांसघृतदुग्धसें सम्यक् तृप्तकर्के स्वर्गको प्राप्तहोवे अर्थात् घृतमांसाऽऽदिकोंके होमसें देवतोंकी तृप्ति, ऐसेही श्राद्धसें पितरोंकी तृप्ति, समांसभोजनादिकोंसें अतिथिमनुष्यनकी तृप्तिकरणेसें स्वर्गकी प्राप्ति रूप श्रेष्ठफलको पावे-

हेपाठक-देखो इसवाक्यमें विधिहै ॥

विदितहोकि—कांस्यके पात्रसें ढकाहुआ कांस्यके पात्रमें मधुसेंमिले हुए दधिको मधुपर्क कहतेहैं ऐसामधुपर्क श्रोत्रियके राजाके अतिथिआदिकों के आगमनपर उनको मांससहित भोजनसें अनंतर देना धर्मपुस्तकोंमें कहाहै इसअर्थमें—

आश्वलायन गृह्यसूत्र प्र० ७६—**नामांसोमधुपर्कोभवति-भवति ॥** अ० १॥ कण्डिका २४॥सूत्र २६॥

इससूत्रपर गार्ग्यनारायणीया वृत्ति प्र० ७७—**मधुपर्काङ्गं भोजनममांसं न भवतीत्यर्थः ॥ अध्यायान्त लक्षणार्थं द्विर्वचनं मङ्गलार्थंच ॥**

अर्थ--मधुपर्कमें प्रथमजो मधुपर्कका अंग भोजनहै वो मांसरहित नहींहोना अर्थात् समांसभोजनसें अनन्तर श्रोत्रिय अतिथिराजाऽऽदिक पूजनीयजनोंको मधुपर्क दियाजाताहै ॥ अंगोंसहित वेदवेताका नाम श्रोत्रियहै ॥

पूर्वपत्ती० प्र० ७८--

यावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वोहमारणम् ।
वृथापशुघ्नःप्राप्नोति प्रेत्यजन्मनिजन्मनि ॥
मनु० ५॥३८॥

जो केवल अपने पेट भरनेकेलिये पशुओंको मारताहै वहपुरुष जितने पशुके शरीरमें रोमहोतेहैं उतनेवार जन्मधारकर दूसरोंसें माराजाताहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र इसका उत्तर तो तुमने आपही लिखदियाहै परंतु श्लोकलिखतेहुए तुमको लज्जाभी नहींआई ॥ अर्थयिह अविहितहिंसाकोही वृथाहिंसा कहतेहैं, विहितहिंसाका तो श्रेष्ठफलही श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें दिखाचुकाहूं । और "अविहितहिंसाका" वृथाहिंसाका स्मृतिआदिकोंमेंभी निषेधकराहीहै इसश्लोकमेंभी वृथापशुहिंसाकाही भयानकवाक्यसें निषेधकराहै तो विहितहिंसाके प्रकरण में यिहश्लोकलिखना धोखादेना नहीं तो होर क्याहै हेपाठक देखो—

इसीमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ७६

देवताद्युद्देशमन्तरेणात्मार्थंयः पशून्हन्ति सवृथापशुघ्नोमृतः सन्यावत्संख्यानि पशुरोमाणि तावत्संख्याभूतं जन्मनिजन्मनि मारणंप्राप्नोति तस्माद् वृथापशुंनहन्यात् ॥

अर्थ—देवताऽऽदिकोंके उद्देशसेंविना जो अपनेलियेही पशुओंको मारताहै वो वृथापशुघ्नपुरुष मरके जन्मजन्ममें पशुके रोमजितनेवार मारा जाताहै, इस्सें वृथापशुहिंसा नहींकरे अर्थात देवताऽऽदिकोंके उद्देशकर अजादि पशुका वधकरे ॥

पूर्वपक्षी०—**वर्षेवर्षेऽश्वमेधेन योयजेतशतंसमाः मांसानिचनखादेद्य स्तयोःपुण्यफलंस्मृतम् ॥**

म. अ. ५॥ श्लो. ५३—जोपुरुष सौवर्षतक अश्वमेधयज्ञ कर्ताहै और मांसखाताहै, और जोपुरुष मांसनहींखाता चाहे वह एकभीयज्ञ नहींकर्ता, यहदोनों समानहैं, मतलब यहहैकि—मांसाहारीपुरुषका सबकर्म-धर्म नष्टहोजाताहै ॥

आस्तिक०—मनुका यिहश्लोक अहिंसादिग्दर्शनग्रन्थमें विजयधर्म-सूरीजी जैनीनेभी लिखाहै परंतु उसजैनीमहात्माने ऐसाछल नहींकरा जैसाकि-इसबालनेकराहै ॥

पूर्वपक्षी०-मैंने क्या छलकराहै

आस्तिक०-सुनिये एकतो तुमने मूलश्लोकमें 'समम्' की जगेमें स्मृतम् लिखदिया अर्थात् पाठको वदलादिया दूसरा तुमने 'तयोःपुण्य-फलंसमम्'' इसवाक्यका अर्थ कुछभी नहींलिखा अर्थात् धोखादेनेलिये अर्थको छोड़दिया—

तीसरा—'यहदोनो समानहैं' यिहतुमने अपनीतर्फसें लिखडाला, मूलश्लोकमें प्रथमाविभक्तिका द्विवचनान्तपद कोईभी नहींहै, बहुत क्या स्मृतिपाठको वदलकरभी श्लोकका अर्थ व व्यवस्था तूं नहींलिखसका ॥

हेपाठको—ऐसेछलकर लेखकपुरुष विद्वज्जनोंमें धर्मवेता नहींकहलाय

सके किंतु ऐसेअसत्कर्ममें वो नास्तिकही कहनेयोग्यहै ॥

इसश्लोकका भावार्थ यिहहैकि जोपुरुष सौवर्षतक वर्षवर्षमें अश्वमेध-यज्ञकरे और विहितमांसकोभी खाए, और दूसरा जोकोईपुरुष वृथामांसोंको नहींखाए, तो उनदोनोंपुरुषोंको पुण्यफल बराबर होताहै ॥

इसश्लोकमें रोचकवाक्यसें अविहितमांसकेही त्यागका फल कहाहै ॥

इसमनुश्लोकपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० ८०—**अधुना यस्य वर्णस्य यादृशंमांसभक्षणं निषिद्धं तद करणे फलमाह वर्षेवर्षेइति ॥**

अर्थ—जिसवर्णकेलिये जैसे मांसभक्षणका निषेधहै उसनिषिद्धमांसके नहींखानेकाफल अबकहतेहैं वर्षेवर्षे इसश्लोकसें ॥

शंका—एकपुरुष हरसाल अश्वमेधयज्ञकरे वो मांसभी नहींखाता, और दूसरापुरुष मांसही नहींखाता, तो उनदोनोको पुण्यफलबराबर, तुल्यहोता, है ऐसाअर्थ क्योंन कराजावे ॥

समाधान—ऐसे यदि दोनोंपुरुष मांसको नहींखाते तो एककेकरे अश्वमेधयज्ञनका फल कहाजावेगा इस्सें यिहअर्थ संभवेनहीं किंतु अविहितमांस भक्षणकेही त्यागकी स्तुति इसश्लोकमेंकीहै ॥

विहितमांसकात्याग नहींकहा किन्तु विहितमांसके त्यागसें तो अतिदोष कहेहैं, इसअर्थमें प्रमाणोंको अब दिखलाताहूं ॥

मनुस्मृति प्र० ८१—**नियुक्तस्तुयथान्यायं योमांसंनात्तिमानवः । सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम् ॥ अ० ५ ॥ ३५ ॥**

अर्थ —श्राद्धमें मधुपर्कआदिकोंमें शास्त्रविधिसें प्रेराहुआ जोपुरुष मांसको नहींखाता वो मरकर २१ जन्म पशुके पाताहै ॥

हेभ्रातः प्रमाणांक २७ और २८ में इसकी टीकाभी दिखाचुकाहूं ॥

व्यासस्मृति प्र० ८२—नाश्नीयाद्ब्राह्मणोमांस मनियुक्तःकथञ्चन । क्रतौश्राद्धेनियुक्तोवा अनश्नन् पततिद्विजः ॥ अ० ३ । ५६ ॥

अर्थ—जिसमें विधिवाक्य प्रेरणा नहींकर्ता वो विधिसें न प्रेराहुआ ब्राह्मण अर्थात् अविहितमांसको ब्राह्मण किसीप्रकारभी नहींखाए, और यज्ञमें व श्राद्धमें विधिसेंप्रेराहुआब्राह्मण मांसको नहींखाएतो पतितहोजाता है ॥

वासिष्ठस्मृति प्र० ८३—नियुक्तस्तुयदाश्राद्धे दैवेवामांस मुत्सृजेत् । यावन्तिपशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ अ० ११ ॥ ३१ ॥

अर्थ—विधिसेंप्रेराहुआपुरुष श्राद्धमें वा दैवकर्ममें मांसको त्यागदे, नहींखाएतो जितने पशुकेशरीरमेंरोमहों उतनेवर्ष नरककोप्राप्तरहताहै ॥

कूर्मपुराण प्र० ८४ योनाश्नातिद्विजोमांसंनियुक्तः पितृकर्माणि । सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम्॥अ० २२ ॥ ६८ ॥

अर्थ—पितृकर्मश्राद्धमें विधिसेंप्रेराहुआ जोद्विजपुरुष मांसको नहींखाता, वो मरकर २१ जन्म पशुकेपाताहै ॥

पद्मपुराण प्र० ८५—आमन्त्रितश्चयः श्राद्धे दैवेवा मांसमुत्सृजेत् । यावन्तिपशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ खण्ड ३ ॥ अ० ५६ ॥ ४२ ॥

अर्थ जोपुरुष श्राद्धमें वा देवकर्ममें आमन्त्रणकरगहुआ मांसको नहीं खाता वोपुरुष जितनेपशुके शरीरमें रोमहों उतनेवर्षतक नरककोप्राप्तरहताहै ॥

होरजो तुमने लिखा कि—मतलब यहहै कि मांसाहारीपुरुषका सब कर्मधर्म नष्टहोजाताहै,, सोयिहभीतुमने नास्तिकतासें मिथ्याहीलिखाहै, तथाहिसुनिये ॥

१—वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थनमें बहुतहीवाक्य मांसभक्षणका विधानकरतेहैं तो उन श्रुतिसूत्रस्मृतिओंसें विहितकर्मकरणेकर सबकर्मधर्मोंका नाश कहना क्या नास्तिकतासें विना होसक्ताहै अर्थात् वेदसूत्रस्मृतिओंसें विरुद्ध कहने कर नास्तिकता प्रकटहीहै ॥

२—हेमित्र—मांसाहारीपुरुषका सबकर्मधर्म नष्टहोजाताहै,, यिह तुमारा करा आक्षेप रामलक्ष्मणआदिअवतारोंमें तथावेदवेत्ताब्राह्मणोंमें महर्षिओंमें और नल अम्बरीष रन्तिदेव युधिष्ठिरप्रभृतिधर्मात्मामहाराजोंमेंभी प्राप्तहोगा क्योंकि—यिहसब महानुभावपुरुष मांसको खाते खुलाते रहेहैं तो उनपूज्य जनोंमें आक्षेप नास्तिकताविना नहींहोसक्ता ॥

३—हेभ्रातः—यद्यपि अविहितमांसखानेका स्मृतिआदिकोंमें निषेधहै उससें दोषभी लिखाहीहै तथापि विहितमांसखानेसें दोष नहींहोता, इस अर्थमें देखो प्रमाणांक ३१ आदिकबहुतप्रमाण दिखाचुकाहूं ॥

और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष कहेहैं

अतः विहितमांसके खानेवालेका कर्मधर्म नष्टनहींहोता किंतु श्रुतिस्मृति आदिकोंसें विरुद्ध मिथ्याकथनवालेका धर्मरूप मूल सूकजाताहै,, नष्टहो जाताहै इसमेंदेखो —

अथर्ववेदकी प्रश्नोपनिषद् —**समूलोवाएषपरिशुष्यति योऽनृतमभिवदति** प्र० ६ ॥ १ ॥

अर्थ - यिहपुरुषरूपवृक्ष स्वभाग्यरूप मूलके सहितसूकजाताहै जोपुरुष अमत्यभाषणकर्ताहै ॥

पूर्वपक्षी० - **मांसभक्षयिताऽमुत्र यस्यमांसमिहाद्म्यहम् ॥ एतन्मांसस्यमांसत्वं प्रवदन्तिमनीषिणः** म. अ. ५॥५५॥ जिसके मांसको मैं खाताहुं परलोकमें वह मेरेको खावेगा इसलियेही पंडितलोक मांसको मांसनामसे कहते हैं ॥

आस्तिक० -इसमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकीटीका प्र०८६ **इतिमांसशब्दस्य निर्वचनमवैधमांसभक्षणपापफलकथनार्थम् ॥** अर्थ -यिह मांसशब्दके अर्थकाकथन अविहितमांसभक्षणके पापफलकेकथनालियेहै ॥ हेमित्र, देखो, टीकामेंभी अविहितमांसका यिह अर्थ कहाहै फिर आप मनुजीनेभी कहाहै ॥

मनुस्मृति प्र०८७- **नाद्यादविधिनामांसं विधिज्ञोऽनापदिद्विजः ॥ जग्ध्वाह्यविधिनामांसंप्रेत्यतैरद्यतेऽवशः** अ,५॥३३॥ अर्थ—विधिको जाननेवाला द्विजपुरुष अनापत्काल

म विधिसेंबिना मांसको नखाए क्योंकि-विधिसेंबिना मांसको खानेवाला पुरुष मरकर परलोकमें उनोंसें खायाजाताहै ॥

इसमनुश्लोकका तात्पर्य्य यिह प्रकटहीहै कि आपत्कालमें तो अविधि सें मांसकोखाए परंतु अनापत्कालमें विधिसेंबिना मांसकोन खावे अर्थात् अनापत्कालमें विधिसें मांसकोखाए ॥

हेभ्रातः—विधिबिना मांसको खाए तो मरकर उनोंसे खायाजाताहै, यिह इसश्लोकमें मनुजीने आपभी कहाहै अतः विधिसें मांसखानेवाला मर कर उनोंसे नहीं खायाजाता, यिह तुमारेलिखेश्लोकका अर्थ प्रकटहीहै अतः तुमारेलिखे मनुश्लोकमें अविहितमांसका अर्थ दिखायाहै ॥ अब देखिये परमप्रमाण यास्कमहर्षिकेवेदांगनिरुक्तमें मांसका क्या अर्थ कराहै ॥

निरुक्त प्र०८८–[मांसं] माननं वा मानसं वा मनोऽस्मिन् सीदतीति वा ॥अ,४॥२॥३॥

इसनिरुक्तपर दुर्गाचार्य्यकी निरुक्तवृत्ति प्र० ८९–[मांसं] माननंवा, यएवहिमान्योभवति तदर्थमेतत्संक्रियते मानसंवा, सुमनसाहि तदुपादीयते अथवा यएवहि मनस्विनोभवन्ति तैरुपादीयते मनोऽस्मिन्सीदतीतिवा सर्वस्यैवहि मांसे मनःसीदति

निरुक्तका और वृत्तिका अर्थ—मांसका मांस नाम क्यों है ॥

१–जोपुरुष मानके योग्यहो उसके मानालिये यिह बनायाजाताहै अतः मांसका मांसनामहै ॥

२—प्रसन्नमनसेंही वो ग्रहणकराजाताहै अथवा जो श्रेष्ठमनवाले पुरुषहैं उनोंने ग्रहणकारिताहै अतः इसकोमांसनामसें कहतेहैं ॥

३—रमन्न सर्वमनुष्यनेकामन इसमेंजाताहै इस्सेंभी इसका मांसनामहै ॥

यहां निरुक्तमें उद्देश्य मांसवस्तुहै अतःकिसीसमाजीका किया अन्यथा अर्थ माननीय नहींहोसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—जो कहतेहैं कि—हमतो नहींमारते किंतु मोललेतेहैं अतः हमको पाप नहींलगसक्ता इसपरमनुजी उत्तरदेतेहैं—**अनुमन्ता विशसितानिहन्ताक्रयविक्रयी । संस्कर्ताचोप हर्ताच खादकश्चेतिघातकाः ॥** अ० ५ ॥ ५१ ॥

अर्थ—सम्मतिदेनेवाला १, अंगोंकोअलग२काटनेवाला २, मारने वाला ३, मांसके पकानेवाला ४, मोललेनेवाला ५, बेचनेवाला ६, परोसनेवाला ७, खानेवाला ८, यहआठोंही मारनेवालेहैं अर्थात् इनसबको एकसा पाप लगताहै इस्सें मारनेवालेकी तरह मोललेनेवालाभी महापापी और नरकगामी होताहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र इसश्लोकमें आठोंही मारनेवालेहैं, यिहतो कहाहै परंतु उनको कोइशुभअशुभफलतो नहींकहाहै अतः पशुमारनेवालेको क्या फलहोताहै, ऐसानिर्णयतो मनुस्मृति के किसीहोरश्लोकसेंही होसक्ता है वोदेखो—

मनुस्मृति—**एष्वर्थेषुपशून्हिंसन् वेदतत्त्वार्थवि-द्द्विजः । आत्मानंचपशुंचैव गमयत्युत्तमांगति-म् ॥ ५ ॥ ४२ ॥** अर्थ प्रमाणांक ६९ में लिखचुकाहुं ॥

इसश्लोकमें मनुजीआपकहतेहैं कि—देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर करी हिंसासें श्रेष्ठगतिरूप श्रेष्ठफलही दोनोंकोमिलेहै ॥

और देखो प्रमाणांक ३१ में मनुजीने आपकहाहै कि मोललेकर मांसखानेसें कोइदोषनहींहोता । और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांस के नहींखानेसें अतिदोष कहाहै तो इत्यादिक मनुस्मृतिके श्लोक हेमित्र क्या तुमने पढ़ेनहीं देखेनहीं, यदि पढ़ेहैं देखेहैं तो इनश्लोकोंको तुमने क्यों नहींलिखा ॥

भावयिह—यदितुम सत्यधर्मसें लेखलिखा चाहतेतो इत्यादिश्लोक भी अवश्यलिखते फिर दोनोंप्रकारके श्लोकोंकी व्यवस्थाकरतेतो जाना जाता कि—तुमारी श्रुतिस्मृतिओंमें श्रद्धाहै अतः तुमआस्तिकहो व सत्यमें तुमारी प्रीतिहै, परंतु तुमने एकतर्फे मनुके श्लोकलिखडाले इस्सें निश्चयहोताहै किश्रुतिस्मृतिओंके सिद्धान्तकी उपेक्षाकरके तुमअपने चित्तचाहा प्रचारकरतेहो तो श्रुतिस्मृतिओंके सिद्धान्तकी उपेक्षाकरणेसें तुम विद्वज्जनोंमें आस्तिक नहींकहलायसक्ते ॥

मनुस्मृति प्र० ९०—**गृहेगुरावरण्येवा निवसन्नात्मवान्द्विजः । नावेदविहितांहिंसा मापद्यपिसमाचरेत् ॥** अ० ५।४३

अर्थ—अपने गृहमें वा गुरुके समीप वा बनमें वस्ताहुआ शुभमनवाला द्विजपुरुष वेदसें अविहितहिंसाको आपत्कालमेंभी नहींकरे ॥

हेपाठक—देखो प्रमाणांक ९८ को मनुजीने पंचमाध्यायके ४१ वें श्लोकमें यज्ञआदिकोंनिमित्त हिंसाका विधानकराहै, ४२ वें श्लोकमें उस विहितहिंसाका श्रेष्ठफल कहाहै, फिर इस ४३ वें श्लोकमें अविहितहिंसाका त्यागकहाहै, अतः मनुजीका तात्पर्य्य स्पष्टहीहै कि—शुभफलदायीविहित हिंसाको करें और अविहितहिंसाको नहींकरें ॥

मनुस्मृति प्र० ६१–प्रोक्षितंभक्षयेन्मांसं ब्राह्मणा-नांचकाम्यया ॥ यथाविधिर्नियुक्तस्तु प्राणानामेव-चात्यये ॥ अ०५॥२७॥

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० ६२–इतिचतुष्टये नियम-विधिः॥ अर्थ–वेदमंत्रसें प्रोक्षितमांसको और ब्राह्मणोंकी कामनासें मांसको खाए व देवकर्म पितृकर्मआदिकोंमें जैसाविधिसें प्रेराहुआ द्विजपुरुष मांसको खाए और प्राणांतसमयभी अर्थात् औषधालियेभी मांसको खाए, इनचारजगेमें मांसखानेका नियमविधिहै ॥

मनुस्मृतिप्र० ६३—नतादृशंभवत्येनो मृगहन्तुर्ध-नार्थिनः ॥ यादृशंभवतिप्रेत्य वृथामांसानिखा-दतः ॥ अ.५ ॥ ३४ ॥ अर्थ धनकेलिये मृगमारणेवालेको वैसापाप नहींहोता जैसापाप वृथामांसखानेवालेको मरकरहोताहै ॥

हेपाठक—प्रमाणांक ६१ में मनुजीनें मांसखानेका विधानकराहै, और इसश्लोकमें वृथामांसके, अविहितमांसके खानेकर पाप कहाहै और प्रमाणांक ३१ में विहितमांसखानेमें निर्दोपता कही, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेमें अतिदोषकहाहै, इस्में श्रुतिस्मृति आदिक आर्षग्रन्थ सत्यअर्थके प्रतिपादकहैं तो विहितमांसके खानेवाला पुरुष पापी नहींहोता अतः तो नरकगामी नहींहोसक्ता किंतु श्रुतिस्मृतिओंके वास्तवअर्थको छिपाकर असत्यकहनेवालापुरुष अवश्यं नरकगामी होताहै देखो—आत्मपुराण–समूलएवशुष्येत्स लोक

द्रुयफलंविना । अनृतंयोवदेत्कापि पुरुषःपरिमोहितः॥अ,१७।११७॥ अर्थ —सोपुरुषरूप वृक्ष अपनेभाग्यरूप मूलके सहित सूकजाताहै जो अतिभ्रान्तहुआपुरुष कहीं असत्यबोलताहै असत्य वक्तापुरुष मर्त्तलोक स्वर्गलोक इनदोनोंलोकोंके सुखरूप फलोंको नहीं प्राप्त होता अर्थात् नरकगामीहोताहै ॥

पूर्वपक्षी०—जबके मनुजीने मनुस्मृतिके अ,३ में घरमें नित्यहोने वाले पांचमहापापों के दूरकरनेकेवास्ते ५ महायज्ञोंका नित्यकरनागृहस्थ केलिये विधानकियाहै औरकहाहै कि इनके न करनेसे मनुष्य स्वर्ग में नहीं जासक्ता तोफिर मांसकेखानेमें अथवा पशुके मारनेमें कितना दोषहोगा थोडा इसबातका विचार मांसाहारीको आपहीकरलेनाचाहिये कण्डनी पेषणीचुल्ली उदकुम्भीचमार्जनी ॥ पञ्चसूना गृहस्थस्य ताभिःस्वर्गनगच्छति ॥म०अ०३॥श्लोक६८

मनुजी कहतेहैं कि–गृहस्थके घरमें पांच 'सूना' बधके स्थानहैं जैसे उखली, चक्की, चुल्ह, जलका घट, झाड़, अर्थात् इनपांचस्थानोंमें प्रायः नित्यसूक्ष्म जीव माराकरतेहैं और इसीहिंसाका पाप गृहस्थके शिरपर नित्यचढताहै यदि गृहस्थ इनका पांचयज्ञोंद्वारा प्रमादसे प्रायश्चित न करे तो वह स्वर्गमें नहीं जासक्ता किंतु नरकमेंही पड़ताहै ॥

आस्तिक०—मनुस्मृतिके इसश्लोकका पाठभी तुमने बदलदिया, क्या ऐसेपापसे तुम भयनहींकरते, इसीसे तुमको वारंवार नरक स्मरणमें आताहै॥

हे पाठक—मनुस्मृतिमें ऐसापाठहै —पञ्चसूनागृहस्थस्य चुल्लीपेषण्युपस्करः ॥ कण्डनीचोदकुम्भश्च

वध्यतेयास्तुवाहयन् ॥ अ० ३ ॥६८॥

अर्थ—गृहस्थके घरमें चुल्ली, चक्की, झाड़ू, उखली जलका घट, यिह पांच हिंसाकेस्थानहैं जिनपांचोंको स्वकार्य्यमें लगाताहुआ गृहस्थजन पापसेंयुक्तहोताहै ॥

अब यहां आपभी थोड़ासा विचार करलीजिये कि इन पांचजगेमें जो सूक्ष्मजीवोंकी हिंसाहोतीहैं वो क्या अजआदिकोंकीन्याईं देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर कीजातीहैं अथवा देवताऽऽदिकोंके निमित्तसेंविना वो अविहित-हिंसाहोतीहैं ॥

इनमें प्रथमपक्ष तो असंभवहीहै क्योंकि-उन सूक्ष्मजीवोंके बलिप्रदान में कोईविधिवाक्य नहींहै, वो अतिसूक्ष्मजीव किसीके काममेंभी नहींआते, और नांहीं उनको देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर माराजाताहै इस्सें वो विहितहिंसा नहींहै ॥

यदि द्वितीयपक्षकहोतो धर्मशास्त्रनमें अविहितहिंसाका पापकहाहीहै अविहिताहिंसाके पापोंकी निवृत्तिलिये प्रायश्चित्तकरणायोग्यही है अतः अविहितहिंसाके पापोंकीनिवृत्तिलिये पंचमहायज्ञरूप प्रायश्चित्तोंका मनुजी ने विधानकराहै, तो समीचीनकराहै हछाकराहै ॥

हेभ्रातः—श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें देवतापितरआतिथि आदिकोंकेलिये मांसदानकाविधानहै अतः पंजमहायज्ञनमें देवयज्ञमनुष्ययज्ञआदिकोंको यदि तुमकर्तेहोतो उनमें श्रुतिस्मृतिओंके विधिपालनलिये मांसकी अपेक्षाहै, यदि तुम श्रुतिस्मृतिअनुसारी देवयज्ञमनुष्ययज्ञआदिक नहीं कर्तेहो तो प्रमादकर प्रायश्चित्तकी न्यूनतासें तुम स्वर्गमें नहींजासक्ते किंतु तुमने अपनीकलमसेंही नरकमें पड़नालिखाहै ॥

पूर्वपक्षी०—अब महाभारतमें युधिष्ठिर और ब्रह्मचारी भीष्मपितामह जीके मांसविषयमें प्रश्नोत्तरकोदेखिये

युधिष्ठिरउवाच- प्रायशःपुरुषालोके नृशंसाःप्राणि-
हिंसकाः ॥ मांसेषुश्रद्धादृश्यन्ते रौद्रारक्षोगणाइव

महाभारतान्तर्गत इतिहाससमुच्चय अ० २८ ॥ १ ॥

भीष्मउवाच- अहोनुखलुशोच्यास्ते नराविषय-
लोलुपाः सर्वदोषके मांसे मूढापश्यन्तियेगुणान्

इति. अ. २८ ॥ ५ ॥ हेपितामहजी प्रायः इससंसारमें क्रूरलोग जीवोंके मारनेवाले और मांसखानेकी प्रीतिवालेही भयंकर राक्षसोंकीतरह देखनेमेंआतेहैं ॥ १ ॥
भीष्मजीबोले—वहपुरुष सर्वथानिन्दाकेयोग्यहैं जो मूर्ख केवलदोषोंकीखान मांसमेंभी कोईगुणमानतेहैं क्योंकि—इसमें विनादोषोंके गुणकानामभी नहींहै ॥

आस्तिक०—महाभारतके १८ पर्वहैं उन १८ पर्वोंमें कहीं इतिहास समुच्चय नहींहै, यदि तुमकहो कि—महाभारतमें श्लोकनिकालकर इतिहास समुच्चय किसीने बनायाहैतो हेमित्र ऐसेबनानेवाला अपनानाम लिखतातो उसकी सरलता जानीजाती ॥

और महाभारत के श्लोकोंका पाठभी बराबर मिलना चाहियेथा वो सबनहींमिलता अतः जिनश्लोकोंका पाठ भारतश्लोकोंके बराबरहै वोश्लोक माननीयहैं अन्यश्लोक माननीयनहीं होसक्ते क्योंकि भारतकेनामसे छलकर किसीने बनाडालेहैं ॥

हेमित्र—महाभारतको क्या तुमने पढ़ानहीं, विचारानहीं, यदि तुमने भारतको विचाराहोता और यिहश्लोकभी भारतमें ऐसेहीहोते तो तुम इतिहाससमुच्चयकानाम क्यों महाभारतकेही उसपर्वकानाम और अध्यायां-

कश्लोकांक लिखदेते वो न लिखनेसें तुमाराभी छलही प्रकटहोताहै महाभारतमें युधिष्ठिर और भीष्मजीकेमांसविषयक प्रश्नउत्तर पर्व १३ वेंकेअध्याय ११६वेंमेंहैं वहांपरश्लोकोंका ऐसापाठहै देखो--

महाभारत प्र० ६४---युधिष्ठिर उवाच-इमेवैमानवालोके नृशंसामांसगृद्धिनः। विसृज्यविविधान् भक्ष्यान् महारक्षोगणाइव ॥प० १३॥अ० ११६॥१ अपूपान्विविधाकारान् शाकानिविविधानिच। खाण्डवान्रसयोगान्न तथेच्छन्तियथामिषम् २॥

अर्थ---युधिष्ठिरजीने कहा-हेपितामहजी लोकमें यिहमनुष्य क्रूर महाराक्षसोंकीन्यांई नानाविधभक्ष्यपदार्थोंको त्यागकर मांसकी अभिलाषा वालेहैं ॥ १ ॥ नानाआकारवाले मालपूडोंको नानाप्रकारके शाकोंको रसदार पकवानोंको वोमनुष्य वैसे नहींचाहते जैसेमांसको चाहतेहैं ॥

भीष्मउवाच महाभारत प्र० ६५---एवमेतन्महाबाहोयथावदसिभारत। नमांसात्परमंकिञ्चिद् रसतो विद्यतेभुवि ॥ १३ ॥ ११६ ॥ ७ ॥

हेमहाबाहो युधिष्ठिर---जैसेतूंकहताहै यिहऐसेहीहै कि पृथ्वीमें कोई वस्तु मांससें श्रेष्ठरसवालानहींहै।

महाभारत प्र० ६६---क्षतक्षीणाभितप्तानां ग्राम्यधर्मरतात्मनाम्। अध्वनाकर्षितानांच नमांसाद्विद्यतेपरम् ॥ ८ ॥

अर्थ जखमवालेको, क्षयरोगसेंपीडितजनको, मैथुनमेंरागवालेगृहस्थों को, मार्गसेंकृशहुएजनोंको, मांससेंअन्यवस्तु श्रेष्ठहितकरनहींहै अर्थात् इन चारजनोंको मांस अतिहितकारीहै ॥

महाभारत प्र० ६७ सद्योवर्द्धयतिप्राणान् पुष्टिमग्र्यां दधातिच । नभक्ष्योऽभ्यधिकःकश्चिन्मांसादस्ति परंतप ॥ १३ ॥ ११६ ॥ ९ ॥

अर्थ प्राणोंको अर्थात् आयुको शीघ्र बढावेहै, अत्यन्तपुष्टिकोकरैहै हेपरंतपयुधिष्ठिर मांससेंश्रेष्ठ कोईखानेयोग्यवस्तु नहींहै ॥

हेमित्र-देखोयिह महाभारतके श्लोकहै जिनका पर्वांकअध्यायांक श्लोकांकदिखादियाहै, इनमेंदादियेभीष्मजीने मांसकेकसेगुणकेहैं ॥

हेभ्रातः—भीष्मजीनेहीनहीं किंतु आर्षग्रन्थचरकसंहितामें महर्षिचरक जीनेभी देखोमांसके कैसेश्रेष्ठगुण कहेहैं ॥

चरकसंहिता प्र० ६८—अतोऽन्यथाहितंमांसं बृंहणं बलवर्द्धनम् । प्रीणनःसर्वभूतानां हृद्योमांसरसः परम् ॥ अ० २७ ॥ ३०५ ॥

चरकसंहिता प्र० ६९—शुष्यतांव्याधियुक्तानांकृशानांक्षीणरेतसाम् । बलवर्णार्थिनांचैव रसंविद्या द्यथामृतम् ॥ ३०६ ॥

चरकसंहिता प्र० १००—सर्वरोगप्रशमनं यथास्वं-विहितंरसम् । विद्यात्स्वर्यंबलकरं वयोबुद्धीन्द्रि यायुषाम् ॥ ३०७ ॥

अर्थ—यहांपूर्वश्लोकमें जोकहा कि—मृतहुएअजआदिकोंका मांस बाल वा वृद्ध वा विषसें वा सर्पादिकसें मरेकामांस' ऐसेमांसोको नहीं खाए (अतोऽन्यथा) इनमांसोंसें अन्यप्रकारका जोमांसहै वो हितकारी है वीर्यकावर्धकहै बलका वर्धकहै ॥

अब मांसके रसकेगुण कहतेहैं—मांसका रस सबजीवों को तृप्तकरेहै, अतिरुचिरहै ॥३०५॥ क्षयरोगवालोंको, रोगीजनोंको, कृशजनोंको, क्षीण वीर्यपुरुषोंको, बलकेअभिलाषीजनोंको, रूपकेअभिलाषीजनोंको, मांसका रस अमृतकेतुल्यजानों ॥ ३०६ ॥ यथायोग्यबनायाहुआ मांसका रस सर्वरोगोंकोनाशकरेहै, स्वरको सुन्दरकर्ताहै, अवस्थाको बुद्धिको इन्द्रियोंको आयुको बलदेनेवाला मांसकारसहै ॥ ३०७ ॥

हेमित्र—महर्षिचरकजीने तथा भीष्मपितामहजीनेतो मांसके व मांसके रसके ऐसेश्रेष्ठ गुणवर्णनकरेहै इनसेंविरुद्ध तुमारालेख वा इतिहाससमुच्चयके कर्ताकालेख असत्यहीहै अतः महर्षिचकरजीसें तथा भीष्मजीसें विरुद्ध लिखनेवालेही निन्दाकेयोग्यहैं ॥

पूर्वपक्षी०—नमांसमायुषोहेतु नारोग्यस्यनचौजसः। दैवंकारणमेतेषां साक्षादेवहदृश्यते ॥ इति० स० ॥ अ० २६ ॥ ६ ॥ मांसाशिनोपिदृश्यन्ते रोगार्त्ताभृशदुर्बलाः । अमांसभोजिनोऽरोगा बलवन्तःसुखान्विताः ॥ १० ॥

हेयुधिष्ठिर—मांसआयुके वढ़नेकाकारणनहींहै नीरोगताका और बल काभी कारणनहींहै किंतु यहसब प्रारब्धसें प्राप्तहोतेहैं यह साक्षात् देखनेमें आताहै ॥६॥ हम देखतेहैं कि—अनेकजीव मांसखातेहैं परन्तु बहुतसें रोगों

सें मिलेहुएहैं एवं बलसेंभी शून्यहैं, केईजीव सर्वथामांस नहींखाते किंतु नीरोग बलवान्हैं तथा सुखीप्रतीतहोतेहैं ॥१०॥ इससें सिद्धहोताहै कि—बल नीरोगताऽऽदिलियेभी मांसका खाना सर्वथामूर्खताहै ॥

आस्तिक—इनश्लोकोंमें यदि कोईहोर भक्ष्यवस्तु आयुनीरोगताबलका कारणकहतेतो तुमको यिहश्लोकलिखनेयोग्यथे परंतु इनमें आयुनीरोगता बलकाकारण प्रारब्धकहाहै अतः सम्यक विचारें तो इनदोनोंश्लोकों में आयुका नीरोगताका बलका कारणमांसकहाहै ॥

जैसेकोईकहै कि—**म्रियमाणे नचौषधंफलति,,** मरण समीप अर्थात् प्रारब्धक्षयहुएपुरुषमें औषध फल नहींकर्ता, इसकथनका यिह तात्पर्य्य नहींहोसक्ता कि—औषधका कुछफल नहींहोता किंतु इसकथनका यिह तात्पर्य्यहै कि—औषधका फलतोहै परंतु प्रारब्धक्षीणहुए औषधका फल नहींहोता ॥

ऐसेही इनतुमारेलिखे श्लोकोंका तात्पर्य्य स्पष्टहीहै कि—आयुका नीरोगताका बलका कारणमांसहै परंतु प्रारब्धबिना आयु नीरोगता बलका कारण मांसनहीं क्योंकि—प्रारब्ध साधारण कारणहै जो सर्व कार्यकाकारणहोवे वो साधारणकारणकहियेहै अतः प्रारब्धकीसहायतासें ही सर्वफलहोतेहैं प्रारब्धसेंबिना तो औषधोंकाभी होरकिसीकाभी कोईफलनहीं होता, प्रारब्धक्षयहुए भ्रातामित्रआदिकभी मुख फेरलेतेहैं, औषधभी गुण नहींकर्ता, लाभकी जगहभी हानीहोजातीहै तो मांसकागुण नहुआतो कोई आश्चर्य्यनहींहै जैसेजगतमें प्रसिद्धहीहै कि—**भाग्यहीनखेतीकरे या बैलमरे या सोकापड़े ॥**

अतः योग्यहै कि—श्रुतिस्मृतिओंसें विहित आचारकर पुण्योंकासम्पादन करे और चरकसंहिताऽऽदिकोंमें जबमांसके आयुवर्द्धन सर्वरोगप्रशमन बल

आदिकगुणकहेहैं तो उनआर्षवाक्यनको, दुराग्रहकर न मानना मूर्खताहीहै

पूर्वपक्षी स्वच्छन्दवनजातेन शाकेनापिप्रपूर्य्यते।

तस्यैवोदरस्यार्थे कःकुर्यात्पातकंनरः इ० अ०२८॥

१५॥ स्वच्छन्द बनमेंहोनेवाले शाकसेंभी पेटभरा जाताहै तो फिर उसके वास्तेकौनपुरुष पापकरे १५

आस्तिक०—कईवार प्रबलप्रमाणोंसे सिद्धकरचुकाहुं कि–अविहितमांस को नहींखानाचाहिये, और देखो प्रमाणांक ३१ आदिकोंको। विहितमांसके खानेसे पाप नहींहोता प्रत्युत देखोप्रमाणांक ८१ आदिकोंको विहितमांस के नहींखानेसें अतिपाप होताहै अतः गृहस्थजनोंने वृथामांसको त्यागकर विहितमांसको अवश्यखानाचाहिये॥

पूर्वपक्षी०—अब भीष्मजी युधिष्ठिरको बहुतसे ऋषिओंकी सभाहोकर आपसमें मांसकेभक्ष्याभक्ष्यके विषयमें जो निर्णय, फैंसलाहूआथा उसको सुनातेहैं कि किस २ ऋषिने मांसके विषयमें क्या२ कहाथा महाभारतान्त-र्गत इतिहाससमुच्चयमें लिखाहै कि —योऽहिंसकानिभूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया॥ कृष्णद्वैपायनःप्राह स्थावरत्वंसगच्छति॥ ३, अ, २८॥२७॥ सभामें पहिली व्यासजी की सम्मति–जो निरपराधजीवोंको अपनेसुखकी कामनासें मारताहै वह मर कर वृक्ष बनताहै॥

आस्तिक०—यदि इत्यादिश्लोक महाभारतकेहोते तो तुम पर्वाके अध्यायांक श्लोकांक लिखते थेतो तुमने लिखेहीनहीं अतः यिह श्लोक प्रमाण रूप नहींहै तथापि स्मृतिओंमें व्यासप्रभृतिमहर्षिओंके सम्मुख अपने २ जो मांसभक्षणमें निर्णय प्रकट करेहैं उनस्मृतिरूप प्रबलप्रमाणोंको मैं दिखलाताहुं॥

अनेकऋषिओंके समक्ष व्यासजीका निर्णय प्रथम देखो ॥

व्यासस्मृति– नाश्नीयाद्ब्राह्मणोमांस मनियुक्तः कथंचन ॥ क्रतौश्राद्धेनियुक्तोवा अनश्नन्पतति द्विजः अ,३॥५५॥ अर्थ प्रमाणांक ८२ में लिखचुकाहूं ॥ इस श्लोक में व्यासजी कहतेहैं कि, विधिसें विना ब्राह्मण मांसको नहींखाए ॥ यज्ञमें और श्राद्धमें द्विजपुरुष मांसको नहींखाए तो पतित होजाताहै अर्थात् वृथामांसके खानेका निषेधकरके विहितमांसके खानेकी आवश्यकता व्यास जीकहतेहैं, यिह व्यासजीका निर्णयहै वो तुमारेलिखेश्लोकमेंभी कहाहैकि आत्मसुखेच्छया,, अपने सुखकी इच्छाकर अर्थात् देवताऽऽ-दिकोंके निमित्तसेंविना जो वृथाहिंसाका कर्ताहै वो मरकर वृक्ष बनताहै, विहितहिंसाके करणेवाला वृक्ष नहीं बनसक्ता क्योंकि देखो प्रमाणांक ६६ में विहितहिंसाका तो दोनोंको उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही कहाहै ॥

पूर्वपक्षी०—संतप्यतितपोऽजस्रं यजतेचददातिच ।
मधुमांसनिवृत्तोयः प्रोवाचेदंबृहस्पतिः ॥२८॥
यावज्जीवंतुयोमांसं विषवत्परिवर्जयेत् ॥
वसिष्टोभगवानाह स्वर्गलोकंसगच्छति ॥२९॥
योभक्षयित्वामांसानि पश्चादपिनिवर्तते ॥
जमदग्निर्जगादैवं सोऽपिस्वर्गतिमाप्नुयात् ।३०।
सुवर्णदानंगोदानं भूमिदानंतथैवच ॥

नोत्तमंप्राणदानात्स्या दित्युवाचपराशरः ।३१।

बृहस्पतिजी–जो, मधु, शराब मांसका भक्षण नहीं कर्ता वह नित्यके तप और दान करनेवालाहै अर्थात् विनातप और दानके दोनोंका फल पाताहै ॥ २८ ॥

वसिष्ठजी–जो आयुभर मांसका विषकीन्यांई त्यागकर्ताहै वह स्वर्गको जाताहै ॥ २९ ॥

महर्षिजमदग्निजी—जोमांसकोखाकरभी पीछे छोड देताहै वहभी स्वर्गको प्राप्त होताहै ॥ ३० ॥

श्रीवेदव्यासजीके पिता पराशरजी–सोनेका दान गौका दान, भूमिका दान, यहतीनों महादान मानेजातेहैं परन्तु एक प्राणोंके दानके बराबर यहतीनों नहींहोसक्ते क्योंकि–प्राणोंका दान सबसे उत्तमहै ॥३१॥

आस्तिक०—हेमित्र तुम इतिहाससमुच्चयमेंही रहे पंडितमानीहुएभी महाभारततक नहींपहुंचसके–महाभारतआदिआर्ष वाक्यनकी व्यवस्थाकरी जातीहै, इतिहाससमुच्चयकी व्यवस्थाकी आवश्यकता नहींहै तथापि प्रबल प्रमाणोंसे उत्तरदेताहूं व्यवस्थादिखलाताहुं ॥

बृहस्पतिके विषयमें तो साक्षात्वेद प्रमाणहै–
कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता प्र० १०१–

बार्हस्पत्यँ शितिपृष्ठमालभेत ॥ काण्ड २॥ प्रपाठक १॥ अनुवाक ६॥ १॥ अर्थ—बृहस्पतिदेवतानिमित्तक श्वेतपृष्ठवाले अज आदि पशुको मारे ॥ (देवताकेनिमित्त पशुके मारणका नाम आलमनहै)॥

भगवद् व्यासजीके प्रपितामह, महर्षिपराशरजीके पितामह, साक्षात् ब्रह्माके पुत्र महामुनिवसिष्ठजीके निर्णयको अब देखो—

वसिष्ठस्मृति प्र० १०२— **पितृदेवताऽतिथिपूजायां पशुंहिंस्यात् ॥** अ० ४॥१ ॥ अर्थ–पितरोंकी देवतोंकी अतिथि की सेवालिये पशुको मारे ॥

देखो देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर पशुके मारणका वसिष्ठजी विधान करतेहैं अतः तुमारेलिखेश्लोकोंमें वृथामांसके त्यागका फल कहाहै ॥ और देखो प्रमाणांक ८३ आदिकोंको विहितमांसके नहीं खानेसें नरकादिकी प्राप्ति वसिष्ठआदिमहर्षियोंनें कहीहै अतः धर्मात्मागृहस्थजनों ने वृथामांसका त्यागकर्के विहितमांसको अवश्यखाना चाहिये ॥

व्यासजीकेपिता महर्षिपराशरजीकी सम्मति—

बृहत्पाराशरीय प्र० १०३—**भक्ष्यंप्राणात्ययेमांसं श्राद्धयज्ञोत्सवेष्वपि ॥** अ० ४ ॥ ३१६ ॥

अर्थ—प्राणान्तसमय अर्थात् औषधलिये मांसभक्ष्यहै और श्राद्धमें यज्ञमें उत्सवोंमेंभी मांसभक्ष्यहै ॥

और प्रमाणांक ७५ मेंभी पराशरजीनें नित्यपंचमहायज्ञनमें मांसादिकों सें पितरोंकी देवतोंकी अतिथिमनुष्योंकी तृप्तिकरणेकर स्वर्गप्राप्तिकाविधान कराहै ॥

इत्यादिक प्रबलप्रमाणोंसेंभी और पहिलेभीसिद्ध होचुकाहै कि–विहित पशुहिंसासें और विहितमांसभक्षणसें कोईदोष नहींहोता प्रत्युतश्रेष्ठफलही होताहै अतः तुमारेलिखे श्लोकोंमेंवृथामांसके त्यागकाहीफलकहाहै क्योंकि प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर अतिदोषकहाहै ॥

मनुस्मृति प्र० १०४ **यज्ञार्थंब्राह्मणैर्वध्याः प्रशस्ता मृगपक्षिणः । भृत्यानांचैववृत्त्यर्थ मगस्त्यो ह्याचरत्पुरा ॥** अ० ५ ॥ २२ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० १०५ यज्ञार्थमित्याद्यर्धश्लोकोऽर्थवादएवतत्रहिबधः प्रत्यक्षश्रुतिविहितत्वादेवासिद्धः ॥

इसपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० १०६—यज्ञार्थं पाक यज्ञहविर्यज्ञ सोमयज्ञसिद्ध्यर्थं बध्याः स्वयं ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० १०७ ब्राह्मणादिभिर्यागार्थं प्रशस्ताः शास्त्रविहिता मृगपक्षिणोबध्याः, भृत्यानांचावश्यभरणीयानां वृद्धमातापित्रादीनां संवर्धनार्थम् यस्मादगस्त्योमुनिःपूर्वंतथाकृतवान् परकृतिरूपोऽयमनुवादः ॥

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० १०८—भक्ष्यप्रसंगेनाहिंसां कुर्वित्यनुजानाति यागार्थमिति सदाचारं प्रमाणयति अगस्त्यइति ॥

इसपर नन्दनाचार्यका मानवव्याख्यान प्र० १०९—

भक्ष्यत्वेनानुज्ञातानां मृगपक्षिणांयज्ञार्थं भृत्यार्थंच वधोब्राह्मणानामपिनिर्दोषइत्याह यज्ञार्थम् इति ॥

इसपर रामचंद्रकी टीका प्र० ११०—अगस्त्यः भृत्यानांपित्रादीनांतृप्त्यर्थं पुराआचरत् ॥

इनटीकाओंसहित मनुश्लोकका अर्थ—भक्ष्यकेप्रसंगसें इसश्लोकमेंविहित हिंसाकी मनुजी सम्मतिदेतेहैं ॥

यज्ञनिमित्त और पालनपोषणयोग्य वृद्धमातापिताऽऽदिकोंकी जीविका निमित्तभी शास्त्रविहितमृगपक्षी ब्राह्मणोंनेआप मारणेचाहिये, इसमेंश्रेष्ठाचार काप्रमाणदेतेहैं कि—अगस्त्यमुनिजीभी पहिलेवैसेंही करतेभये इसमेंब्राह्मण को कोईदोषनहींहोता ॥

मेधातिथिजी कहतेहैं कि—पूर्वअर्धश्लोक अर्थवादहै, श्रेष्ठगुणकाकथनहै क्योंकि तहांयज्ञमें मृगआदिकोंकी हिंसा साक्षात् श्रुतिविहितहोनेसें सिद्धहीहै हेमित्र—पालनपोषणयोग्य ६ कहेहैं देखो—

शब्दस्तोममहानिधि—मातापितागुरुःपत्नी त्वपत्यानिसमाश्रिताः। अभ्यागतोऽतिथिश्चाग्निः पोष्यवर्गउदाहृतः ॥

अर्थ—माता पिता गुरु स्त्री सन्तान स्वाश्रित अभ्यागत अतिथि अग्नि, यिह, पोष्यवर्गहै पोषणयोग्यका समुदायहै ॥

पूर्वपक्षी०—यद्यपि और ऋषिओंकीभी बहुतसी सम्मतियेमांसनिन्दा और हिंसाकी निन्दामेंहैं तथापिग्रन्थबढ़नेके भयसें सर्वनहीं लिखीगई ॥

आस्तिक०—हेमित्र दोनोंप्रकारकेवाक्य लिखकरव्यवस्था कीजावेतो सम्मति प्रकट होसक्तीहै, दुराग्रहसें एकतर्फेवाक्य लिखनेकर सम्मति प्रकट

नहींहोसक्की हेवाले तुमनेतो केईछलकर लेखलिखाहे अतःऋषिओंकी सम्मति प्रकटकरनेमें तेरा आधिकारही कैसेहोसक्काहे ॥

ऋषिओंकीसम्मतिएंतो तुमकैसेछोड़सक्केहो मुसलमानोंके वाक्यतो तुमने लिखडाले, जिनमुसलमानोंकी शराहमें पीरपैगंबर सैयदफ़कीर अमीरगरीब औरतमरद बची बचे बूढ़ेजवान वगैहरासबकोलिये मांसखानाजैजहै, यिह सबलोकजानतेहींहैंतो उनकेभीअनुपयोगीवाक्य लिखदेने, यिहक्या उपहास योग्यतानहींहे ॥

पूर्वपक्षी०—अब मांसकेखानेमें थोड़ादोषमाननेवाले इनऋषिओंकी बात पर ध्यानदेंगेतो समझेंगे कि—इसमें कितनादोषहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र जिनोंने श्रुतिस्मृतिओंका सम्यक् विचार नहींकरा वोतुमारेलिखे वृथामांसविषयके अविहितमांसविषयके श्लोकोंको देखकर समझेंगे कि—मांसखानेसें दोषहोताहै परंतु मांसभक्षणके विधायक वेदोंके संहिताभाग ब्राह्मणभाग उपनिषद्भाग सायणभाष्यआदिकोंके वाक्यनको और प्रमाणांक ३१ आदिकोंको देखेंगेतो अवश्यंकहेंगे कि विहितमांसखाने सें दोष नहींहोता ॥

मनुस्मृति आदिकोंके तुमारेलिखे वृथामांसविषयके श्लोकोंके उत्तररूप प्रमाणोंको और दोनोंप्रकारके वाक्यनकी व्यवस्थाको देखेंगेतो कहेंगे कि—यद्यपि अविहितमांसके वृथामांसकेखानेसें दोषकहाहै तथापि विधिसेंविहित मांसके खानेकरदोषनहींहोता प्रत्युतप्रमाणांक ८१ आदिकोंको देखकर कहेंगे कि—विहितमांसकेतो नहींखानेसेंअतिदोष शास्त्रोंमें कहाहुआहै, नास्तिकजीने वृथामांसविषयके श्लोकदिखलाकर धोखादियाथा परंतु परमेश्वरानुग्रह हुआ कि—उत्तरप्रमाणको देखकर नास्तिकजीके धोखेसें भलेबचे भले बचे ॥

पूर्वपक्षी०—और यदिकिसीइतिहासमें मांसकी चर्चा निकसभीआवेतो बहूनामनुग्रहोन्यायः जिसमेंबहुतयथार्थवक्ताओंकी सम्मतिहो वहीबातठीक होतीहै क्योंकि वहकर्म धर्मबुद्धिसेंनहींहुआ और नांही धर्मशास्त्रवत् इतिहास प्रभुशास्त्रहींहै इसयुक्तिसेंभी मांसखाना छोड़देनाचाहिये क्योंकि—मांसके निषधमें बहुतसेंऋषि सहमतहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र—किसीइतिहासमें मतकहो किंतु व्यासबाल्मीकी प्रभृति महर्षिओंके रचितमहाभारतरामायणआदि सर्वइतिहासों में मांसका विधानहैं ॥

और 'वहकर्म धर्मबुद्धिसें नहींहुआ' यिहतुमाराकथनभी असत्यहीहै क्यों असत्यहै तथाहि सुनिये—

१—जब चित्रकूटमें श्रीरामजीनें कुटी बनवाई तबशास्त्रविधिसें धर्म बुद्धिकर कृष्णमृगकेमांससें 'वास्तुकर्म' गृहप्रतिष्ठा करीथी देखो—

बाल्मीकीय रामायण प्र० १११—ऐणेयंमांसमाहृत्यशालांयक्ष्यामहेवयम् । कर्तव्यंवास्तुशमनं सौमित्रे चिरजीविभिः ॥ काण्ड २ ॥ सर्ग ५६ ॥ २२ ॥

अर्थ—हेलक्ष्मण कृष्णमृगके मांसकोलेकर हम कुटिका यजन करेंगे क्योंकि चिरंजीवीपुरुषोंने गृहके दोषकी शान्तिकरणी योग्यहै ॥

बा०रामायण प्र० ११२—मृगंहत्वाऽऽनयक्षिप्रं लक्ष्मणेहशुभेक्षण । कर्तव्यःशास्त्रदृष्टोहि विधिर्धर्ममनुस्मर ॥ २३ ॥

अर्थ— मृगकोमारकर यहांशीघ्रल्याओ जिससें शास्त्रमेंदेखा विधि करने योग्यहै हेशुभदृष्टेलक्ष्मण धर्मको स्मरणकर ॥

बा० रामायण प्र० ११३—चकारचयथोक्तंहि तंरामः पुनरब्रवीत् । ऐणेयंश्रपयस्वैत च्छालांयक्ष्यामहेवयम् ॥२५॥

बा० रामायण प्र० ११४—त्वरसौम्यमुहूर्त्तोऽयंध्रुवश्च दिवसोह्ययम् ॥ सलक्ष्मणःकृष्णमृगं हत्वामेध्यं प्रतापवान् ॥२६॥

बा० रामायण प्र० ११५— अथाचिक्षेपसौमित्रिःसमिद्धेजातवेदसि ॥ तत्तुपक्वंसमाज्ञाय निष्टप्तंछिन्नशोणितम् ॥२७॥

बा० रामायण प्र० ११६—लक्ष्मणःपुरुषव्याघ्र मथराघवमब्रवीत् ॥ अयंसर्वःसमस्ताङ्गः शृतः कृष्णमृगोमया ॥२८॥

बा० रामायण प्र० ११७—देवतादेवसंकाश यजस्वकुशलोह्यसि ॥२९॥ बभूवचमनोह्लादो रामस्या-

मिततेजसः ॥ वैश्वदेवबलिंकृत्वा रौद्रंवैष्णव-
मेवच ॥३१॥

वा० रामायण प्र० ११८—वास्तुसंशमनीयानि मङ्गला-
निप्रवर्तयन् ॥ जपंचन्यायतःकृत्वा स्नात्वानद्यां-
यथाविधि ॥ पापसंशमनंराम श्चकारबलिमुत्त-
मम् ॥३२॥

अर्थ—जैसे रामजीनें कहा वैसेही लक्ष्मणनें किया फिर रामजीनें कहा कि—इसकृष्णमृगके मांसको पकाओ हम गृहका यजन करेंगे ॥२५॥हेसौम्य लक्ष्मण शीघ्रकर यिह मुहूर्त व दिवस ध्रुवसंज्ञावालाहै फिर सो प्रतापी लक्ष्मण पवित्रकालेमृगको मारकर ॥२६॥ फिर रुधिरस्रवणसें रहितहुए उसमृगको लक्ष्मणजी प्रज्वलितअग्निमें फेंकतेभए पुनः अतिगर्म उसमांसको पकाहुआ जानकर ॥२७॥ लक्ष्मणजी पुरुषोंमें श्रेष्ठ रामजीको कहतेभए कि—यिह सब समस्तांग कृष्णमृग मैंने पकायाहै॥२८॥ हेदेवसदृशरामजी देवतों का यजनकरो, जिससें आप यजनमें कुशलहैं॥२९॥तब अपरिमित तेजवाले रामजीके मनमें ह्लाद होताभया रामजी वैश्वदेवबलिको और रुद्रदेवके विष्णुदेवकेनिमित्त बलिकोकर्के ॥३१॥ गृहदोषकी शान्तिलिये मंगलपाठ आदि कर्तेभए विधिसें जपकर्के यथाविधि नदीमें स्नानकर्के रामजी पापोंके शमनका हेतु उत्तमबलिको कर्तेभए ॥३२॥

देखोहेमित्र—श्रीरामजीनें;शास्त्रविधिसें धर्मको स्मरणकर्के कृष्णमृगके मांससें गृहप्रतिष्ठा कीथी ॥

२—जब युधिष्ठिरको संबन्धीओंके विनाशजन्यपापोंसें भयहुआ तब उन पापोंके निवारणलिये व्यासजीके उपदेशसें युधिष्ठिरनें अश्वमेधयज्ञ कराथा उसयज्ञमेंदेखो ॥

महाभारत प्र० ११९—यूपेषुनियताचासी त्पशूनां-त्रिशतीतथा ॥ अश्वरत्नोत्तरायज्ञे कौन्तेयस्य-महात्मनः ॥ पर्व १४॥ अ० ८८॥३५॥

महाभारत प्र० १२०—श्रपयित्वापशूनन्यान् विधिवद्द्विजसत्तमाः॥ तंतुरङ्गंयथाशास्त्रमालभन्तद्वि-जातयः ॥ १४॥८९॥१॥

अर्थ—कुन्तीकेपुत्र महात्मायुधिष्ठिरके यज्ञमें ३००पशु और उत्तमअश्व यूपोंमें बांधेगए ॥३५॥ होरपशुओंको पकाकर द्विजोंमेंश्रेष्ठब्राह्मण यथाशास्त्र विधिसें उस अश्वको मारतेभए ॥

हेमित्र—अब कहिये कि-व्यासजीके उपदेशसें, व्यासादि महर्षिओंके प्रत्यक्ष, श्रीकृष्णजीके विद्यमानहोते, हस्तिनापुर श्रीगंगाजीके तटपर, धर्मावतारयुधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञमें जो ३०१ पशुओंका बलिदान करागया तो यिहभी तेरीदृष्टिमें क्या धर्मबुद्धिसें कर्म नहींहुआ किंतु नास्तिकतासें छलकर तुमारा लेखही क्या धर्मबुद्धिसें हुआहै ॥

होर जो तुमने कहा कि-जिसमें बहुतयथार्थवक्ताओंकी सम्मतिहो वहीबात ठीकहोतीहै नांही धर्मशास्त्रवत् इतिहास प्रभृशास्त्रहीहै इसयुक्तिसे भी मांसका खाना छोड़देना चाहिए क्योंकि-मांसके निषेधमें बहुतसे ऋषि सहमतहैं ॥

सोयिह तुमारा कथनभी समीचीननहीं क्योंकि यद्यपि इतिहासोंमें कहीं कीटका, कहींपशुका, कहींपक्षीका, कहींअसुरका, कहींव्याधका, कहीं वैश्यका, कहीं राजाका, कहीं ऋषिका, कहींकिसीका, कथन चलपडताहै अतः स्मृतिओंकी न्याई इतिहास समर्थ नहींहोसक्ता तथापि योगजधर्मयुक्त व्यास पराशर अत्रि याज्ञवल्क्य वसिष्ठआदिक महर्षिओंके रचितस्मृतिग्रन्थों के तो तुम प्रमाणही नहीं लिखसके—

और जोतुमने एकमनुस्मृतिकेश्लोकलिखेहैंवो वृथामांसविषयकेहैं और मनुस्मृतिमेंभीजो मांसकीशुद्धिके मांसभक्षणके मांसभक्षणमें निर्दोषताके, और विहितमांसकेनहींखानेकर अतिदोषके प्रतिपादकश्लोकहैं उनमेंसेएक श्लोकभीतुमनेनहींलिखा, और नांहीदोनोंप्रकारके श्लोकोंकी व्यवस्थाकी तो मनुजीकीसम्मतिकैसे प्रकटहोसक्तीहै अतः मनुजीकीसम्मतिभी तुमसेंप्रकट नहीं होसकी ॥

होर व्यासस्मृति वसिष्ठस्मृतिंआदिकोंका कोई वाक्य तुमने नहींलिखा औरं श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थनमेंसें कोईसूत्रभी तुमने नहींलिखा। अतः मांसनिषेधमें बहुतसे ऋषि सहमतहैं,, यिह तुमारा कथन अत्यन्त असत्यहीहै ॥

हेमित्र—विहितमांसभक्षणके विधायक मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति अत्रिस्मृति लिखितस्मृति वसिष्ठस्मृति बृहत्पाराशरीय श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रआदि कोंके अनेक अनेक वाक्यनसें महर्षिओंकी सम्मतिएं दिखाचुकाहूं और दिखावुंगा इस्सेंविहित मांसके खानेमें सर्वमहर्षि सहमतहैं इसीसें प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहित मांसके नहींखानेसें अतिदोष मनुव्यासवसिष्ठादिक महर्षिओं ने कहेहैं अतः आस्तिकगृहस्थजनोंने विहितमांसको अवश्यंखानाचाहिये ॥

पूर्वपक्षी०—जबके इसतरह सबमहात्माओंने मांसखानेकी निन्दाकीहै तो फिरभीजो मांससें नहींहटते और उपकारकरनेवाली गौमाताके प्राण नहींबचाते उनसेंबढ़कर कृतघ्न दूसरा कौनहोसक्ताहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र—मनुव्यासवसिष्टादिक महर्षिमहात्माओंने तो विहित मांस के नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिकहीहै अतः उनमहर्षिमहात्माओंनेंतो विहितमांसके त्यागकी निन्दाकीहै और अविहितमांसके खानेकीनिन्दाकीहै व वेदानुसारी विहितमांसके भक्षणकाविधानकराहै ऐसेमहर्षिओंकेवाक्यनको देखकरभी जो विपरीतअर्थको कर्तेहैं लिखतेहैं उनसेंबढ़कर नास्तिक दूसरा कौन होसक्ताहै ॥

हेभ्रातः—मनुव्यासवसिष्ठ आश्वलायन कात्यायनप्रभृति योगारूढ़ महर्षिजन क्या तेरीदृष्टिमें महात्मानहींथे किंतु एकतुम और एकदो तुमारे श्रद्धेय बस इसजगत्में इतनेही चार महात्माहैं ॥

और गौओंकोयथाशक्ति रखनाचाहिये उनकी सेवा कीचाहिये क्योंकि जब गोपालोंके गृहमें कृष्णजीरहे तबकृष्णजीभी गौओंको चरातेरहेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—हां तुमनेआप तो शास्त्रकागन्धतक नहींलिया केवल सुनी सुनाईबातोंपरही विश्वास रखलियाकर्तेहो ॥

आस्तिक०—हां तुमने ठीकशास्त्रपढ़ेहैं जिससेंस्मृतिओंके पाठवदलादिये और केईजगें धर्माधर्मकेनिर्णयमें धोखेदिये ऐसेशास्त्रवेतासें अनपढ़ ही इच्छेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—वेदमेंआज्ञानहींहै बल्कि एकप्रकारसें निपेधकराहै ।

आस्तिक०-वेदोंके संहिताभागोंमें ब्राह्मणभागोंमें उपनिपद्भागोंमें मांसभक्षणकी अनेकजगें आज्ञा कीहुईहै परंतु तुम कहतेहो कि—"एकप्रकारसेंनिषेधकियाहै"

वोजो एकप्रकार तुमकहोगे तो उसकाविचार कराजावेगा परंतु तुमारीएक प्रकारकी कल्पनाहीअसत्यहै क्योंअसत्यहै तथाहीकहताहूं सुनिये ॥

मैंआपसें पूछताहूं कि—ईश्वर तो सर्वदासत्यसंकल्पहीहोताहै उससत्य संकल्पईश्वरने वेदमें मांसकानिषेधएकप्रकारसें क्योंकरा अर्थात् "किसीभीमनुष्य ने किसीभीपशुका वा पक्षीआदिकामांस नहींखाना" ऐसामांसखानेका स्पष्ट निषेधही क्योंनहींकरदिया ॥

ऐसेमांसके स्पष्टनिषेधकरणेमें ईश्वरको किसीका भयथा, वा ईश्वर सत्यसंल्प नहींथा, वा आस्तिकजनभी ईश्वरकेवाक्यको नहींमानतेथे, अथवा मांसभक्षणकी प्रवृत्तिकोमनुष्य झटितिनहींरोकसक्तेथे इस्सेंपरमेश्वरने मांसका स्पष्टनिषेध नहींकरा किंतुएकप्रकारसें निषेधकराहै ॥

इनमें प्रथमपक्ष तो समीचीननहीं क्योंकि— सर्वाधिकश-क्तिमान्होनेसें ईश्वरको किसीका भय नहींहै और द्वितीयपक्षभी असंभवहीहै क्योंकि सर्वजीवोंको सर्वकर्मोंके फलप्रदाताको व सर्वजगत्केउत्पादकको ईश्वरकहतेहैं, सर्वजीवोंको सर्वकर्मोंके विचि-त्रफलोंको असत्यसंकल्पजीव नहींदेसक्ता, तथाआकाशवायु अग्निजल भूमिनानाविधवन पर्वतसमुद्रसूर्यचन्द्रादिक विचित्रजगत्कोभी असत्यसंकल्प जीव नहींरचसक्ता इससेंजो सत्यसंकल्प नहींहै वोईश्वर नहींकहलायसक्ता ईश्वर तो सदासत्यसंकल्पहीहोताहै ॥

तृतीयपक्षभी असाधुहीहै क्योंकि—ईश्वरवाक्यको जोपुरुष नहींमानते वोपुरुष आस्तिक नहींकहलासक्ते किंतु जोईश्वरवाक्यनको सत्कारसेंमानतेहैं श्रद्धासे विचारतेहैं उनकेअनुकूलवर्ततेहैं वोही आस्तिक कहलायसक्तेहैं ॥

चतुर्थपक्ष कहोतो वोभी असत्यहीहै क्योंकि—यदि परमेश्वरको जगत्में विहितमांसखानेकी प्रवृत्ति वाञ्छित नहोती किंतु मांसकात्याग वाञ्छित होता तो जबपरमेश्वरने प्रथमब्रह्माको रचकर वेदप्रकटकरेथे तबआदिसेंही

मांसखानेका (कोई मनुष्य किसी पशुपक्षीआदिका मांसनहींखाए) ऐसा स्पष्ट निषेधही कराहोतातो तबआदिसेंही मांसखाने की प्रवृत्तिहोहीनसक्की ॥

दृष्टान्त—जैसे जबसें जैनमतचलाहै तबसेंही जैनीओंकेआदिगुरु जिन देवजीनेमांसखानेका स्पष्ट निषेधहीकराहै तबसें पहिलेसेंही जैनमतमें जैनीओं में मांसखानेकी प्रवृत्ति होहीनहीं क्योंकि जिनेदवजीको मांसखानकीप्रवृत्ति वाञ्छित नहींथी अतः आदिसेंही स्पष्ट निषेधकर दियाथा ॥

ऐवं यदि परमेश्वरनेभी वेदोंमें मांसखानेका स्पष्टनिषेधही केवलकरा होतातो मांसखानेकी आदिसें प्रवृत्तिही नहोती परंतु जिनदेवजीकीन्याई परमेश्वरनें वेदोंमें स्पष्टनिषेधतो कियानहीं प्रत्युतअनेकवाक्यनसें पशुवलि प्रदानकी और मांसभक्षणकी आज्ञाकीहै इस्सेंनिश्चयहोताहै कि—सर्वशक्ति-मान्सर्वज्ञ परमेश्वरको आस्तिकोंमें मांसखानेकी प्रवृत्तिवाञ्छितहै इस्सें एक प्रकारसें निषेधकियाहै,, ऐसीयिह तुमारी कल्पना असत्यहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—हम तुमको दृष्टान्तवचनही दिखाकर समझातेहैं **'पञ्चपञ्च-नखा भक्ष्याः,,** यहएकवचन शास्त्रमें लिखाहै इसका ऊपरसेंतो यहअर्थप्रतीत होताहै कि—पांच पांचनखोंवाले खाने चाहिये परंतु यहां पर परिसंख्याविधिहै जबअपनीइच्छासें प्रत्येकजीवके मांसकोखानेकेवास्ते मनुष्यप्रवृत्तहोताहै तबयहवचनप्रवृत्तहोताहै इसकाभावलक्षणाद्वारा यहहै कि अपंचनखवालोंको न खानाचाहिये इसकाकेवलइसीअंशमें तात्पर्य्यहै और में नहींहोसक्ता क्योंकि—मांसतो वहस्वयंहीखायाकरताहै तोफिर उसके वास्ते उसकोवेदने शिक्षाही क्यादेनीथी जैसेकोइअपनेआप मट्टीके खानेवाले अपनेपुत्रसेंकहे कि—पुत्रतूंगंगाजीकी मट्टीखायाकरतो इसवाक्यसें पिताका पुत्रको मट्टीखिलानेमें तात्पर्य्यसर्वथा नहींहै किंतु गंगाजीकीमट्टीमें दूसरी

मट्टीकेखानेसें रोकनेकाहीकेवल प्रयोजनहै ऐसेही "पञ्चपञ्चनखाभक्ष्या" इस वाक्यमेंभी जानो यहव्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै ॥

आस्तिक०—तुमनेकहा कि—'यहएकवचन शास्त्रमेंलिखाहै' हेमित्र पशुबलिप्रदान और विहितमांसभक्षणविषयकेतो शास्त्रोंमें हजारोंवचनहैं उनमेंथोड़ेसे मैंनेलिखेभीहैं औरकेईलिखूंभीगा उनसबवचनोंको छिपा कर तुमएकवचन क्यों कहतेहो ॥

और तुमनेकहा कि—जबअपनीइच्छासें प्रत्येकजीवके मांसखानेवास्ते मनुष्य प्रवृत्तहोताहै तबयिहवचनप्रवृत्तहोताहै" यिहतुम्हाराकथनभी असत्य हीहै क्योंकि—कोईभीआस्तिकमनुष्य प्रत्येकजीवके मांसखानेलिये प्रवृत्त नहींहोता किंतु जिनभेडबकगातिनिरआदिकोंके मांसको परम्परासें मनुष्यखातेआएहैं उनहीकेमांसको खानेलिये मनुष्यप्रवृत्तहोतेहैं ॥

औरजो तुमनेकहा कि—"पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः" यहांपर परिसंख्या विधिहै वोयिहतुम्हाराकथनभी अयुक्तहीहै तथाहि सुनिये—

१—महाभाष्यके प्रथमाह्निकमें भगवत्पतञ्जलिजीनेभी यहां नियम विधि मानाहै देखो—

महाभाष्य प्र० १२१—**भक्ष्यनियमेनाभक्ष्यप्रतिषेधोगम्यते पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याइत्युक्ते गम्यते एतदतोन्येऽभक्ष्याइति ॥**

अर्थ—भक्ष्यके नियमविधिसें अभक्ष्यका प्रतिषेध जानाजाताहै जैसे पांचनखवाले पांचभक्ष्यहैं ऐसेकथनकिये यिहजानाजाताहै कि—पांचनख वाले इनपांचोंते अन्यपांचनखवाले अभक्ष्यहैं इति ॥

२—नियमविधि और परिसंख्याविधिके लक्षणोंके विचारसेंभी यहां नियमविधिही संभवेहै तथाही कहताहुं सुनिये—

नियमविधिका लक्षण—**पक्षप्राप्तांशपूरको विधिर्नियमविधिः ॥** अर्थ—एकपक्षमें प्राप्तअर्थके अप्राप्तअंशको पूरण करणेवाले विधिको नियमविधि कहतेहैं ।

दृष्टान्त—**जिज्ञासुर्मोक्षशास्त्रश्रवणंकुर्यादिति नियमविधिः ॥** जिज्ञासुपुरुष मोक्षशास्त्रका श्रवणकरे ऐसायहनियम विधिहै क्योंकि–जिज्ञासुको परमात्माके ज्ञानलिये शास्त्रका श्रवणअपेक्षितहै वो एक मोक्षशास्त्रहै और एक अन्यशास्त्रहै अतः एकपक्षमें मोक्षशास्त्रका श्रवण प्राप्तहै एकपक्षमें अन्यशास्त्रका श्रवण प्राप्तहै, जिसपक्षमें अन्यशास्त्र का श्रवणप्राप्तहै उसपक्षमें मोक्षशास्त्रका श्रवण अप्राप्तहै इससें एकपक्षमेंप्राप्त मोक्षशास्त्रके श्रवणके अप्राप्तअंशको पूरणकरणेवाला यिहविधिहै अतः यिह नियमविधिहै ॥

ऐसेही—"**पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः ॥**" यिहनियमविधिहै क्योंकि–एकपक्षमें 'सेह गोह गेंडा कूर्म शश, इनपांचपंचनखवालों का भक्षणप्राप्तहै, एकपक्षमें बिडाल वानरप्रभृति अन्यपंचनखवालोंका भक्षण प्राप्तहै, जिसपक्षमें अन्यपांचनखवालोंका भक्षणप्राप्तहै उसपक्षमें इनपांचपंच नखवालोंका भक्षण अप्राप्तहै, अतः एकपक्षमेंप्राप्त पांचपंचनखवालों के भक्षणके अप्राप्तअंशका पूरणकरणेवाला यिहविधिहै अतः यिह नियमविधिहै

परिसंख्याविधिका लक्षण—**उभयप्राप्तावितरव्यावृत्तिबोधकोविधिः परिसंख्याविधिः ॥** दोअर्थोंकी प्राप्ति

हुए उनमें एकइतरअर्थकी व्यावृत्तिका बोधक जो विधि वो परिसंख्याविधि कहाजाताहै ।

दृष्टान्त—**जिज्ञासुर्मोक्षशास्त्रश्रवणाद्व्यतिरिक्त शास्त्रश्रवणं न कुर्य्यादिति परिसंख्या विधिः॥**

अर्थ—जिज्ञासुजन मोक्षशास्त्रके श्रवणसें भिन्नशास्त्रका श्रवण न करे, यिह परिसंख्याविधिहै क्योंकि–यिहविधि जिज्ञासुको इतरशास्त्रके श्रवणकी व्यावृत्तिका बोधकहै अतः परिसंख्याविधिहै ।

तात्पर्य्य यिहहै कि–जोवाक्य एकअर्थका विधान करे और अर्थसें इतरअर्थका निवारण करे वो नियमविधि कहियेहै ।

और जो दोअर्थोंमें एकइतरअर्थका साक्षात् निवारण करे वो परिसंख्या विधि कहाजाताहै "**पञ्च पञ्चनखाभक्ष्याः ॥**"

यिह वाक्य किसीका साक्षात्निवारण नहींकर्ता इस्से यिह परिसंख्या-विधि नहींहै किंतु यिह वाक्य सेह गोह गेंडा कूर्मशश, इन पांच पंचनखवालोंके भक्षणका विधानकरे है अर्थसें इनपांचोंते इतर वानरआदि-पंचनखवालोंके भक्षणका निवारण करेहै अतः यिहनियमविधिहीहै ॥

इसप्रकार विधिओंके लक्षणके विचारसेंभी और महाभाष्यके परमप्रमाणसेंभी यिह नियमविधिहै अतः हेमित्र परिसंख्याविधिका कथन तुम्हारा अयुक्तहीहै ॥

हेपाठको — आश्चर्य्यहै कि — वेदसूत्रस्मृतिआदिक ग्रन्थनमें पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधिवाक्य हजारोंहीहैं उनसबको छोड़कर नवीनपंडितजन „**पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः**„ इस एकविधिवा-

क्यमेंही विवादलिए बद्धकटि होजातेहैं होर हजारोंविधिवाक्यनका निर्णय नहीं कर्ते कि—यिह कौनविधिहै यिह कौनविधिहै ॥

हेपाठक—अपूर्वविधि, नियमविधि, परिसंख्याविधि, ऐसे तीनप्रकारके विधिवाक्यहोतेहैं उनमें नियमविधिका परिसंख्याविधिका लक्षण दिखाचुकाहुं अब देखो—अपूर्वविधिका लक्षण—**प्रमाणान्तरेणाप्राप्तार्थविधायकोऽपूर्वविधिः ॥** प्रमाणांतरसे अप्राप्तअर्थका विधायक वाक्य अपूर्वविधिकहिएहै जेसे दृष्टान्त कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता प्र० १२२—**यः प्रजाकामः पशुकामःस्यात् सएतं प्राजापत्यमजं तूपरमालभेत ॥** का० २ ॥ प्र० १ ॥ अनु० १ । ५ ॥

अर्थ—जोपुरुष सन्तानकी कामनावालाहो वा गौअश्वप्रभृतिपशुओंकी कामनावालाहो वो पुरुष इस प्रजापतिदेवतानिमित्तक शृंगरहितअजको मारे, इत्यादिक अपूर्वविधिवाक्यहै क्योंकि सन्तानकी और गौअश्वआदिपशुओंकी प्राप्तिलिए प्रजापतिब्रह्मादेवतानिमित्तक शृंगरहितअजका बलिप्रदान प्रमाणांतरसें अप्राप्तहै ॥

परिसंख्याविधिका दृष्टान्त बृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र प्र० १२३—**नाद्यादविधिनामांसं मृत्युकालेपिधर्मवित्** ॥ अ० ४॥ ३१८ ॥ अर्थ—धर्मवेत्तापुरुष मृत्युसमयमेंभी अविधिसें मांसको नखाए इत्यादिक परिसंख्याविधिहै ॥ उक्तलक्षणोंद्वारा होर वाक्यनमेंभी यथासंभव विधि जानलेना ॥

और जो तुमने कहा कि—[इसका भाव लक्षणाद्वारा यहहै कि

अपंचनखवालोंको नखानाचाहिए इसका केवल इसीअंशमें तात्पर्य्यहै औरमें नहींहोसक्ता] सोयिह तुम्हारा कथनभी असंभवहीहै तथाही कहताहूं सुनिये १—**वाक्यार्थानुपपत्ति लक्षणाबीजम्** ॥ वाक्यार्थका नहींबनना लक्षणाका हेतुहै अर्थयिह जहां वाक्यार्थ नहीं बनसके वहां लक्षणाकी कल्पना की जातीहै यिह नियमहै जैसे—'**गङ्गायां घोषः**, गंगामेंघोषहै यहां जलोंके विस्तृतप्रवाहरूप गंगामें घोषसंभवनेनहीं अतः वाक्यार्थके नहीं बननेसे गंगापदकी गंगातटमें लक्षणा की जाती है, आहीरों के क्षुद्रग्रामका नाम घोषहै ॥

जहां वाक्यार्थका असंभवरूपलक्षणाका बीजही न हो वहां लक्षणाकी कल्पना करणी अयुक्तहीहै हेमित्र—'**पञ्चपञ्चनखा भक्ष्याः**' यहांभी वाक्यार्थकी अनुपपत्तिरूप लक्षणाका बीज हैहीनहीं तो तुम निर्बीजलक्षणाकी कल्पना कैसे करसक्तेहो ॥

२—महाभाष्यप्रदीपोद्योतमें नागोजीभट्टनेभी इसवाक्यके पदोंमें लक्षणाका प्रबलहेतुओंसे खंडन कराहै वो विस्तारभयसे यहां नहीं लिखा जिसको जिज्ञासाहो वो वहांसे देखलें ॥

३—यदि आपकहैंकि—**तात्पर्य्यानुपपत्तिर्लक्षणा बीजम्** तात्पर्य्यका नहींबननाभी लक्षणाका बीजहै वोतात्पर्य तो अपंचनखवालोंके न खानेमेंहै, सोयिह तुमारा कथनभी असत्यहीहै क्योंकि—मनुस्मृतिआदिक धर्मपुस्तकोंमें यिह नहीं लिखाकि—सर्वजीवोंमें पंचनखवाले पंचभक्ष्यहैं किंतु मनुस्मृति आदिकोंमें पंचनखवालोंमें पांच भक्ष्य कहकर अपंचनखवालेजीवभी भक्ष्यकहेहैं देखिए—मनुस्मृति अ० १२४—**श्वाविधंशल्यकंगोधां खड्गकूर्मशशांस्तथा ॥ भक्ष्यान्पञ्चनखेष्वाहुरनुष्ट्रांश्चैकतोदतः** अ० ५ ॥ १८ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० १२५—पञ्चनखानांमध्याञ्छ्वावित्कादयोभक्ष्याः ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका—प्र० १२६—पञ्चनखेषुभक्ष्यान्मन्वादयः प्राहुः॥

इसपर राघवानन्दकी टीका—प्र० १२७—पञ्चनखानांमध्ये पञ्चानामेव हव्यकव्यार्थत्वम् ॥

इसपर गोबिन्दराजकी टीका प्र० १२८ पञ्चनखेषुमध्याद्भक्षणार्हान्मन्वादयआहुः ।

इनटीकाओंसहित मनुश्लोकका अर्थ—लंबेकाटोंवाला सेह, गोह गेंडा कूर्म शश, पांचनखवालोंमें इन पांचको मनुआदिक भक्ष्यकहतेहैं और ऊँट सेंविना एकओरदन्तवाले भेडबकरा हरिणआदिकोंकोभी भक्ष्यकहतेहैं ॥

और देखो प्रमाणांक ४६ में मनुजीनें पांचप्रकारके मत्स्यभी भक्ष्यकहेहैं अतः (अपंचनखवालोंको न खानाचाहिये केवलइसीअंशमें तात्पर्य्यहै औरमें नहींहोसक्ता) ऐसीतुम्हारी कल्पनाअसत्यहीहै, इसका औरकुछभी फलनहीं किंतु तुम्हारी नास्तिकताकी व दुराग्रहकी अभिव्यक्ति और मिथ्याभाषणका दोष, ये तुम्हारीअसत्यकल्पनाके फलहैं क्योंकि वेदसूत्र स्मृतिग्रन्थनमें अपंचनखवाले अजशशहरिणतित्तिर बटेराऽऽदिकभी भक्ष्य कहेहैं

———

औरजो तुमनेकहा कि— (मांसतो स्वयंहीखायाकर्ताहै तो फिर उसके वास्ते उसकोवेदने शिक्षाही क्या देनीथी) सोयिह तुम्हाराकथनभी अयुक्त हीहै तथाहि कहताहूं सुनिये, फिर देखो प्रमाणांक ५७ में भाष्यकारोंके

प्रमाणसें लिखचुकाहुं कि--धर्मअधर्मके विज्ञानका कारण शास्त्रहीहै अतः आस्तिकधर्मात्मापुरुषतो श्रुतिस्मृतिओंसें विहितभोजनको व विहितआचार को कर्तेहैं ॥

हेभ्रातः-भक्ष्यअभक्ष्यके अर्थात् अजशशहरिणादिकोंके भक्ष्यमांसके खानेलिये और ऊंठवानरश्वानआदिकोंके अभक्ष्यमांसके त्यागलिये यदि सृष्टिके आदिकालमें वेदस्मृतिओं शिक्षा नहींकरेंतो तब भक्ष्याभक्ष्यकी शिक्षाका हारकिसको अधिकार होसक्ताथा किंतु तब आदिकालमें युक्त योगीईश्वरको और युञ्जानयोगीमहर्षिओंकोही श्रुतिस्मृतिद्वारा कृपाकर भक्ष्या-भक्ष्यकी शिक्षाका अधिकारथा,अतः उनोंने-शिक्षा करणी चाहिये हीथी ॥

हारजो तुमने कहा कि - (जैसे कोई अपनेआप मट्टी खानेवाले पुत्रसें कहे कि---पुत्रतूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर तो इसवाक्यसें पिताका पुत्रको मट्टीखिलानेमें सर्वथा तात्पर्य्य नहींहै किंतु गंगाजीकीमट्टीसें दूसरी मट्टीके खानेसें रोकनेकाही केवलप्रयोजनहोताहै ऐसेही पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः, इस वचनमेंभीजानो यहव्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै) सोयिह तुम्हाराकथन भी असत्यहीहै तथाहि कहताहुं सुनिये ॥

१-तुम्हारा यिहदृष्टान्त काल्पनिकहै वास्तवनहीं क्योंकि-प्रायः अतिमूढ़ बालकही मट्टीखायाकर्ताहै ऐसे बालकको कोईभी नहीं कहता कि-पुत्रतूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर यदि कोई ऐसे कहेभीतो वो अतिमूढ़बालक क्या जानताहै कि-कहां गंगाहै कहांगंगाकीमट्टीहै और क्या इसवचनका तात्पर्य्यहै यिहभी वो अतिमूढ़बालक नहीं जानसक्ता ॥

व उक्तवचनसें वो मूढ़बालक मट्टीखानेसें रोकभी नहींसकीता इसीसें प्रसिद्धहीहै कि-मट्टीखानेवाले बालकोंको मातापिताऽऽदि ऐसेभयंकरवचन

ही कहतेहैं कि–जे तूं मट्टीखाएगातो तेरा मुख तोड़ दूंगी तेरा हाथ तोड़ दूंगी तेरे मुखपर थपड़मारूंगा, और यदि कोई थोड़ा बड़ा बालक भी मट्टी खाय तो उसकोभी यिहनहीं कहाजाता कि–हेपुत्र तूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर किंतु उसकोभी ऐसेहीकहाजाताहै कि–तूं मट्टी खानेसें बीमारहोजावेगा, यदि तूं मट्टीखाने सें नहीं हटेगातो तेरेउस्तादको कहेंगे, तेरेको मारमारकर सूधाकरदेंगे ॥

२–देखो प्रमाणांक १२४ मनुस्मृतिमें पञ्चनखवालोंमें पांचभक्ष्य कहकर उनोंसेंभिन्न एकओर दन्तवाले भेडबकराऽऽदिकभी भक्ष्यकहेहैं तोफिर तुम्हारे काल्पनिकदृष्टान्तमात्रसें कुछ सिद्धनहीं होसक्ता ॥

औरजो तुमनेकहा कि–यह व्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै, सोयिह तुम्हाराकथनभी समीचीननहीं क्योंकि—सूत्रोंमें ऐसीव्यवस्था नहींकीगई भाष्यमें कीगईहैतो वो वेदसूत्रस्मृतिआदिग्रन्थनसें विरुद्धहै अतः वो माननीयनहीं होसक्ती ।

हेमित्र–वेदसूत्रस्मृतिआदिपुस्तकों में अपञ्चनखवाले भेडबकरादुम्बा हरिणमेढाऽऽदिकभी भक्ष्यकहेहुएहैंतो वेदादिकोंसें विरुद्ध कोईभी भाष्यकार वा टीकाकार लिखडालेतो वो माननीयनहीं होसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०–यज्ञकी हिंसाकाभी विनायज्ञकेही नित्यकेमांसभक्षणके छुडानेमें ही भावहै क्योंकि जिसकोमांसखानेकी इच्छाहो वा स्वर्गकी इच्छाहो वह लक्षोंका खर्चकरकेही यज्ञकेलिये पशुमारनेमें प्रवृत्तहोसक्ताहै अन्यथानहीं ॥

आस्तिक०–हेमित्र इसतुमारेकथनमेंभी पशुहिंसावालेयज्ञका स्वर्गप्राप्ति फल सिद्धहुआ और यज्ञमें पशुहिंसा विहितासिद्धहुई ॥

यज्ञमेंप्रायः वेदवेत्ताब्राह्मण और महार्षियोगयुक्त व धर्मात्माराजमहाराजे एकत्रहोतेहैं ऐसेश्रेष्ठकर्मयज्ञमें उक्तमहाश्रेष्टपुरुषोंके विद्यमानहोते पशुहिंसा व मांसभक्षण सत्कारसें कराजाताहै तो पशुहिंसाको व विहितमांसभक्षणको

अशुभकर्म नास्तिकजन वा मूर्खजन कहसक्तेहैं अर्थात् आस्तिकबुद्धिमान् जनोंमें वो शुभकर्महीसिद्धहुए ॥

होरजो तुमनेकहा कि–"लखोंका खर्चकर्केही यज्ञकेलिये पशुमारनेमें प्रवृत्तहोसक्ताहै अन्यथानहीं" सोयिहतुम्हाराकथनभी असत्यहीहै क्योंकि आठआनेके वा दसआनेके खर्चकर नित्यपञ्चमहायज्ञ होसक्तेहैं उनसें क्या स्वर्गनहीं मिलसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—उनसेंस्वर्ग वा चित्तशुद्धिआदिफल तो मिलसक्ताहै परंतु नित्यपञ्चमहायज्ञनमें मांसकाभी क्या विधानहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र–यद्यपि वेदादिक सर्वधर्मपुस्तक तो तुमने नहींपढे तथापि केईकधर्मग्रन्थ तो तुमने देखेभीहैं परंतु बहुतकालके वेदविरुद्धजैनमतके संस्कारोंसें दुराग्रहके वशीभूतहुए तुम आर्षमतसें विरुद्ध कहरहेहो, देखो व्यासजीके पिता महर्षिपराशरजीने व्यासादिक महर्षिओंप्रति नित्यपंचमहायज्ञनमें पितरोंकी देवतोंकी अतिथिमनुष्योंकी मांसादिकोंसें तृप्तिकरणी प्रमाणांक ७५ में स्पष्टकहीहै ॥

और प्रमाणांक १०२ में नित्यकरणीय पितरोंकी देवतोंकी अतिथिकी सेवानिमित्त पशुहिंसा का वसिष्टजीने विधानकराहै ॥

हेपाठको—इनमहर्षिवाक्यनके मूलरूप संहिताभागके ब्राह्मणभागके वाक्यभी दिखलावुंगा ॥

—):०:(—

पूर्वपक्षी०—कलियुगमें कृपालुमहर्षिओंनें लोगोंको इन्द्रियोंका दास समझकर हिंसायुक्तअश्वमेधादि यज्ञनका करनारोकादियाहै ॥

आस्तिक०—इसतुम्हारेकथनसेंही यिहसिद्धहुआकि–सत्ययुग त्रेताप्रभृति उत्तमसमयोंमें जितेन्द्रियश्रेष्ठपुरुषोंको हिंसायुक्तअश्वमेधादिकयज्ञ करणे-

योग्यथे व उन श्रेष्ठसमयोंमें सो पशुहिंसायुक्तअश्वमेधादिकयज्ञ होतेरहेहैं, यिहतुमारेलेखसेंही सिद्धहुआ तो—

अबविचारियेकि—ऐसेउत्तमसमयोंमें वसिष्टादिकमहर्षि जिनयज्ञोंके कराणेवालेथे और सत्ययुगआदिकोंके धर्मात्मामहाराजे जिनयज्ञोंके यजमानथे,ऐसेहिंसायुक्त अश्वमेधादिक यज्ञ क्या श्रेष्ठकर्म नहींसमझेजासक्ते ।

अर्थात् तुम्हारेकथनसेंही वो अतिश्रेष्ठकर्मसिद्धहैं और जो कलियुगमें अश्वमेधयज्ञके करणेका केईऋषिओंनें निषेधकियाहै वो कलियुगके पुरुषोंकी असमर्थतासेंकियाहै क्योंकि-अश्वमेधयज्ञ कलियुगके पुरुषोंसें असाध्यहै ॥

हेमित्र-अजमेधआदिकोंका तो कलियुगमेंभी किसीऋषिनेंभी निषेध नहींकरा किंतु कलियुगमें अश्वमेध गोमेध इनदोयज्ञोंकाही निषेध करा है तो कलियुगके गरीबोंको अजमेधआदिकोंसे भी क्यों रोकतेहो ।

—:(०):—

पूर्वपक्षी०-स्वर्गादिसाधनरूपयज्ञ तो काम्यकर्महै इसलिये निरतिशय सुखस्वरूप मुक्तिकी इच्छावाला मुमुक्षु ऐसेकर्मकरणेकी इच्छातक नहीं कर्ता ॥

आस्तिक-हेमित्र तुम्हारेकथन हास्ययोग्यहीहैं तथाही कहताहूं सुनिये-

१-जिनअश्वमेधादिकयज्ञोंका प्रसंग चलाहुआहै वो क्या काम्यकर्महीहैं अर्थात् वोअश्वमेधादिकयज्ञ क्या स्वर्गादिकोंकी कामनासेंविना चित्तशुद्धिलिये करणेयोग्य नहींहैं क्या ऐसा किसी धर्मशास्त्रमें नियमकराहुआहै ऐसानियम किसी शास्त्रमें नहीं करा किन्तु तुम्हारे दुराग्रहका यिह नियमहै

हेभ्रातः-व्यासादिकमहर्षिओंने पापोंकी निवृत्तिरूप चित्तशुद्धिलिये भी अश्वमेधयज्ञका विधानकराहै ॥

महाभारत १२६—अश्वमेधोहिराजेन्द्र पावनःसर्व

पाप्मनाम् । तेनेष्ट्वात्वंविपाप्मावै भवितानात्र-संशयः ॥ प० १४ ॥ अ० ७१ ॥ १६ ॥

अर्थ—हेराजेन्द्र युधिष्ठिर जिससें सर्वपापोंका निवर्त्तकअश्वमेधहै इस्सें उसअश्वमेधयज्ञकर्के तूं पापोंसेंरहितहोवेंगा इसमें संशय नहींहै ॥

२—जोतुमने कहा कि—"मुक्तिकी इच्छावाला मुमुक्षु ऐसेकर्मकरनेकी इच्छातक नहींकर्ता" सोयिह तुमाराकथनभी असत्यहींहै क्योंकि—अश्वमेध-आदियज्ञों के कर्ता धर्मावतारयुधिष्ठिरआदिक असंख्यमहाराजोंमें क्या कोईभी मुमुक्षु नहींहुआ, ऐसे कौनआस्तिकपुरुष कहसक्ताहै ॥

३—मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामजीनें अपनेराज्यसमयमें दशअश्वमेधयज्ञ करेथे देखो—

वा० रामायण प्र० १३०—राज्यंदशसहस्राणिप्राप्य-वर्षाणिराघवः । दशाश्वमेधानाजह्रे सदश्वान् भूरिदक्षिणान् ॥ का० ५ ॥ स० १३० ॥ ९५ ॥

अर्थ—दशहजारवर्षराज्यको प्राप्तहोकर श्रीरामजी बड़ीदक्षिणावाले उत्तमअश्वोंवाले दशअश्वमेधयज्ञोंको कर्तेभए ॥

हेमित्र—अबकहोतो—श्रीरामजीभी क्या स्वर्गकीही इच्छावालेथे वो मुक्तिकी इच्छावाले नहींथे ॥

पूर्वपक्षी०—जबकि—ज्ञानधर्मोपदेशद्वारा जीवोंकीमुक्तिकरणाही परमात्मा का सृष्टिमेंमुख्यउद्देश्य योगमें मानाहुआहै तोफिर अशुद्धि क्षय और अति-शययुक्तसाधनोंके उपदेशमें कृपालुपरमात्माका मुख्यतात्पर्य्य कहां होसक्ता है ॥

आस्तिक०–१–वो योगशास्त्रका सूत्र तुमने क्योंनहीं लिखदिया कि जिसमें ऐसे मानाहुआहै ॥

२–यदि जीवोंकी मुक्तिकरनाही परमेश्वरका मुख्यउद्देश्यहै तो सर्वजीव मुक्त क्यों नहींहोजाते क्योंकि–परमेश्वरतो सत्यसंकल्पहै अतः परमेश्वरका उद्देश तो तत्क्षणही सिद्ध होनाचाहिये ॥

३–वेदमें जो अश्वमेधप्रभृतियज्ञोंका उपदेशहै वो क्या धर्मोपदेश नहींहै यदि वो धर्मोपदेश न होता तो धर्मावतार युधिष्ठिरको पापोंके निवारणलिये अश्वमेधयज्ञके करणेका भगवद्व्यासजी उपदेशही कैसे कर सक्तेथे ॥

हेमित्र–वेदमें अश्वमेधयज्ञका विधान यदि धर्मोपदेश न होतातो मर्यादाऽवतार श्रीरामजी दशअश्वमेधयज्ञन को कैसे कर सक्ते ॥

४–अश्वमेधप्रभृतियज्ञनमें नास्तिकोंसेंविना अशुद्धिदोष कौन कह सक्ताहै क्योंकि—अशुद्धिके दूरकरणेवालेको पावन कहतेहैं, देखो प्रमाणांक १२६ में व्यासजीने अश्वमेधयज्ञको पावन कहाहै ॥

देखो प्रमाणांक ५५ आदिकोंको वेदान्तसूत्र और उसके श्रीभाष्य शंकरभाष्यआदिकोंमेंभी अशुद्धिदोषका सम्यक् खंडनकराहै ॥

जपध्यान वा अश्वमेधादियज्ञ जोजो साधनहैं वोवो यदि स्वर्गादिकों की कामनासें करेजावेंतो जयादिफलवालेहैं, सो यदि स्वर्गादिकोंकी कामनासेंविना चित्तकीशुद्धिलिये करेजाएंतो उनसें पापोंकी निवृत्तिरूप चित्तशुद्धिहोकर विचारज्ञानादिकोंकी उत्पत्तिद्वारा निरतिशयसुखरूप मुक्ति के हेतुहैं वो देखो प्रमाणांक ७३ में स्पष्टकहाहै अतः उनके उपदेशमें परमात्माका मुख्यतात्पर्य्य संभवेहै ॥

––)०::०(––

पूर्वपत्ती० -मुक्तिकी इच्छावास्ते राजसयज्ञोंमें प्रवृत्तिछोड़कर सात्विक जपयज्ञ ईश्वरचिन्तनमें प्रवृत्तहोनाचाहिये क्योंकि जपयज्ञही परमात्माको सबसेंप्याराहै । प्रत्युत उसेवह अपनास्वरूपही मानताहै ॥

आस्तिक०—यदि परमात्माको जपयज्ञही सबसेंप्यारा होतातो परमात्माअश्वमेधादियज्ञोंका वेदमें विधानहीं क्यों कर्ता, जप व ईश्वरचिन्तनतो सबयज्ञोंमें कराहीजाताहै ॥

यदि अश्वमेधादिक छोड़देने चाहियेतो पापोंकी निवृत्तिलिये युधिष्ठिर को श्रीकृष्ण तथा व्यासजी अश्वमेधयज्ञकरणेका उपदेशही क्योंकर्ते श्रीकृष्णको व व्यासादिकोंको क्या तेरेजैसा धर्मज्ञान नहींथा ॥

हेमित्र—कोईभी यज्ञहोजो सांसारिकपदार्थोंकी कामनामें कराजावे वो राजसयज्ञहै औरजो निष्कामतासें कराजाए वो सात्विकयज्ञहै, यिहश्रीमुखसें आपभगवत्ने कहाहै ॥

गीता०—अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टोयइज्यते । यष्टव्यमेवेतिमनः समाधायससात्त्विकः— ॥अ. १७ ॥ ११ ॥ अभिसन्धायतुफलं दम्भार्थमपिचैवयत् ॥ इज्यतेभरतश्रेष्ठ तंयज्ञंविद्धिराजसम् ॥

॥१२॥ अर्थ—शास्त्रविधिकोदेखकर,, यज्ञकरणाहीयोग्यहै,, ऐसेनिश्चयसें मनको एकाग्रकर्के फलकी कामनासेंरहितपुरुषोंने जो यज्ञ करियेहै वो सात्त्विकयज्ञहै ॥ ११ ॥ फलके अभिलाषकर वा दम्भलिये जो यज्ञ कराजाताहै हेअर्जुन उसको राजसयज्ञ जानो ॥ १२ ॥

भावार्थह–कामनासेंविना तो कोईकर्म होताहीनहीं इस्से जो स्वर्गादिक सांसारिकपदार्थोंकी कामनासें अश्वमेधादिक यज्ञ वा जपयज्ञ करेंजावें वो राजसयज्ञहैं,औरजो सांसारिकपदार्थोंकी कामनासें विना चित्तशुद्धिलियेज्ञान द्वारा मोक्षवास्ते यज्ञकरेजावें वो सात्विकयज्ञहैं, सांसारिकपदार्थोंकी कामना विनाकियेहैं इस्सें इनको निष्कामयज्ञ व निष्कामकर्मकहतेहैं ॥

—:*०*:—

हेमित्र—यद्यपि निर्धनकंगालपुरुषोका तो खानेकाही अधिकारहै अतःवो खातेपीते जपयज्ञ कर्तेरहें तथापि राजेमहाराजे तथा धनाढ्यभाग्य-वानोंका ऐसाअधिकार नहींहै ऐसेयोग्य नहींहै किंतु भाग्यवानोका राजेमहा-राजोंका तो परमात्मस्मरण ध्यान कर्तेकर्ते खानेखुलानेवाले यज्ञनके करणे-काभी अधिकारहै उनोंने वोयज्ञ करनेही योग्यहै ।

पूर्वपक्षी०—यह जपयज्ञकी महिमा सांख्यशास्त्रका कथन है ।
आस्तिक०–तो वो सांख्यशास्त्रकासूत्र तुमने क्यों नहींलिखदिया, हे मित्र केवलबातोंसेंही गुजारा कराचाहतेहो ।

शास्त्रोंमें–कहीं अश्वमेधादिकयज्ञोंका महिमा, कहीं जपयज्ञका महिमा कहीं एकादशीआदिक व्रतोंका महिमा, कहीं दानका महिमा, कहीं तीर्थों का महिमा, कहीं ध्यानका महिमा, कहीं औषधिओंका महिमा, कहीं तपका महिमा. कहीं वैराग्यका महिमा, कहीं उत्तमसन्तानका महिमा, कहीं किसीका कहीं किसीका महिमा कहाहै वो राजे महाराजे ब्राह्मणआदिकोंके अधिकारभेदसें सबही श्रेष्ठहैं ॥

पूर्वपक्षी०–सांख्यमें अहिंसा और हिंसाबोधकवाक्यों (मा हिंस्या-त्सर्वाभूतानि और अग्नीषोमीयं पशुमालभेत) का भिन्नविषयहानेसें परस्परविरोध नहींहै अतः आपसमें [illegible]ध्यबाधक भाव

नहीं मानागिया इसलिए सांख्यशास्त्रानुसार प्रत्येकहिंसा पापजनक मानी गई है और जयसतहीं अणु ममशास्त्रगदहै परन्तु पूर्वोत्तर मीमांसा एवं न्याय शास्त्र सर्वांशमें इसकेसाथ सहमत नहींहै वह शब्दप्रमाणको मुख्यमानकर वाचानिक यज्ञीयवधको हिंसामें परिगणित नहींकरते—जैसेहिंसाको प्रसिद्ध होनेपरभी राजा खूनीका वधकरानाहुआ धर्ममें पतित नहींहोता क्योंकि वहउसका शास्त्रकेसमधिगत भुक्तिमुक्तिप्रद निजकर्तव्यहै इसविषयपर उन का विचार ग्रन्थकेबढ़नेके भयसे यहांविशेष न लिखकर हम विशेषरूपसे फिर स्वतंत्रालिखेंगे ॥

आस्तिक० होनिन्न —चिरंजीव यह कुछतो तुमनेभी सत्यकहाहै परंतु यहां (शब्दप्रमाणको, वाचानिकयज्ञीयवधको) इत्यादिक पद अस्पष्टअर्थवाले लिखकर साधारणपुरुषोंको धोखाहीदियाहै उनपदोंके अर्थोंको मैं अभीदिखलाताहूं ॥

'अग्नीषोमीयं पशुमालभेत" इसवेदवाक्यका अर्थभी तुमने नहींलिखा —

और जोतुमनेलिखाकि—,,अहिंसा और हिंसाविधायक वाक्योंका भिन्नविषयहोनेसे परस्परविरोध नहीं,, वो उन वाक्यनका जोजो भिन्न विषयहै जिसजिसविषयके भेदसे उनवाक्यनका विरोधनहींहै उसउसभिन्न विषयको अवश्यदिखलानाचाहियेथा क्योंकि उस २ भिन्न २ विषयके दिखलायेबिना उनवाक्यनका अविरोधिता भासेनहीं अतःउसउस भिन्न२विषयको अवश्यंदिखलाना चाहियेथा, वोतेंतुमनेनहींदिखलाया अतःअव्यवास्थित-कथन मात्रसें तुम साधारणपुरुषोंको धोखादेतेहो ॥

यदि मेरेसें पूछोतो देखोप्रमाणांक ४५ को वहां शांकरभाष्यसें

उनवाक्यनका भिन्न२ विषय दिखलायचुकाहूं और यहां "अग्नीषोमीयं पशुमालभेत" इसवाक्यकाअर्थभी लिखचुकाहूं ॥

औरजोतुमनेकहाकि—"अहिंसा और हिंसाबोधकवाक्योंका भिन्नविषयहोनेमें परस्परविरोध नहींहै अतः आपसमें बाध्यबाधकभाव नहींमानागया" तो इसतुम्हारेलेखसेभी जब सांख्यशास्त्रमें हिंसा-विधायक वाक्यनका बाधक नहींमानागया तो उनअबाध्यवाक्यनमें विहितहिंसाको पापजनक कहनाअयुक्तहीहै, औरजो तुमने कहाकि—'अपयनही श्रेयस्करा यथार्थ' इसका उत्तर विस्तारमें लिख चुकाहूं ॥

औरजो पूर्वपक्षीनेलिखाकि—(पूर्वोत्तरमीमांसा अर्थात् पूर्वमीमांसा कर्मशास्त्र औरउत्तरमीमांसा वेदान्तशास्त्र एवंन्यायशास्त्र सर्वांशमें 'इसके, सांख्यशास्त्रके साथ, 'सहमत, सहयोगदेनेवालेनहींहैं 'वह' मीमांसादिकशास्त्र शब्दप्रमाणको अर्थात् वेदप्रमाणको मुख्यमानकर 'वाचनिक 'वेदवचनोंमें विहित 'यज्ञीयवधको' यज्ञमेंकरेपशुकेवधको 'हिंसामें परिगणित नहींकरते' हिंसामें नहींगिणते) ॥

हेपाठक—पूर्वपक्षीने साधारणपुरुषोंको धोखादेनेकेलिये जो अस्पष्ट अर्थवाले पद लिखडालेहैं उनपदोंको और उनके स्पष्टअर्थ, यिहमैंने दिखायदियेहैं ।

हेपाठको—देखो इसपूर्वपक्षीकेलेखको कि-पूर्वमीमांसा वेदान्तशास्त्र न्यायशास्त्र इनशास्त्रोंमें वेदप्रमाणको मुख्यमानकर वेदविहित हिंसाको अहिंसारूपहीमानाहै, यिह पूर्वपक्षीके लेखकाही अर्थहै और प्रमाणांक ८६ प्रभृतिमनुस्मृतिआदिकोंसेभी वेदविहितहिंसा अहिंसाही मानीहै तो पूर्वपक्षी से पूछनाचाहिये कि-तुम ऐसे जानतेहो तथा लिखतेहो तोफिर श्रुतिस्मृतिओं

से विरुद्धलेखलिखनेपर तुम वेदविरोधी क्योंनहींहो' और सांख्यशास्त्रमें भी हिंसाविधायक वेदवाक्यनका कोईबाधक नहींमानागया तोतुम क्यों दुराग्रहकर वेदमतसे विरुद्धचलतेहो ॥

यदि भगवत्कपिलरचित सांख्यशास्त्रके सूत्ररखकर जोतुमलिखोगे तो उसपर विशेषनिर्णय कराजावेगा ।

पूर्वपक्षी०—प्रश्न कोईनर पूछे कि—जोलोग आपके शास्त्रों वा वेदोंपर श्रद्धा नहीरखते वहआपके प्रमाणोंको कैसेमानेंगे, उत्तर—हमारे शास्त्रवेदहीकेवल निषेध नहींकरते किन्तु श्रीगुरुनानकजीआदिभी सबमहात्मा इसदुष्टकर्मकी निन्दा करतेहैं श्रीगुरुनानकजी

भांगमछली सुरापान जोजो प्राणीखांहि,
तीर्थ व्रतनियम किये सभीरसातल जांहि ॥
जेरतलगे कापड़ जामाहोय पलीत, जेरत
पीवेंमानसां तिन क्यों निर्मल चीत ॥

आस्तिक०—प्रश्नमें तुमने लिखा कि—"जोलोग आप के शास्त्रों वा वेदोंपर श्रद्धा नहीरखते वह आपके प्रमाणोंको कैसेमानेंगे" इसप्रश्नके उत्तरमें हेबालबुद्धे श्रीगुरुनानकदेवजीके वाक्यप्रमाण क्या लिखने योग्यथे क्योंकि क्या शास्त्रवेद तेरेहैं श्रीगुरुनानकदेवजीके नहींहैं, और क्या श्रीगुरुनानकदेवजी शास्त्रवेदोंको नहींमानतेथे, ऐसेनहीं उनोंने तो वेदीवंशमें अवतार लियाहै और उनोंने कहा कि—वेदकतेब कहोमत झूठे झूठा जोन विचारे ॥

इच्छा अब उनवाक्यनमेंभी दृष्टिदीजिये तोप्रथम यिहशब्द गुरुनानकजी का हैभीनहीं तोभी भांगका अशुभफल कहाहै वोभांगके रगडे तो हेमित्र–तुम्हारे श्रद्धेय महात्माजी लगातेहैं अतः यिहवाक्य उनकीहि भेटकराचाहिये॥

और प्रमाणांक४६ मनुस्मृतिमें पांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यकहेहैं उन सें अन्यमत्स्य अभक्ष्यहैं उन अन्यमत्स्यनके तात्पर्य्यसें मत्स्यनके खानेका दोष कहाहै॥

और सुरापानका दोषकहाहै तो इच्छाकियाहै 'जेरतलगेकापड़े, इत्यादिकजो वाक्य तुमनेलिखे इनवाक्यनमें तो मांसका नामभी नहींहै, मांसके खानेका निषेधभी नहींकराहै तो प्रसंगमें ऐसे२अनुपयोगीवचनालिख कर तुम क्यों धोखादेते हो

इनवाक्यनका अर्थ तो यिहहै—झूठ दगाऽऽदिकोंसें मनुष्यनका धन-आदिरूप रुधिरको जोपीतेहैं उनझूठे धोखेबाज मनुष्योंका चित्त क्योंनिर्मल होसक्ताहै॥

होरजो तुमने कहाकि–सब महात्मा इसदुष्टकर्मकी निन्दा करतेहैं,, सोयिह तुम्हाराकथनभी नास्तिकतासेंहै क्योंकि वेदसूत्रस्मृति आदिकोंमें पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक हजारोंवाक्यहैं तो उनकेकर्ता परमपूज्य महात्मापुरुष क्या तेरीदृष्टिमें दुष्टकर्मोंके विधायकहुएहैं और देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके त्यागकी महर्षिओंने अतिनिन्दा-की है उनसें तुम्हारा कथन विरुद्धहै अतः उनमें विश्वासके अभाव होने कर तुम नास्तिकतासें कथनकररहेहो॥

अब श्रीगुरुनानक देवजीके मासपदवाले स्पष्टवाक्यनको मैं दिखलाताहूं

ग्रन्थसाहब प्र० १३१—पहिलां मासहु निंमिआं मासै अंदरवास। जीउ पाइ मास मुह मिलिआ हड चमतनमास। मासहु बाहर कढिआ मंमा मासगिरास। मुह मासैका जीभ मासैकी मासै अंदर मास। वडा होआ वीआहिआ घरलै आइआ मास। मासहुही मास उपजै मासहु सभोसाक। सतगुर मिलिए हुकम बुझीए तांको आवे रास। आप छुटे नहि छुटीए नानक बचन बिलास॥१॥ मासमासकर मूरख झगड़े गिआन धिआन नहीजाने। कौन मास कौन साग कहावे किसमाहि पाप समाणे। गैंडा मार होम जगकीए देवतआंकी बाणे। मास छोड बैस नक पकडहि राती मानस खाणे। फडकर लोकांनो दिखलावह गिआन धिआन नहीसुजे नानक अंधेसिउ किआ कहीए कहै न कहिआ बुजै॥ अंधा सोइ जि अंध कमावै तिस रिदैसि लोचन नांही मात पिता की रकत निपंने मछी मास न खांही॥ इसत्री

पुरुखै जानमी सेन्ना उथै मंदर मांही । मासहु निंमे मासहु जंमे हम मासैके भांडे । गिआन धिआन कुझ सूजे नाही चतर कहावे पांडे । बाहर का मास मंदा सुआमी घर का मास चंगेरा । जिअ जंत सभ मासहु होए जीअ लइआ वसेरा । अभख भखहि भख तज छोडहि अंधगुरु जिनकेरा । मासहु निंमे मासहु जंमे हम मासैके भांडे । गिआन धिआन कुझ सूजे नाही चतर कहावे पांडे ॥ मास पुराणी मास कतेबी चहुजुग मास कमांणा जाजि काज वीआहि सुहावे उथै मास समांणा । इसत्री पुरुख निपजे मासहु पातसाह सुलतानां । जेउइ दिसहि नरकि जांदे तां उनका दान न लैणा । देंदा नरकि सुरग लैंदे देखहु एहु धिडाणा । आपन बूझै लोक बुझाए पांडे खरा सिआणा । पांडे तूं जानमि नाही किथहु मास उपंना तोइअहु अंन कमाद कपाहां तोइअहु त्रिभवन गंना । तोआ आखे हों बहुबिध हछा ताए बहुत बिकारा एते रस छोड होवे संनिआसी नानक कहै बिचारा ।

हे पाठको—संस्कृतमें मांस नामहै, भाषामें मांसका मास नामहै ॥ श्रीगुरुनानक देवजीके इनवाक्यनको देखो विचारो तो-सबके शरीर मांसमय कहनेसें मांसमें अशुद्धिभ्रमको दूरकराहै और 'कौनमास कौन साग कहावै किसमहि पाप समाणे' इसकथनसें जो शास्त्रविहितहै वो सागहै उसमें पाप नहीं, यिह सूचन करा है ॥

गैंडा मार होम जगकीए देवतआंकी बाणे इत्यादिवचनोंसें देवादियज्ञमें मांसके बलिदानमें शास्त्रविधिको जतलायाहै फिर 'मास पुराणी मास कतेबी चहुजुग मास कमाणा जजि काज विआहि सुहावै उथै मास समाणा।' इत्यादिक बचनोंसें सत्ययुग आदिकोंमें और यज्ञ विवाहआदिकोंमें मांसका प्रचारथा, यिह जतलायाहै ॥

एतेरस छोड होवै संनिआसी, इसवचनसें गृहस्थजनोंके लिए मांस के स्वाद अवश्यलेने चाहिए, यिह जतलायाहै क्योंकि श्रीगुरुनानकदेवजी कहतेहैं कि—एतेरस छोड तो होवे संन्यासी अर्थात् फिर गृहस्थमें नहींरहै ॥

पूर्वपक्षी०—भक्तकवीरजी कहाहै—साँई मारे राह सुधारे उसको कहें हराम मुआ। जीतेको मुर्दाकर डाले उसको कहें हलाल हुआ॥ पढे निमाज रखे फिर रोजा पराए पुत्रका काढ हिया। गर बहिश्त मिले यौंही तो क्यों न कुटुम्ब हलाल किया ॥

आस्तिक०—१–हेमित्र इत्यादिक शब्दोंका प्रमाणदेना योग्य नहीं हो सक्ता क्योंकि ऐसेऐसेशब्द निवृत्तिमार्गको लेकर बनाएजातेहैं ॥

२—यद्यपि कबीरजी भक्तहुएहैं तथापि प्रमाणकोटिमें तो वेदसूत्रस्मृति ओं के ही वाक्य प्रमाण कहेसुने जातेहैं वो वेदसूत्रस्मृतिओंके वाक्य दिखलाएभीहैं बहुतसे दिखायेभी जावेंगे ॥ —

इछा अब कबीरजीके वचनोंकाभी विचारकरिये जिम भेडबकराऽऽदि भक्ष्यजीवको सांईमारे अर्थात् जो बीमारीआदिसें मरे उसका मांस धर्म शास्त्रोंमेंभी अभक्ष्यही कहाहै और वैद्यकग्रन्थनमेंभी अभक्ष्यही कहाहै और मुसलमानोंकी शराहमेंभी हरामही कहाहै, देवतापितरआदिकोंके निमित्तकर जो भेडबकराऽऽदिक माराजावे वो धर्मग्रन्थोंमेंभी भक्ष्यहीकहाहै और वैद्यकशास्त्रमेंभी भक्ष्यहीहै, ऐसेही मुसलमानोंकी शराहमेंभी हलालही कहाहै तो वेदादि धर्मग्रन्थोंसें विरुद्धकथन हिन्दुओंमें तथा कुराणादिकोंसें विरुद्धकथन मुसलमानोंमें माननीय नहींहोसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—यदि पशुके मारणेसें पशुको स्वर्गमिले तो अपने कुटुम्ब को क्यों नहींमारते ॥

आस्तिक०—हेमित्र अवश्य देखो प्रमाणांक ५७ को धर्माधर्मके विज्ञानका कारणशास्त्रहै और देखो प्रमाणांक ६६ आदिकोंमें धर्मशास्त्र स्पष्टकहतेहैं कि-विहितहिंसासें दोनों को उत्तमगतिकीप्राप्ति, स्वर्गप्राप्तिरूप श्रेष्ठफल मिलताहै तो फिर कुटुम्बको क्यों माराजावे अर्थात् विहितपशुहिंसा-करभी विहितमांसके खानेसेभी कुटुम्बको स्वर्ग प्राप्तहोसक्ताहै तोफिर कुटुम्ब का मारणा अयोग्यहीहै मूर्खताहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—आलमगीर बादशाहने कहाहै—तूं धीरे धीरे चल बल्कि मत चल क्योंकि तेरे पाऊंके नीचे हजारों जीवहैं ॥

शेखसादीनें कहाहै—तूं किसी चींटीकोभी मतसता

क्योंकि वहभी जानसें प्यार रखतीहै और दोने को खींचतीहै ॥—

आस्तिक० आलमगीरने और शेखमादीने बहुतठीक कहाहै क्योंकि—पाऊंके नीचे जो हजारोंजीव मरतेहैं वो उनकी अविहितहिंसाहै और प्रमाद सें जो चींटीआदिकोंका सतानाहै वोभी अविहितहिंसाहै, अविहितहिंसा पापका हेतुहै अतः ऐसीअविहितहिंसाके पापसें बचनाही योग्यहै ॥ यिह कोईभी धर्मवेत्ता नहींकहता कि चींटीआदिक्षुद्रजीवोंको पादतलसें न बचावो परन्तु विहितहिंसाके प्रकरणमें ऐसे २ अविहितहिंसाके वाक्य लिखने अपनी अज्ञानता प्रकट करनीहै ॥



पूर्वपक्षी०—सूक्तावली—शुक्रशोणितसंभूतं येनरामुञ्ज-तेफलम्॥नरकान्ननिवर्तन्ते यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥ अर्थ शुक्रशोणितसें उत्पन्नहोनेवाले मांसको जोपुरुष खातेहैं वो जबतक चन्द्रमासूर्य्यरहें तबतक नरकमें नहींनिवृत्तहोते ॥

आस्तिक०—यिहश्लोकभी भयंकरवाक्यसें अविहितमांसखानेके दोष को बोधनकर्ताहै क्योंकि जिस्सेभगवद्व्यासजीने यिहअर्थ स्पष्टकहाहै देखो व्यासस्मृति प्र० १३२—द्विजोजग्ध्वावृथामांसं हत्वाऽप्यविधिनापशून् ॥ निरयेष्वक्षयंवास माप्नोत्या-चन्द्रतारकम् ॥ अ० ३।५७॥ अर्थ—द्विजपुरुष, वृथामांसको, अविहितमांसको खाकर व पशुओंको अविधिसें मारकर जबतक चन्द्रमा तारा

रहै तबतक नरकोंमें अक्षयवासको प्राप्तहोताहै ॥

हेपाठको—देखो जैसे व्यासजीनें अविहितमांसके खानेसें व वृथापशु-हिंसासें नरकप्राप्ति कहीहै वैसेही सूक्तावलीश्लोकमेंभीजानो ॥ विहितमांसके खानेसें नहीं प्रत्युत विहितमांसके नहींखानेमें मनुव्यासवसिष्टादि महर्षिओंने प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें नरकआदिकोंकी प्राप्ति कहीहै ॥

हेमित्र—इससूक्तावलीश्लोकका विशेष उत्तर तो प्रमाणांक १३१ श्रीगुरुनानकदेवजीके वचनोंमें देखलीजिये ॥

यदि शुक्रशोणितमें पैदाहोताहै अतः मांस अशुद्धहै ऐसे कहो तो यिह तुमारा कथनभी समीचीननहीं तथाही कहताहुं सुनिए

१ हेमित्र—तो तुमारा शरीरभी शुक्रशोणितमें पैदाहुआहै वो क्या शुक्रशोणितकीन्याई तुमारा शरीर अशुद्धहै ॥

यदि शुक्रशोणितकीन्याई अशुद्धहै तो तेरेशरीरका स्पर्श कभीभी किसीनेभी नहीं करनाचाहिये ॥

यदि तुमकहो कि—शुक्रशोणितसें उत्पन्न तो हुआहै मेरा शरीर तदपि स्नानआदिकोंसें शरीर शुद्ध होजाताहै तो हेबाल एवंही मांसभी प्रक्षालनआदिकोंकर शुद्धहै प्रत्युत प्रमाणांक १ आदिकोंमें प्रक्षालनसें विनाभी मांस शुद्धही कहाहै ।

२—शुक्रशोणितमें मांस बनताहै, यिह कथनभी चिकित्साशास्त्रके अज्ञानसेंहै क्योंकि—अन्नादिकोंके पाकमें पहिला धातु रसबनताहै उसरसधातुसें ,रक्त मांस मेद; अस्थि मज्जा शुक्र, यिह षटधातु बननेहैं शुक्रशोणितके मेलसें तो एक बुदबुदामात्र होजाताहै फिर मातानें खाए हुए अन्नादिकोंके पाकसें और बाहिरआने पर बच्चे ने खाए दुग्ध अन्नादिकोंके पाकसें रसरक्त मांसादि सप्तधातु बनतेहैं शुक्रशोणितमें मांस नहीं बनता ।

रसधातुसेंही दुग्ध बनता है और केईक रससें रक्त रक्तसें दुग्ध बनता कहतेहैं जैसे हारीतसंहिता प्र० १३३—क्षीरंस्निग्धंतथारक्तं पित्तेनपाकतांगतम्। रक्तंश्वेतत्वमायाति तथा-क्षीरंसितंभवेत्॥ प्रथमस्थाने अ०८॥८॥

अर्थ—दुग्ध स्निग्धहै तथा रक्तहै, पित्तसें पाकताको प्राप्तहुआ रक्त श्वेतहोजाताहै तथादुग्ध श्वेतहोजाताहै।

प्रश्न—रस रक्त मांसमेदः अस्थिमज्जा शुक्र, इन सप्तधातुओंका आदि बीज तो शुक्रशोणितहै॥

समाधान—इनसप्तधातुओंका आदिबीज शुक्रशोणितहै तो रसधातुसें होनेवाले दुग्धकाभी आदिबीज शुक्रशोणितही मानना होगा अतः मांसको अशुद्धमानोंगे तो दुग्धकोभी अशुद्धही कहनाहोगा॥—

३ प्रसिद्धहीहै कि—म्युनिसपलकमेटीसें खरीदकरभी बागोंमें खेतोंमें अश्वगर्दभश्वान मनुष्यआदिकों का मलरूप खात गेराजाताहै तो अन्न-शाकफलआदिक पैदाहोतेहैं पुष्ट होतेहैं॥

४ यदितुमकहोकि—अश्वश्वानादिकोंके मलरूपखातसें उत्पन्नहुएभी अन्नशाकादिक शुद्धहीहैं क्योंकि—उनअन्नशाकादिकोंको धर्मशास्त्रोंमें शुद्ध कहाहै भक्ष्यकहेहैं तो हेभ्रातः—देखो प्रमाणांक १ आदिकोंमें घृततैल-शाकआदिकोंकीन्याई मांसकोभी शुद्ध पवित्रहीकहाहै और प्रमाणांक १६५व १२४ आदिकोंमें अवश्यभक्ष्य कहाहै बहुत क्यादेखो प्रमाणांक ११ में श्रीरामजीने सीताको मांस 'मेध्य' पवित्रहीकहाहै तो उनसेविरुद्ध कौनआ-स्तिकपुरुष मांसको अशुद्धकहसक्ताहै॥

पूर्वपक्षी०—अहिंसादिग्दर्शनमें लिखाहै कि—वराहपुराणमें वराहजी ने वसुन्धरासें अपने बत्तीसअपराधिओंमें मांसाहारीको अठारहवांअपराधी कहाहै जैसे—यस्तुमात्स्यानिमांसानि भक्षयित्वाप्रपद्यते । अष्टादशापराधंच कल्पयामिवसुन्धरे अ० ११७ ॥ २१ ॥ यस्तुवाराहमांसानि प्रापणेनोपपादयेत् । अपराधंत्रयोविंशं कल्पयामिवसुन्धरे ॥ २६ ॥

अर्थ—हेवसुन्धरे मत्स्यकेमांसोंको खाकर जोपुरुष मेरीसेवामें आताहै वो उसका में अठारहवां अपराध गिनताहूं ॥ २१ ॥ हेवसुन्धरे जोपुरुष वराहकेमांसोंको ल्याकर मेरेअर्पणकर्ताहै वो उसका मैं २३ वां अपराध गिनता हूं ॥

आस्तिक०—देखो प्रमाणांक ४६ मनुस्मृतिमें जोपांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यकहेहैं उनसेंभिन्नमत्स्यके मांसका इनश्लोकोंमें निषेधकरा जानना, क्योंकि—नहींतो स्मृतिवाक्यनसें विरोधहोगा और ग्रामके वराहके मांसका निषेधकराजानना, वा वराहभगवान्की सेवा में वराहके मांसका निषेध करा जानना ॥

होमित्र—यहां विहितमृगबकराऽऽदिकोंके मांसका निषेध नहींकराहै क्योंकि—वराहपुराणमेंभी आपवराहभगवान्ने वसुन्धराप्रति विहितमृगपक्षीओंके मांसका विधानहीकराहुआहै देखो ।

वराहपुराण अ०१३४—मार्गमांसवरंछागं शाशंसमनुयुज्यते ॥ एतान्हिप्रापणेदद्या न्ममचैतत्प्रिया-

वहम् ॥ अ० ११६ ॥ ११ ॥ अर्थ—मृगका मांस, मकरेका मांस, शशाका मांस, श्रेष्ठहै देवादिकर्ममें लगाया जाताहै, लाभकेलिये इनमांसों कों देवे, मेरेको यिहकर्म प्रियपहुंचानेवालाहै ॥

———

वराहपुराण अ० १३५—पक्षिणांचप्रवक्ष्यामि येप्रयोज्यावसुन्धरे। येचैवममक्षेत्रेषु उपयुज्यन्ति नित्यशः॥ १४ ॥

अर्थ—हेवसुन्धरे पक्षीओंमें जोपक्षी देवादिकर्ममें लगानेयोग्यहैं,- मेरे क्षेत्रोंमें जोपक्षी नित्यउपयोगीहै उनपक्षीओंकोभी कथनकरताहुं ॥

वराहपुराण अ० १३६—लावकंवार्त्तिकंचैव प्रशस्तं-चकपिञ्जलम्। एतेचान्येचबहवः शतशोऽथ-सहस्रशः। ममकर्मणियोग्याये तेमयापरिकीर्त्तिताः ॥ ११६ ॥ १५ ॥

अर्थ—लवापक्षीओंका समूह, बटेरोंका समूह, कपिञ्जलोंका समूह, श्रेष्ठहै अर्थात् विहितहै ॥ एओर होरबहुतसंकडे हजारोंपक्षी मेरेकर्ममें जो योग्यहै वो मैंने कहहुएहैं ॥

हेपाठक—स्पेदातित्तिरका और चातकका नाम कपिञ्जलहै।

वराहपुराण अ० १३७—यस्त्वेतत्तुविजानीया त्कर्म कर्तातथैवच। नापराध्नोतिसनरो ममचोक्तंव-चःप्रिये ॥ १६ ॥

अर्थ—इसकोजोपुरुष जानताहै और वैसेहीकर्मकोकर्ताहै वोपुरुष अपराधी नहींहोता, यिहवचन मेराकहाहुआहै हेप्रियेवसुन्धरे ॥

पूर्वपक्षी०—सांख्यलोगभी मांसभोजियोंके प्रति आक्षेपपूर्वक उपदेश करतेहैं—यूपंछित्वापशून्हत्वा कृत्वारुधिरकर्दमम् ॥ यद्येवंगम्यतेस्वर्गे नरकेकेनगम्यते ॥ १ ॥ अर्थात् यज्ञस्तम्भको छेदकर, पशुओंको मारकर, रुधिरका कीचड करके, इसतरह यदि स्वर्गमें गमनहो तो नरकमें कौनकर्मसें गमनहोसकेगा, इत्यादि

आस्तिक०—यिह सांख्यसूत्र नहींहै किंतु अहिंसादिग्दर्शनग्रन्थके कर्ता विजयधर्मसूरिजीने वहां नाम तो सांख्य का लिखदिया परंतु यिह श्लोक पाद्मपुराणमें खण्ड १ ॥ अ०१३॥श्लोक ३२३ का है वो बृहस्पति जीने दानवअसुरोंप्रति वंचनालिये कहाहुआहै अतः प्रमाणरूप नहींहै तथापि इसका उत्तर यिहहै कि(जैसे युद्धमें हिंसा विहितहै अतः उसका स्वर्गप्राप्तिफलहै वैसेही यज्ञमें जानो) वोदेखोप्रमाणांक ५६ में श्री रामानुज स्वामीने वेदप्रमाणसें स्पष्टलिखाहै, हेमित्र धर्माधर्मका निश्चय शास्त्रसें विना अयोगीजनोंको नहीं होसक्ता किंतु शास्त्रसेंही होसक्ताहै वोदेखो प्रमाणांक ५७ में यिहअर्थ सिद्धहीहै अतः निषिद्धहिंसासें नरकप्राप्ति होतीहै विहितहिंसासें नहीं ॥

—):०:(—

हेपाठक—अहिंसादिग्दर्शनमें विजयधर्मसूरिजीने बहुतलेख ऐसेलिखेहैं कि—[व्यासजीने पुराणोंमें इसतरह कहाहै, अर्चिमार्गियोंके उद्गार,वेदान्तियों के वचनसुनो] ऐसेऐसे लिखकर जो चाहे श्लोक लिखदियेहैं परंतु न तो पुराणका नाम लिखा, और नांही अर्चिमार्गियोंके ग्रन्थका नाम लिखा, और नांही किसी वेदान्तग्रन्थका नामलिखा,यिह क्या छल नहीहै ॥

अर्थयिह—विजयधर्मसूरिजीने जैसे वराहपुराण मनुस्मृतिआदिकोंके अध्यायांक श्लोकांक और कहीं पृष्ठांक लिखदियेहैं ऐसीकृपाकरीहै, और कहींकोई श्लोक लिखदिया उसकेग्रन्थका नामभी विजयधर्मसूरिजीने नहीं लिखा अर्थात् बहुतजगें तो पृष्ठांकपर्य्यन्त लिखदेना और बहुतजगें ग्रन्थ का नामभी न लिखना, यिह क्या धोखादेना नहींहै तो होर क्याहै ॥

अतः अहिंसादिग्दर्शनमें लिखेहुए जिनश्लोकोंके ग्रन्थका नाम और अध्यायांक श्लोकांक लिखाहै वोश्लोकभी आर्षग्रन्थकेहैं तो उनका उत्तर लिखूंगा उनकी व्यवस्था करूंगा, और जिनश्लोकोंके ग्रन्थका नामभी नहीं लिखा व अध्यायांक श्लोकांकभी नहींलिखा, ऐसेलेख छलरूप स्पष्टजाने जातेहैं अत: उनश्लोकोंका उत्तरलिखना योग्यहीनहींहै ।

पूर्वपक्षी०—नगोप्रदानंनमहीप्रदानं नान्नप्रदानंहितथाप्रधानम् ॥ यथावदन्तीहबुधाः प्रधानं सर्वप्रदानेष्वभयप्रदानम् ॥ २६८ ॥ पञ्चतन्त्र पृ० ७७ ॥

अर्थात् विद्वान्लोक संपूर्णदानोंमें जैसा अभयदानको उत्तम मानतेहैं वैसा गोदान पृथ्वीदान अन्नदानआदि किसीकोभी प्रधान नहींमानतेहैं ॥

कितनेंही अज्ञानीजीव बिनाविचारेही मच्छर डांस खटमल जूं आवगैरह छोटे २ जीवोंको स्वभावसेही मारडालतेहैं और बहुतसे तो घोड़ेके वालकी मूरछलसें, या हाथसें या घरमें धूंआकरके या गर्मजलसें खटमल आदिजीवोंको मारतेहैं परंतु यदि कोई उनको समझावे तो वह उटपटांग जवाब देकर अपना बचाव करनेका यत्न करतेहैं लेकन वस्तुतः वैसे जीवोंके मारनेसेंभी बहुतपापहोताहै—इसविषयको दृढकराने वाला वराह पुराणकाश्लोक देखिये—जरायुजाण्डजोद्भिज्ज स्वेदजा-

निकदाचन ॥ येनहिंसन्तिभूतानि शुद्धात्मानो-दयापराः ॥ ८ ॥ १३२ अ० ॥ ५३२ पृ० ॥

भावार्थ मनुष्यगौआदिक जरायुज, अण्डज पक्षी, उद्भिज्ज वनस्पति स्वेदज खटमल मच्छर डांस जूंआलीख वगैरह समस्तजीवोंकी जोपुरुष हिंसा नहींकरतेहैं वो शुद्धात्मा दयापरायणहैं ।

आस्तिक० हेभ्रातःसर्वजीवोंप्रति अभयदान तो निवृत्तिमार्गवाले संन्यासीओंका धर्महै परंतु वोभी संपूर्णरूपसें नहिंकरसक्ते क्योंकि–शौच स्नान भिक्षाऽऽदिकों लिये चलने फिरने खाने पीने आदिकों कर संन्यासीओंसेभी अनेकसूक्ष्मजीवोंकी हिंसा होतीहै और प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंका भयदियेबिना निर्वाह होहीनहींसक्ता, तथाही कहताहुं सुनिये ॥

यदि खेतालिये हल नहींचलाते तो गृहस्थोंका निर्वाह नहींहोसक्ता क्योंकि सर्वजनीभाई तथा किसी महात्माकाभी अन्नपदाहुएबिना अभय दानसेंही जीवन नहींरहसक्ता ॥

यदि खेतालिये बैलभैंसाको जोतकर हलचलातेहैं तो लाठीमारसें क्लेश दियेबिना भयदिएबिना बैलभैंसे नहींचलते अत: बैलभैंसोंको अवश्यभय देनाहोताहै फिर हलके चलानेसे असंख्यक्षुद्रजीव मरते हैं ऐसेहीकूपके अरटमें, गेहूंआदिकोंके गाहनमें गाडीमें कोलूमें खरासमें इत्यादिकोंमें मार पीटसे भयदियेबिना बैलभैंसेआदिक काम नहींदेते उन अरटआदिकोंके चलाएबिना गृहस्थजनोंका निर्वाह नहींहोसक्ता और अरट गाडीआदिकों के चलानेसे असंख्यक्षुद्रजीवोंका मरणभी होताहीहै ॥

ऐसेही हस्ती ऊंठ घोड़ा खच्चर गधाऽऽदिकभी मारपीटकर भयदिये बिना काम नहींदेते इनसें कामालियेबिना गृहस्थजनोंका निर्वाहभी नहींहो

सक्ता और इनसें कामलेनेमें असंख्यक्षुद्रजीवभी मरतेहैं, अतःगृहस्थजनोंनें योग्यताके विचार पूर्वक अभयदेना योग्यहो सक्ताहै ॥

हेमित्र—मच्छर डांस अतिकोमल जीवहैं यदि उनको वस्त्रादिकोंसें हटातेहैं तो वो मरतेहैं, यदि नहींहटाते तो मनुष्यनको अतिक्लेशहोताहै ॥

यदि धूंआं करतेहैं तो मच्छर डांसोंको दुःख होताहै, यदि धूंआं नहींकरते तो गौभैंसआदिक मच्छरडांसोंसें दुःख पापाकर तड़फतेहैं मरतेहैं।

खटमल जूंआंवगैरह जीवोंको यदि खाटसें शरीरसें निकाल डालतेहैं तो उनको चींटी वगैरह खाजातेहैं वो जीवित नहीं रहसक्ते यदि नहींनिकालें तो मनुष्योंको दुःख होताहै, जूंआलीखांसें दुर्दशाभी होतीहै ॥

और कई गौभैंस घोड़ा खच्चर गधाऽऽदिकोंके शरीर के किसीअंगमें जीव पडजातेहैं तो यदि उसपर फीनैल मुरककपूरआदिक औषध लगावें तो सो असंख्य जीव मरतेहैं यदि औषध नहींलगावें तो गौ भैंस घोड़ा आदि मरतेहैं ॥

कई खूओंमें पूरेआदिक जीव पैदा होजातेहैं यदि उसका जल निकालाजावे तो वो असंख्यजीव मरतेहैं, यदि उसखूएमें औषध गेरें तोभी वो लाखोंजीव मरतेहैं।

यदि जल नहींनिकालें औषधभी नहींगेरें तो उस खराबजलके पीने सें मनुष्य बीमारहोजातेहैं मरतेहैं ॥

वर्षाऋतुमें प्रायः गेहूं चना जौआदिकोंमें सुसरीआदिजीव पैदाहो जातेहैं फिर यदि उन गेहूं चनाऽऽदिकों को धूपमें नहींफैलायाजावे तो वो सब अन्न जीवोंसे खायाजाताहै इस्से मनुष्योंका निर्वाहही नहींहोसक्ता, इसी सें जैनीभाईभी ऐसेअन्नको धूपमें फैलातेहीहैं जब वोअन्न धूपमें फैलाया जावेतो उसअन्नसें निकसकर असंख्यजीव मरतेहैं ॥

विदितरहे कि--रुधिरमें मलेमें असंख्यजीव होतेहैं तथा दद्रुप्लेग प्रभृतिरोगोंके कृमि भिन्नाभिन्नजातिके होतेहैं ॥

यदि मनुष्यनको मलविकारहुए जुलाब करायाजावे तो हजारों मल-कृमि मरतेहैं, यदि जुलाब नहींकरावें तो मनुष्य बीमारीसें मरतेहैं, ऐसेही रुधिरशोधक औषधसेभी जानो ॥

यदि दद्रु आदिरोगोंका औषधकरें तो सो हजारों रोगकृमि मरतेहैं यदि औषधनहींकरें तो मनुष्य दुःख भोग २ कर मरते हैं ।

हेमित्र--इत्यादिक असंख्यजगोंमें सूक्ष्मजीवोंकी हिंसाका निवारण नहींहोसक्ता तो अब इसमें आप कहें कि गौघोड़ामनुष्यादिक श्रेष्ठजीवोंकी हिंसाकीउपेक्षाकरके क्षुद्रजीवोंकी रक्षामें तत्परहोना क्या अन्यायनहींहै,जैसेकि राजाम्र वा कल्पवृक्षको काटकर बबूरकी, रक्षाकरणी, वाडकरणी अन्याय नहींहै वो प्रसिद्धअन्यायहीहै ॥

क्योंकि--ऐसे कौनबुद्धिमान्पुरुष कहसक्ताहैकि--गौभैंसघोड़ाऽऽदिक तो दुःखपायें मरें परंतु औषधसे उनके ब्रणकृमि नहींमरें ।

और ऐसेभी बुद्धिमान् वा मूढ़ कोईभीपुरुष नहींकहसक्ता कि--बीमारीसें तकलीफपाय २ कर मनुष्य तो मरें परंतु औषधोंसें मलकृमि रुधिरकृमि रोगकृमि ब्रणकृमि न तो तकलीफ पावें नांहीं मरें ॥

बहुतसे पूज्ययतिआदिके जैनीभाईओंकाभी चिकित्सा करणाही व्यापारहै अतः जैनीभाईभी औषध कर्ते करातेहीहैं सो औषधोंका करणा योग्यहीहै क्योंकि--आयुर्वेदसें विहित औषधोंकर जो कृपकृमि ब्रणकृमि आदिक मरतेहैं वो आयुर्वेदविहिताहिंसाहै ॥

हेभ्रातः--देखो प्रमाणांक १३४ आदिकोंको वराहपुराणमें साक्षात्

वराहभगवानेभी विहितमृगोंके पक्षीओंके मांसका विधानकराहै अतः तुम्हारे लिखे वराहपुराणके श्लोकमें वृथाहिंसाका त्यागकहाजानना ॥

पूर्वपक्षी०--भगवद्गीतामेंभी दैवीसम्पत् और आसुरीसम्पत् जोदिखाई गईहै उनमें दैवीसम्पत् मोक्षको देने वालीहै और आसुरी सम्पत् केवल दुर्गतिका कारणहै दैवीसम्पतमेंभी केवलअभयदानकोही मुख्य रखाहै यथा **अभयंसत्त्वसंशुद्धि ज्ञानयोगव्यवस्थितिः** अ० १६। १ ॥ इत्यादिक बहुतश्लोकहैं, भावार्थ अभय याने भयका अभाव १, सत्त्वसंशुद्धि चित्तसंशुद्धि अर्थात चित्तप्रसन्नता २, आत्मज्ञान प्राप्तकरनेके उपायोंमें श्रद्धाही ज्ञानयोगव्यवस्थितिहै ३, इत्यादिक ।

आस्तिक०--यहांभाष्यकारभी अभयपदका अभीरुता अर्थकरतेहैं औरभाष्यकी आनन्दगिरिटीका **अभीरुता शास्त्रोपदिष्टेऽर्थे संदेहंहित्वाऽनुष्ठाननिष्ठत्वम्** ॥ अभयका अर्थ, अभीरुता, भयरहितहोना अर्थात अपने २ वर्णआश्रमके योग्य शास्त्रने उपदेशकरे अर्थमें संशयको त्यागकरके अनुष्ठानमें स्थिरताही अभयपदका अर्थहै और विजयधर्मसूरिजीनेभी भयका अभाव अभयपदका अर्थलिखाहै तो दानपद अपनीतर्फसे लगाकर जो विजयधर्मसूरिजीने पहिलेअभयदान लिखाहै वह यहां अयुक्तहीहै ॥

और अभयदानके विषयमें तो मैं अभीविस्तारसें लिखआयाहुं ।

(जैनिओंका उपहास)--**हिंसायत्रपरोधर्मः अधर्मस्तत्रकीदृशः। ब्राह्मणोयत्रमांसाशी चाण्डालस्तत्रकीदृशः॥**

अर्थ—जिसमतमें हिंसा परमधर्महै उसमतमें अधर्मकैसाहै, जिसमतमें ब्राह्मण मांसाशीहै उसमतमें चाण्डाल कैसाहै ॥

उत्तर—श्रुत्यादिविहिताहिंसा धर्मोयत्रसखे स्मृतः। अधर्मस्तत्रविज्ञेय स्तदन्यासावृथैवसा ७ ब्राह्मणोयत्रहेमित्र विहितामिषभुक्स्मृतः ॥ चाण्डालस्तत्रविज्ञेयो निषिद्धामिषभोजनः ॥ ८ ॥

टीका—हेसखे जिसमतमें श्रुतिआदिकोंमें विहितहिंसा धर्म स्मृतिओंमें कहाहै, उसमतमें अविहितहिंसा अधर्महै वो अविहितहिंसा वृथाहिंसा कहीजातीहै ॥ ७ ॥

हेप्रियमित्र—जिसमतमें ब्राह्मण विहितमांसखानेवाला स्मृतिओंमें कहाहै, उसमतमें निषिद्धमांसखानेवाला चांडालहै ॥ ८ ॥

पूर्वपक्षी०—मनुस्मृतिके अ० ११ का—अभोज्यानांतु भुक्त्वान्नं स्त्रीशूद्रोच्छिष्टमेवच॥ जग्ध्वामांसमभक्ष्यंच सप्तरात्रंयवान्पिबेत् ॥ १५२ ॥

भावार्थ—जिसकाअन्न खानेलायक नहींहै उसका अन्न खाकर और स्त्री तथा शूद्रका जूंठा खाकर तथा सर्वदा अभक्ष्यही याने नहींखानेलायक मांसको खाकर शुद्धहोनाचाहे तो सातदिनतक यवका पानी पीना चाहिये ॥

विवेचन—प्रायश्चित्तविधिमें मांसखानेमें प्रायश्चित्त भी दिखलायाहै तो भी हिंसासें लोक क्यों नहींडरतेहै ॥

आस्तिक०—हेपाठक-विजयधर्मसूरीजी बहुतजगे दुराग्रहकर सत्य-अर्थको छिपाके असत्यअर्थकोही लिखतेहैं। देखोइसमनुश्लोककीओर टीकाभी दिखलाताहूं ॥

मेधातिथिकामनुभाष्य प्र० ॥ १३८—**अभक्ष्यंमांसं प्लवहंसचक्रवाकादीनाम् ॥**

अर्थ—प्लवहंसचकवाऽऽदिकोंके अभक्ष्यमांसको खाएतो सातदिन जौं पीवे ॥

सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० १३६—**अभक्ष्यंमांसं जालपादादीनाम् ॥**

अर्थ—जालकीन्याई जिनके पैरहोवें ऐसे हंस बतकआदिकोंके अभक्ष्यमांसको खाए तो सातादिन जौं पीवें ॥

विवेचन—मनुश्लोकमेंभी अभक्ष्यमांसके खानेका यिह सातादिन जौं पीने प्रायश्चित्तकहाहै उनकी टीकामेंभी प्लवहंसचकवाऽऽदिकोंका अभक्ष्यमांस अर्थ लिखाहै तो आश्चर्यहै कि सत्यअर्थको छिपाकर धोखादेनेके महापापसें क्यों नहींडरते. विहितमांसके खानेका प्रायश्चित्त नहीं प्रत्युत देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंको विहितमांसके नहींखानेके अतिदोष कहेहैं प्लवनाम बानरका ओर किसीपक्षीविशेषकाहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—विधिविहितमांसखानेमें दोष न माननेवालोंको देखनाचाहिये कि—श्रीमद्भागवतीय चतुर्थस्कन्धके २५ वें अध्यायमें प्राचीनबर्हिष राजाने—नारदजीसें पूछाकि मेरा मन स्थिर क्यों नहींरहताहै तब नारदजीने योगबलसें देखकर कहाकि—आपनेजो प्राणियोंके बधवाले बहुतसें यज्ञ

कियेहैं इसीसें आपका चित्त स्थिर नहींरहताहै, ऐसा कहकर योगबलसें राजाको यज्ञमें मारेहुए पशुओंका दृश्य आकशमें दिखलाया और नारदजी नें कहाकि हेराजन् दयारहित होकर हजारोंपशुओंको यज्ञमें जो तुमने मारा है वे पशु इससमय क्रुद्धहोकर यह रस्ता देखरहेहैं कि-राजा मरकर कब आवे और हमलोग उसको अस्त्रोंसें काटकर कब अपनाबदला चुकावें देखिये श्रीमद्भागवतके चतुर्थस्कन्धमें—

भोभोःप्रजापतेराजन् पशून्पश्यत्वयाऽध्वरे ॥ संज्ञापितान्जीवसंघान् निर्घृणेनसहस्रशः ॥ ७॥ एतेत्वांसंप्रतीक्षन्ते स्मरन्तोवैशसंतव ॥ संपरेत-मयःकूटै श्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ॥ ८ ॥

इनदोनों श्लोकोंका भावार्थ उपरही स्पष्ट होचुकाहै ॥

आस्तिक०—उन पशुयज्ञोंकरही प्राचीनबर्हिषराजा निवृत्तिमार्गके अधिकारीहुए इस्में राज्यको गृहस्थाश्रमको गृहस्थकेउनयज्ञोंको छुडवाकर वानप्रस्थकरानेलिये नारदजीने ऐसीरचना करदिखलाई इस्सें देखो भागवत

प्राचीनबर्हीराजर्षिः प्रजासर्गाभिरक्षणे । आदिश्यपुत्रानगमत तपसेकपिलाश्रमम् ।स्क०४।अ०२९।८३।

अर्थ—जब उपदेशकर्के नारदजी सिद्धलोकको चलेगए तबप्राचीन बर्हिषराजा प्रजासृष्टि पालनेलिये (प्रचेतस पुत्र आवें तो वो राज्यमें स्थापित करदेने) ऐसे मंत्रीजनोंको कहकर आप तपलिये कपिलमुनिके आश्रम को चलागया ॥

देखो प्रमाणांक १२० को युधिष्ठिरके यज्ञमें ३०१ अजआदिपशु वेदविधिमें मारेगए, फिरदेखो स्वर्गारोहनपर्व १४ वेंको जब युधिष्ठिरजी स्वर्गकोगए तब मार्गमें नांही वोपशु आए और नांही युधिष्ठिरको किसीने अस्त्रोंसें काटा और युधिष्ठिरजीनें तो बनमें हजारोंमृगोंकोंभी माराहै तोभी शरीरसहितही स्वर्गमें पहुंचे ॥

औरदेखो महाराजादशरथके यज्ञमेंभी ३०१ पशुओंका बलिप्रदान करागया ॥

बा० रामायण प्र० १४०—पशूनांत्रिशतंतत्र यूपेषुनियतंतदा ॥ अश्वरत्नोत्तमंतत्र राज्ञोदशरथस्यह ॥ बा०का० १॥स० १४॥३२ ॥

बा०रामायण प्र० १४१—कौसल्यातंहयंतत्र परिचर्य्यसमंततः ॥ कृपाणैर्विशशासैनं त्रिभिः परमयामुदा ॥ ३३ ॥

राजादशरथके उसयज्ञमें तब तीनसौ पशु श्रेष्ठ यूपोंमें बान्धेगए, तहां अश्वोंमें रत्नरूप उत्तमअश्वथा ॥ ३२ ॥

तहां प्रोक्षणादिकोंसें संस्कारकर्के उस अश्वको कौसल्या महारानी परमहर्षसें तीनकृपाणोंकर काटतीभई ॥ ३३ ॥

हेपाठक—अयोध्यापुरी सरयूतीर्थके तटपर महाराजादशरथने ऐसा यज्ञकरा जिसमें पशुओंका बलिप्रदानहुआ उसयज्ञमें रामलक्ष्मणआदि चार पुत्ररत्नप्राप्तहुए ॥

ऐसेदशअश्वमेधयज्ञ श्रीरामजीनेंभी करेथे सो देखो प्रमाणांक १३० में

ऐसा अश्वमेधयज्ञ महाराजा सगरनेंभी कराथा देखो।

भागवत प्र० १४२—तंपरिक्रम्यशिरसा प्रसाद्यहय-मानयत् ॥ सगरस्तेनपशुना क्रतुशेषंसमापयत् ॥ स्क० ९॥अ० ८॥३०॥

अर्थ—प्रक्रमाकर्के उसकपिलजीको शिरसें प्रमाणकर प्रसन्नकर्के सगर का पौत्रः अंशुमान् अश्वको ल्याताभया सगरमहाराजा उसपशुसें यज्ञशेषको समाप्त कर्ताभया ॥३०॥

दौष्यन्ति महाराजानेंभी गंगा और यमुनाके तटपर ५५ अश्वमेधयज्ञ करे देखो भागवतप्र०१४३—पञ्चपञ्चाशतामेध्यै गंगा यामनुवाजिभिः ॥ मामतेयंपुरोधायययमुनाया-मनुप्रभुः ॥स्क०९॥अ०२०॥२५॥ अर्थ ममताके पुत्र दीर्घतमाको पुरोहित बनाकर यज्ञके योग्य पवित्र ५५ अश्वनसें गंगायमुनाके तटपर अनुलोमविधिमें दौष्यन्तिमहाराजा यज्ञकर्ताभया ॥

ऐसे २ विख्यात महाराजे सबही यज्ञ कर्तेआये हैं सो दशरथसगर रन्तिदेव युधिष्ठिरआदिक स्वर्गमेंही पहुंचे उनके मार्गमें नांहीं कोईपशुआया और नांहीं उनको किसीने काटा ॥

उन हजारों पशुओंने मरकर जन्मान्तरमें देशांतरमें जाकर पूर्वजन्मका स्मरणकर्के वदलाचुकाना, स्पष्टअसंभवभीहै दशरथ रन्तिदेव युधिष्ठिर अर्जुनादिकोंकी स्वर्गमें प्राप्ति इतिहासग्रन्थोंमें कहीहीहै ॥

और प्रमाणांक ६९ आदिकोंसेभी विधिविहितहिंसाका शुभफलही सिद्धहै और प्राचीनबर्हिषराजाभी ऐसे यज्ञोंकरही शुद्धचित्त निवृत्तिमार्गका

अधिकारीहुआ, उसको राज्यगृहस्थाश्रमादि छुडवाकर वानप्रस्थकरानेलिये नारदजीने ऐसीरचना करादिखलाई, जैसे कि-विष्णुनारायणने नारदजीका मुख वानरका रचदियाथा ॥

पूर्वपक्षी०--यज्ञमें हिंसाकरणेका निषेध महाभारतशान्तिपर्वके मोक्षाधिकारमें अ० २७३ पृष्ठ १५४ में लिखाहै यथा-**तस्यतेनानुभावेन मृगहिंसात्मनस्तदा ॥ तपोमहत्समुच्छिन्नं तस्माद्धिंसानयज्ञिया** ॥ १८ ॥

महाभारत अ० १४४ **अहिंसासकलोधर्मो हिंसाधर्मस्तथाहितः ॥ सत्यंतेऽहंप्रवक्ष्यामि नोधर्मःसत्यवादिनाम्** ॥ २० ॥

भावार्थ--स्वर्गके अनुभावसें एकमुनिनें मृगकी हिंसाकरी तब उस मुनिका जन्मभरका बड़ाभारी तप नष्टहोगया अतएव हिंसासें यज्ञभी हितकर नहींहै वस्तुतः अहिंसाही सकलधर्महै और अहिंसाही सच्चा हितकरहै मैं तुमसें सत्यकहताहुं कि-सत्यवादीपुरुषका हिंसाकरनेका धर्म नहींहै ॥

आस्तिक०-खेदहै कि-महाभारतकी पं० नीलकण्ठकृतटीकामें इस २० वें श्लोकके द्वितीयपादमें हिंसापदछेदकर्के अर्थकराहै, उसको अहिंसापद दुराग्रहसें विजयधर्मसूरीजैनीजी बनातेहैं-और इसके चतुर्थपादमें योधर्मः वा नोधर्मः, ऐसा पाठभेदहै वोभी नीलकण्ठजीनें टीकामें दिखलायाहै ॥ -

हेप्रियपाठक-महाभारतमें एक ब्राह्मणवानप्रस्थके यज्ञके यिहश्लोकहैं अतः इसप्रकरणमें यिह श्लोक उपयोगी नहींहैं क्योंकि-यहां प्रवृत्तिमार्गवाले

गृहस्थजनोंकेलिए प्रसंग चलाहुआहै वानप्रस्थोंकेलिये नहीं तथापि वान प्रस्थब्राह्मणकी वोकथाही संक्षेपसें लिखताहुं ॥

सत्यनामा उञ्छवृत्ति एकऋषिथा पुष्करधारिणीनामा उसकी स्त्रीथी वनमें जायके उस ऋषिने श्यामाकअन्न और शाक आदिकोंसें यज्ञ आरम्भ किया, वनमें उसऋषिके समीप धर्मराज आयके किसीनिमित्तसें मृगरूपहोता भया, मृगरूपहुए धर्मराजनें उसमुनिको कहा कि–मंत्रकाअंग जो पशुहै उस पशुसेंविना तूं यज्ञ कर्ताहैं, यिह तूं ठीक नहींकर्ता ।

यदि तुम कहो कि–मैं निर्धनपुरुषहुं पशुको खरीद नहींसक्ता तो हेब्रह्मन् अग्निमें मेरेको फैंक उससें तूं स्वर्गको जा, फिर तदनन्तर सावित्री भगवतीनें प्रत्यक्षहोकर कहा कि—मेरेनिमित्त यिहपशु अग्निमें हवन करा चाहिये तब उसब्राह्मणनें कहा कि-मैं सहवासीमृगको नहींमारूंगा, ऐसें कहीहुई सो सावित्री भगवती "यिह दुष्टाचरित क्याहै" ऐसें उसमूढ़जनकी उपेक्षाकर्के निवृत्तहुई सावित्रीभगवती रसातल देखनेकी इच्छासे यज्ञाग्निमें प्रविष्ट होगई ।

पुनः बद्धांजलिहुआ हरिणमृग उसब्राह्मणसें प्रार्थनाकर्ताभया कि 'मेरेको अग्निमें फैंक' फिर उसब्राह्मणने उसमृगको स्पर्शकर्के कहा कि–चले जाईए तदनन्तर वो हरिण आठ कदम जाकर फिर हटआया, पुनः कहने लगा कि–हेसत्यब्राह्मण मेरेको मार यज्ञलिए हतहुआ मैं सद्गतिको प्राप्त होवुंगा ॥

और मेरेदियेहुंएं चक्षुःसें स्वर्गकी अप्सराओंको विचित्रविमानोंको गंधर्वों को देख तदनन्तर "ऐसास्वर्ग मेरेको मिले" ऐसी इच्छाकर लगेहुएचक्षुःसें वो ब्राह्मण चिरतक देखकर्के और मृगको स्वर्गार्थीदेखकर हिंसासें स्वर्गवास

निश्चित कर्ताभया मृगहोकर वोधर्मराज वहुतवर्ष वनमें रहकर जिसनिमित्तसें मृगहुआथा उसका निस्तारा अपना उद्धारकिया ॥

हे पाठक – इतनीकथासें अनन्तर यिहश्लोकहैं

उनदोनोंश्लोकोंका अर्थ – "पशुको मारकर स्वर्गमें प्राप्तहोउंगा" इस भावसें मृगकी हिंसामें मनवाले उस वानप्रस्थब्राह्मणका महत्तप नष्टहुआ उससें वानप्रस्थ ब्राह्मणको हिंसा यज्ञलिये हितकर नहीं ॥१८॥—अहिंसा सकलधर्महै वैसेही स्वर्गदायिहोनेसें हिंसाधर्म हितकरहै, मैं तुझको सत्य कहताहुं हमारा सत्यवादीओंका धर्महै अथवा मैं तुझको सत्यकहताहुं सत्यवादीओंका जो धर्महै ॥२०॥

अव विचारकरें कि—वो वानप्रस्थब्राह्मण तो शाकआदिकोंसेंही यज्ञ करनेलगाथा, फिर उसने मृगको माराही नहीं तो उसके तपका नाश क्यों हुआ ॥

और उसब्राह्मणनें सावित्रीभगवतीके वाक्यकाभी आदर नहींकरा, तथा मृगरूपधर्मराजके वाक्यनकाभी आदर नहींकरा, अर्थात् सावित्रीभगवती आदिकोंके कहने से भी उसने मृगहिंसा नहींकी तोफिर उसब्राह्मणके तपका क्षय क्योंहुआ ॥

यदि आप कहो कि–उसब्राह्मणको मृगके मारणेसें स्वर्गप्राप्तिका निश्चयहुआ उससें उसकेतपका क्षयहुआ तोहेभ्रातः वोनिश्चयभी धर्मराजके वारंवारकथनसें और गन्धर्वअप्सराआदिकोंके दिखलानेसें हुआ अतः ऐसे- निश्चयके करानेवाला धर्मराजथा इस्सें धर्मराजके तपका क्षयहोनाचाहियेथा ॥

फिर वो निश्चयभी सत्यहीथा क्योंकि देखो तुम्हारेलिखे इस २० वें श्लोकके द्वितीयपादकी ॥

नीलकण्ठीटीका प्र० १४५—तथातेनस्वर्गप्रदत्त्वेनरूपेणाहितः

अर्थ—वैसे स्वर्गदायीरूपसें हिंसाधर्म हितकरहै ॥

और प्रमाणांक६६ आदिकोंमेंभी विधिविहितहिंसाका श्रेष्ठफलही दिखलायाहै वो रन्तिदेव दशरथ युधिष्ठिरआदिकोंकोभी श्रेष्ठफलहीहुआहै तो ब्राह्मणके तपका क्षयक्यों हुआ सो अर्थसें जाना जाताहै कि-सावित्रीभगवतीके वाक्यका अनादरकरणेकर उसकेतपका क्षय हुआ ॥

—*०*—

हीर जो १८ वे श्लोक में कहाहै कि -यज्ञलिये हिंसा हितकरनहीं,,वो वानप्रस्थ ब्राह्मणलिये कहाहै क्योंकि यदि क्षत्रियादि गृहस्थोंकेलियेभी यज्ञीयहिंसाहितकर न होतीतो -देखो प्रमाणांक १२६को व्यासभगवान् पापोंकी निवृत्तिलिये हिंसायुक्त अश्वमेधका उपदेश क्योंकरसक्तेथे ॥

फिर ऐसेयज्ञमें आपकृष्णभगवान् और व्यासप्रभृतिमहर्षिजन संमिलित कैसे होसक्तेथे ॥

महाभारत प्र० १४६— राज्ञोमहानसेपूर्वं रन्तिदेवस्य वैद्विज । द्वेसहस्रेतुबध्येते पशूनामन्वहंतदा । समांसंददतोह्यन्नं रन्तिदेवस्यनित्यशः ॥ पर्व ३ ॥ अ० २०८ ॥ ८ ॥ अन्नस्याहिप्रदानेन रन्तिदेवोदिवंगतः ॥ प० १३ ॥ अ० ११२ ॥ १२ ॥

अर्थ हेद्विज-मांससहितअन्न के दानकरणेवालाजो रन्तिदेव उस रन्तिदेवराजाके पाकस्थानमें दो हजार अजआदिपशु प्रतिदिन मारेजातेथे ॥ ८ ॥ वो रन्तिदेवराजा ऐसेअन्नकेप्रदानकर स्वर्गको प्राप्तहुआ ॥१२॥

देखो मांससहितअन्न के प्रदानकरणेकर रन्तिदेवके तपका पुण्यका क्षय नहींहुआ किन्तु रन्तिदेवजी स्वर्गमेंही पहुंच और सगर युधिष्ठिर आदिकभी असंख्य महाराजे पशुहिंसावाले यज्ञनसे स्वर्गादिउत्तमगतिको प्राप्तहुए अत. विधिविहितहिंसा हितकरही सिद्धहै ॥

यदि आप कहें कि - वो ब्राह्मण वानप्रस्थथा निवृत्तिमार्गवाले वान-प्रस्थको पशुहिंसाका संकल्पकरनाभी योग्यनहींहै इस्से उसके तपका क्षय हुआतो हेमित्र वो मैं प्रथमही लिखचुकाहूं कि- यहांतो प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंकेलिये पशुबलिप्रदानका मांसखानेका विचार चला हुआहै, इस विचार में वानप्रस्थसम्बन्धी यिहश्लोक जैनीभाईके लिखे अनुपयोगीहीहैं ॥

शंका—यदि वानप्रस्थलिये पशुवलिदेना योग्यनहींहैतो श्रीरामजी तथा युधिष्ठिरादिक पांडवभी बनवासमें क्यों मृगोंकोमारकर मांसको खाते और ब्राह्मणोंको खुलाते रहेहैं ॥

समाधान–रामजी तथा पांडवोंने गृहस्थाश्रमका त्यागकर नियत वानप्रस्थकाग्रहण नहींकराथा किन्तु उनका वनवास नैमित्तक हुआहै वो क्षात्रियमहाराजेथे अतः विधिसे विहितमांसको खुलाना व खाना उनका शास्त्र विहित धर्म ही था ॥

शंका-सावित्री भगवतीने उस ब्राह्मणको पशुबलिदानलिये क्यों प्रेरणाकी थी-

समाधान- सावित्री भगवतीका यिह तात्पर्य्यथाकि यदि तूं वानप्रस्थ बनताहैतो जपयज्ञ ध्यानयज्ञकरो यदि गृहस्थब्राह्मणहैतो शास्त्रविधिका उल्लंघन मतकर किंतु विधिसे पशुबलिप्रदानकरो ॥

हे पाठको—ब्राह्मणोंलिये प्रमाणांक १०४ आदिकोंमें विधिको देखो अहिंसादिग्दर्शनग्रन्थमें विजयधर्मसूरिजीने

महाभारतके—अव्यवस्थितमर्यादै विमूढैर्नास्तिकैर्नरैः॥ संशयात्मभिरव्यक्तै हिंसासमनुवर्णिता॥ ॥ पर्व १२ ॥ अ० २६६ ॥ ४ ॥

सर्वकर्मस्वहिंसांहि धर्मात्मामनुरब्रवीत्॥ कामकाराद्विहिंसन्ति वहिर्वेद्यांपशून्नरः ॥ ५ ॥

तस्मात्प्रमाणतः कार्यो धर्मःसूक्ष्मोविजानता ॥ अहिंसासर्वभूतेभ्यो धर्मेभ्योज्यायसीमता ॥ ६ ॥

इसके अगला एकसातवांश्लोकको विजयधर्मसूरिजीनें नहींलिखा क्योंकि वो एकतर्फेश्लोकलिखकर अन्यायसें अपनाजैनमत सिद्धकराचाहतेहैं वो सातवांश्लोकभी यहां मैं लिखताहुं ॥

उपोष्यसंशितोभूत्वा हित्वावेदकृताःश्रुतीः ॥
आचारइत्यनाचारः कृपणाःफलहेतवः ॥ ७ ॥
यदियज्ञांश्चवृक्षांश्च यूपांश्चोद्दिश्यमानवः ॥
वृथामांसंनखादन्ति नैषधर्मःप्रशस्यते ॥ ८ ॥
सुरांमत्स्यान्मधुमांस मासवंकृसरोदनम् ॥
धूर्त्तैःप्रवर्त्तितंह्येत न्नैतद्वेदेषुकल्पितम् ॥ ९ ॥

इत्यादिक श्लोकलिखे हैं, उनका अर्थ—विचख्नुराजानें गोमेध यज्ञमें

वृषभके बलिप्रदानको व गायोंके विलापको देखकर कहाकि-क्षत्रियोंका यज्ञ हिंसावाला होताहै, उससे भिन्नयज्ञ ब्राह्मणोंकाहोताहै,, यिह मर्यादाहै ऐसी मर्यादाको जिनोंने दूरकरदियाहै ऐसे विमूढ नास्तिकसंशयवाले व यज्ञों कर ख्यातिचाहनेवाले जनोंने हिंसाको वर्णनकराहै ॥ ४ ॥ सर्वकर्मों में अहिंसाको धर्मात्मा मनुजी कहतेभए जिससे अतः स्वर्गादिकोंके रागसे पुरुष वेदिसेंबाहिर पशुओंकोमारतेहैं ॥ ५ ॥ इन्सें प्रमाणोंके बलको और दुर्बलताको जाननेवालेपुरुषोंने प्रबलप्रमाणोंकोदेखकर सूक्ष्मधर्म करणा योग्यहै ॥ ६ ॥ सर्वजीवोंकी अहिंसा गृहस्थजनोंसे होनहींसक्ती, ऐसी शंका हुए उत्तर कहतेहैं कि 'उपोष्य' ग्राम के समीपनिवासकर तीक्ष्णव्रतवाला संन्यासी होकरके वेदोंमें कहेफलवाक्यनको त्यागकर, गृहस्थके आचारसें रहितहोवे स्वर्गादिफलकी अभिलाषावाले पुरुषक्षुद्रहोतेहैं ॥ ७ ॥ यदि यज्ञोंका वृक्षोंका यूपोंका उद्देशकरके मनुष्य वृथामांसकोनहींखातेतो वोयिह धर्म प्रशंसनीय नहींहै ॥८॥ सुरामत्स्यशहतमांसमद्य कृसरादन,तिलमिश्रित चावलों का भात, यिह धूर्तोंने प्रवृत्तकरेहै, यिह वेदमें नहींहैं ॥९॥

अब विचख्नुराजाके इनश्लोकोंमेंभी निर्णय कीजिये । विचख्नुराजा का यिहकथन गोमेधयज्ञविषयका ब्राह्मणोंप्रतिहै अतः इसके विशेषसमाधान की अपेक्षा नहींहै ॥

यदि आप कहें कि-सर्वयज्ञोंविषयकाहै तो विचख्नुराजाका कथन अयुक्तहीहै, तथाही कहताहूं सुनिये ॥

इसचतुर्थश्लोककी नीलकण्ठीटीका प्र० १४७-**हिंस्रःक्षत्रिययज्ञ स्तदन्योब्राह्मणयज्ञइतिमर्यादा विचालितायेषांतैः**

अर्थ-विचख्नुराजा कहतेहैं कि-हिंसावाला क्षत्रियोंका यज्ञ, उस्सें भिन्न ब्राह्मणोंका होताहै ऐसीमर्यादासे रहित विमूढ नास्तिक संशयवालेपुरुषोंने

हिंसा वर्णनकीहै, सो यिहकथन अयुक्तहीहै क्योंकि देखो प्रमाणांक १७६ आदिकोंको वेदोंके संहिताभागोंमें ब्राह्मणभागोंमें पशुबलिप्रदानका विधान कराहुआहै तदनुसार मनुस्मृति वसिष्टस्मृति श्रौतसूत्रादिकोंमेंभी पशुहिंसा का विधान करा हुआहै तो उसके विधायक योगयुक्तपरमपूज्यपुरुषोंमें ऐसे कुत्सितशब्द कहने संभवें नहीं किंतु उनपरमपूज्यपुरुषोंमें कुत्सितशब्द-कहनेवालेविचरव्नुराजामें वो कुत्सितशब्द कहनेसंभवेंगे ॥

फिर पंचमश्लोकमें कहाहै, सर्वकर्मोंमें अहिंसाको मनुजीने कहतेभए सो हेमित्र प्रमाणांक ४६ आदिकोंमें मनुआदिमहर्षिओंने वेदविहिताहिंसा को अहिंसारूप मानाहीहै, और प्रमाणांक १०४ में जो मनुजीने यज्ञलिये व मातापिताऽऽदिकोंकी जीविकालियेभी ब्राह्मणोंको विहितमृगपक्षीओंके मारणे की आज्ञाकीहै वोभी विहितहोनेसे अहिंसारूपही जाननी ॥

होर जो पंचमश्लोकमेंकहाहै कि स्वर्गादिकोंके रागसें पुरुष पशुओं को मारतेहैं, सोयिहभी नियम नहीहै क्योंकि यद्यपि यज्ञीयाहिंसा स्वर्गका हेतु होनेसें स्वर्गआदिकोंके रागसेंभी पुरुषोंने पशुबलिप्रदान कराहै तथापि व्यासादिकोंके उपदेशकर युधिष्ठिरप्रभृतिमहाराजोंने पापों कीनिवृत्तिलियेभी अश्वमेधादियज्ञोंमें पशुओंका बलिप्रदान करायाहै ॥

छठश्लोकमें कहाहै कि—प्रबल प्रमाणोंसे सूक्ष्मधर्म करणायोग्यहै सोठीकहै होर कहाहै कि–धर्मोंसे सर्वभूतोंकी अहिंसा श्रेष्ठहै, परंतु प्रमाणांक ४६ आदिकोंसे वेदविहितहिंसा अहिंसाहीहै ।

आठवेंश्लोकमें कहाहै कि—यज्ञादिकोंके उद्देशसें वृथा मांस को नहींखाते सोयिहधर्म प्रशंसनीय नहींहै, सो यिह कथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि श्रुतिस्मृतिसूत्रग्रन्थोंमें जिसधर्मका विधानकराहै फिर मर्यादा पुरुषो त्तम श्रीरामआदिकअवतार और अगस्त्यभरद्वाज वसिष्ट प्रभृतिमहर्षिजन

न इक्ष्वाकु दशरथ युधिष्ठिर आदि धर्मात्मा महाराजे जिसधर्ममें प्रवृत्तहुएहैं सोईधर्म आस्तिकपुरुषोंमें प्रशंसनीयहोसक्ताहै इनसबनोंसे विरुद्ध कोईधर्म किसी के भी कहनेकर प्रशंसनीय नहीं हो सक्ता ॥

नवमेंश्लोकमें जो कहाकि- 'मत्स्य शहत मांस कृसरौदनआदिक धूर्त्तोंने प्रवृतकरेहैं यिह वेदमें नहींहैं, सोयिह विचख्नुराजाका कथनभी असत्यहीहै अनुचित्तभीहै क्योंकि वेदोंमें सूत्रोंमे स्मृतिओंमे पशुबलिप्रदान का मांसभक्षणका अनेक २ वाक्यनमें विधानकराहुआहै उनमें केईकवाक्य इसग्रन्थमेंभी दिखलाय दियेहैं और शहतभीश्राद्धआदिकर्मोंमें विहित सब लोकजानतेहैं ॥

यजुर्वेदकी बृहदारण्यकउपनिषद-**अथ यइच्छेद्दुहिता मे पण्डिताजायेत सर्वमायुरियादिति तिलौदनंपाच यित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयाता मीश्वरौजनयितवै** ब्रा० ४ ॥२७॥

अर्थ-फिरजो ऐसे चाहे कि मेरे पण्डितापुत्री उत्पन्नहो वोपूर्णआयु कोप्राप्तहो वो स्त्रीपुरुष दोनो तिलचावल पकाकर घृतडालकर खाएं तोऐसी पुत्री उत्पन्नहोगी ॥१७॥

देखिये-इत्यादिक वाक्यनमें कृसरौदनका स्पष्टविधानहै यदि आप कहेंकि-विचख्नुराजाने इसप्रसंगके सातवें श्लोकमें कहाहै कि गृहस्थके आचारसंगहित तीक्ष्णव्रतवाला संन्यासीहोवे अर्थात् संन्यासीके अधिकारसे यिहसबश्लोक विचख्नुराजाने कहेहैं, तो वो ठीकहै ॥

और पहिलेभी कहागयाहै कि-और श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रस्मृतिओंकी न्याई इतिहासग्रन्थ पुराणग्रन्थ बलवालेप्रमाण नहींहैं क्योंकि-इतिहास पुराणोंमें कहीं ऋषिका, कहींराजाका, कहींवैश्यका, कहीं व्याधका, कहीं

भिल्लका, कहीं पशुका, कहीं कीटका, कथन चलपड़ताहै और सूत्रग्रन्थ स्मृतिग्रन्थ तो एकएक युञ्जानयोगी महर्षिका उपदेशरूपहैं अतः श्रुतिसूत्र स्मृतिओंके अनुसारिवाक्यही इतिहासपुराणोंके प्रमाण मानेजातेहैं, श्रुति स्मृतिओंसे विरुद्ध यदि विचख्नुराजाका कथनहो वा होरकिसीका कथनहो वो प्रमाणरूप नहींहोसक्ता ॥

दृष्टान्त-जैसे तुलाधार वैश्यका कथन ॥

महाभारत प्र०१४८—**यस्तथाभावितात्मास्यात्सगामालब्धुमर्हति ।** पर्व १२ ॥ अ० २६४ ॥ ३२ ॥

इसपर नीलकण्ठीटीका प्र०१४६—**भावितात्मा योगाभ्यासशोधितचित्तःसमधुपर्के गांहिंसितुमर्हति ॥**

अर्थ—योगाभ्यासकर शुद्धचित्तवालेनें मधुपर्कमें गोमेधकरणायोग्यहै ऐसा तुलाधारका वाक्य समीचीन नहींहै, वो क्या माननीय होसक्ताहै अर्थात् वो माननीय नहींहै ॥

—:०:—

और अहिंसादिग्दर्शनमें इन्द्रादिकदेवता और ऋषिओंके संवादके महाभारतके श्लोकलिखेहैं सो विस्तारभयसें श्लोक न लिखकर उनका तात्पर्य्य लिखताहूं ॥

इन्द्रादिकदेवता यज्ञकररहेथे तब पशुओंके बलिप्रदानसमयमें केई-ऋषिओंने कहाकि—हेइन्द्र यिह यज्ञविधि शुभ नहींहै किन्तु तीनवर्षके पुराणेबीजोंसें यज्ञ कराचाहिये—तब इन्द्रादिक देवतोंने कहाकि—अजसें यज्ञकरा चाहिये, अजका 'छाग' बकराअर्थ जानना होरकोईपशु अजकाअर्थ नहीं, यिह मर्यादाहै ॥

फिरऋषिबोले कि—बीजोंसें यज्ञ कराचाहिये यिहवेदकी श्रुतिहै

अजनाम बीजोंकाहै अतः छागका मारणा योग्य नहींहै, हेदेवतो यिह श्रेष्ठज-नोंका धर्मनहीं जहां पशुमाराजावे, यिह श्रेष्ठसत्ययुगहै इसमें कैसे पशुमारा जावेहै ॥

ऐसेदेवता और ऋषिओंका संवाद होरहाथा तब अन्तरिक्षके मार्गसें सेना व वाहनोंके सहित राजावसु प्राप्तहुआ अन्तरिक्षमें आतेहुए वसुको देखकर देवतोंको ऋषियोंने कहाकि--यिहधर्मात्मावसु संशयको काटेगा--

फिर वो देवता व ऋषि मिलकर समीपजाकर उनोंने वसुसें पूछाकि-हेराजन् अजसें यज्ञ कराचाहिये अथवा बीजोंसें—तब वसुराजाने पूछाकि-हेब्राह्मण सत्यकहोकि--किसका कौनमतहै -

तबऋषिओंने कहा कि—धान्यसें यज्ञ कराचाहिये यिह हमारा पक्ष है और देवतोंका पशु पक्षहै ।

तब देवताके पक्षके आश्रयमें वसुराजाने कहा कि अजसें, छागसें यज्ञ कराचाहिये तब वो मुनि कुपितहोकर विमानस्थ वसुको कहतेभए कि-देवतोंके पक्षको तुमने ग्रहण कराहै इस्सें तूं अन्तरिक्षसें गिरकर पृथिवीमें प्रवेशकर ऋषिओंके ऐसे शापसें वो वसुराजा आकाशसें गिरकर पृथिवीके अन्तरप्रवेश करगया ॥

अब इससंवादमेंभी निर्णय कराचाहिये

१-यदि वेदोंमें पशुबलिप्रदानका विधान न होता तो इन्द्रादिक देवता उसमें प्रवृत्त कैसे होसक्तेथे, और असत्यभाषण कैसे करसक्तेथे, अस-त्यवादी तो स्वर्गमें पहुंचही नहींसक्ता तो देवराज कैसे होसक्ताहै और ऋषिओंनेभी जिसको धर्मात्मा कहाथा वो धर्मात्मा वसुराजाभी असत्यभा-षण क्यों करसक्ताथा ॥

शंका-क्या ऋषिजनही असत्यवादीहोतेहैं ॥

समाधान--वहांमहाभारतमें उनऋषिओंके नामही नहीं लिखे कि वो कौन ऋषिथे, कैसथे, अर्थमें जानाजाताहै कि-इससंवादसे पहिले जो वसुराजाने अश्वमेधयज्ञ करा था उसमें वेदविधिविहित पशुबलिप्रदान नहींकिया अर्थात् वेदविधिका पालन नहींकरा इसी अभिप्रायसे ऋषिओंने वसुको शाप दियाहै ॥

२--उनऋषिओंने कहाथा कि यिह श्रेष्ठसत्ययुगहै इसमें कैसे पशु माराजावेहै सो यिहकथनभी श्रुतिस्मृतिओंसे विरुद्धहै क्योंकि श्रुतिस्मृति ग्रन्थनमें सैकड़ेवाक्य पशुबलिप्रदानका विधानकरतेहैं उनमें कोइवाक्यभी सत्य-युगत्रेताऽऽदिकोंमें पशुबलिप्रदानका निषेध नहीं करेहै प्रत्युत किसी २ स्मृति में अश्वमेध,गोमेध, पितरोंनिमित्तमांस, देवरसें पुत्रउत्पत्ति, संन्यास,वानप्रस्थ, मधुपर्कलिये पशुकावध, इन सातधर्मोंका कलियुगमेंनिषेधकराहै इसीसे सत्ययुगत्रेताऽऽदिकोंमें इन्द्रादिक देवता और इक्ष्वाकु मरुत्त सगर रन्तिदेव दशरथ श्रीराम युधिष्ठिरप्रभृतिमहाराजोंके हजारोंयज्ञनमें अनेक २ पशु-ओंका 'बलिप्रदान' वध कराहीगयाहै ॥

३--देखो प्रमाणांक १२२ को १२७ को २०० को जबवेदोंमेस्मृतिओं में पशुबलिप्रदानविषये कहीं अजपद, कहीं छागपद, कहीं पशुपद, कहीं खड्गपद, कहीं शशपद, इत्यादिक लिखेहैं तो फिर अजपदका वीज अर्थ कैसेहोसक्ताहै ॥

४--यदि पशुबलिप्रदानका विधान न होताती देखो प्रमाणांक १११ आदिकोंको श्रीरामजी चित्रकूटपर कृष्णमृगको मरवायके कुटिकी प्रतिष्ठा लिये हरिणकेमांसका बलिदान कैसेकरसक्तेथे--और देखो प्रमाणांक ४२ और ४३ को श्रीकृष्णचन्द्रजी गिरियज्ञलिये मेध्यपशुको मरवायके मांससे बलिदान कैसेकरवाय सक्तेथे ॥

५-दशरथके यज्ञमें भगवद्वसिष्ट व शृङ्गीऋषि जिसमें ऋत्विज़थे उसमें ३०० पशुओंका बलिदान हुआ और कौसल्यामहारानीनें तीन कृपाणोंसे अश्वका सिर कटाथा तो यिह कौन कहसक्ताहै कि, वसिष्टजी ब्रह्माकेपुत्र और शृङ्गीऋषिजीनें वेदनहीं पढेथे वो अजपदका अर्थ नहीं समझतेथे ॥

६–युधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञमेंभी साक्षात्कृष्णभगवान व व्यासजी तथा ओर अनेकमहर्षि विद्यमानथे तब वहां वेदवेत्ता ऋत्विज ब्राह्मणोंने अजअश्वप्रभृति ३०१ पशुओंका बलिदानकराथातो वहां व्यासादिकमहर्षि जन क्या अजपदका अर्थ नहीं जानतेथे, फिर वहां किसीभी ऋषिने युधिष्ठिर को पृथिवीकेअनन्तर गिराना नहीं दियाथा ॥

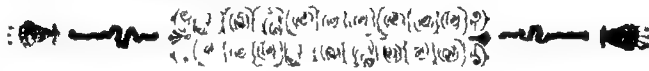
हेपाठक, यिह पशुयज्ञ, हस्तिनापुर गंगाकेतट और अयोध्यापुरी सरयूके तट, व ब्रजभूमि गोवर्द्धनपर्वत और चित्रकूट मन्दाकिनी गंगाके तट, पर हुएंहै। चिरसें जैनमतका असरहोनेकर आज पशुयज्ञके नाम कहनेसेंभी बहुतपुरुष प्रकुपितहोजातेहैं ॥

७—देखो प्रमाणांक १४६ को रन्तिदेवमहाराजाके नित्यमहायज्ञमें अनेकपशुओंका बलिदानहोता रहा तो वो रन्तिदेवमहाराजाभी स्वर्ग में ही पहुंचे उसका पृथिवीमेंतो प्रवेश नहींहुआ ॥

बहुत क्या लिखुं, ब्रह्माइन्द्रप्रभृति देवतोंमिलकर असंख्यमहाराजोंनें पशुयज्ञ करेहैं वो महर्षिजनोंनें कराएहै उनमें वो महाराज उत्तमलोकोंको ही प्राप्तहुएहैं ॥

८-अप्रसिद्धनामवाले उनऋषिओंने पशुबलिकरणवाले इन्द्रादिकदेवतों को शापदेकर नहीं गिराया और श्रुतिस्मृतिअनुसार तथा रामकृष्ण आदिकोंके आचरणके अनुसारकथनकरणवाले वसुराजाको क्यों शाप

देकर गिराया सो अर्थमें जानाजाताहै कि इस्सें पहिले महाभारतशान्तिपर्व अध्याय ३३६ में जो वसुराजानें अश्वमेधयज्ञ कराथा उसमें विधिविहित पशुबलि नहींकरा अर्थात् वेदविधिका पालन नहींकरा उसीअभिप्रायमें ऋषिओंनें शापदेकर वसुराजाको अन्तरिक्षमें गिरादिया देखोप्रमाणांक २७ व २८ को वो संभवेहींहै ॥



पूर्वपक्षी०—यक्षाणांचपिशाचानां मद्यमांसभुजांतथा । दिवौकसांतुभजनं सुरापानसमंस्मृतम् ।
पद्मपुराण अ० २८ ॥ ९५ ॥

अर्थ—यक्ष पिशाच और मद्यमांसखानेवाले देवतोंका भजन सुरापानके समानहै ॥

आस्तिक०—अमरकोश—विद्याधरोऽप्सरोयक्ष रक्षोगन्धर्वकिन्नराः ॥ पिशाचोगुह्यकःसिद्धो, भूतोऽमी देवयोनयः ॥ स्वर्गवर्ग १ ॥ ११ ॥

अर्थ—विद्याधर अप्सरः यक्ष राक्षस गन्धर्व किन्नर पिशाच गुह्यक सिद्ध भूत, यिह देवयोनिहैं । इस्में तमोगुणी भूतपिशाचादिदेवतोंका भजन सुरापानके समानहै ॥ होर सत्त्वगुणीदेवतोंका भजन सुरापानके समान नहीं है॥

शंका—जो सत्त्वगुणी देवता वा मनुष्य होतेहैं वह तो मांसको नहीं खाते ॥

समाधान यिह नियमनहींहै क्योंकि- सीतारामलक्ष्मणआदिअवतार और वेदवेताब्राह्मण अगस्त्यप्रभृतिमुनि, व युधिष्ठिरआदि सत्त्वगुणी-

पुरुष मांसको खाते चुलातेंही रहेहैं, और विष्णुनारायणके प्रिय सदस्य गरुडजीका तो आहार मांसहीहै ॥

हेश्रातः —ब्रह्मा विष्णुआदिदेवता तो वामनाग्राहीहैं तथापि —उनों लियेभी देखो प्रमाणांक १२२ व १७६ आदिकोंमें पशुवलिदानका विधान है, और देखो प्रमाणांक २७५ व १११ में ११८को उनोंलियेभी बलिदान करतेही रहेहैं ॥

पूर्वपक्षी० **नदद्यादामिषंश्राद्धे नचाद्याद्धर्मतत्ववित् । मुन्यन्नैःस्यात्पराप्रीति र्यथानपशुहिंसया ॥**

भागवतस्कं० ७ ॥ अ० १५ ॥ ७ ॥

अर्थ—धर्मतत्त्वका वेतापुरुष श्राद्धमेंमांसको न देवे और न खाए नीवारआदिक ' मुनिओंके' वानप्रस्थोंके अन्नोंमें पितरोंकी परमप्रीतिहोगी जैसी पशुहिंसासें न होगी ॥

इत्यादिक दोश्लोक भागवतके और दोश्लोक बृहत्पराशरसंहिताके अहिंसादिग्दर्शनमें श्राद्धविषयके लिखेहैं ॥

आस्तिक० —देखो प्रमाणांक १४ भगवद्भागवतमें इक्ष्वाकुआदि धर्मात्मा मांससें श्राद्धकरतेरहेहैं ॥

और देखो प्रमाणांक १०३ बृहत्पराशरसंहितामेंभी श्राद्धमें यज्ञमें उत्सवोंमेंभी मांसखानेकी आज्ञा दीहै

और तुमारेलिखे भागवतश्लोकमेंभी अर्थसें मुनिअन्नोंसें अधिकप्रीति और मांसमें थोड़ीप्रीति कहीहै ॥

परन्तु यहां विचारकरा चाहिये कि—वनके निवारआदिक मुनिअ

के अन्नोंसें श्राद्धकरनेका राजेमहाराजे श्रीमानोंआदि सबका अधिकारहै वा वानप्रस्थमुनिओंका अधिकारहै ।

यदि सबका अधिकारहै तो श्राद्धमें मांसके विधायक असंख्यवाक्य व्यर्थहोंगे अर्थात् धर्मग्रन्थनमें असंख्यवाक्योंसें श्राद्धमें मांसका विधानही क्योंकराहै ॥

यदि मुनिओंके अन्नोंसें वानप्रस्थमुनिओंका अधिकारहै तो उनका अधिकार ठीकहै ॥

याज्ञवल्क्यस्मृतिकी मिताक्षराटीकामें महर्षिपुलस्त्यकी कीहुई मुनिअन्न और मांस व शहतकी जो व्यवस्था दिखलाईहै वोभी देखिये, अ० १ श्लोक २६० की मिताक्षरा टीका

प्र० १५०—यद्यपि मुन्यन्नमांस मध्वादीनि सर्ववर्णानां सामान्येन श्राद्धे योग्यानि दर्शितानि तथापि पुलस्त्योक्ता व्यवस्थाऽऽदरणीया [मुन्यन्नंब्राह्मणस्योक्तं मांसंक्षत्रियवैश्ययोः ॥ मधुप्रदानंशूद्रस्य सर्वेषांचाविरोधियत] सर्वेषांचाविरोधि कालशाकादि सर्वेषामेवयोग्यम् ॥ अर्थ—नीवारआदिक वनकेअन्न और मांस शहतआदिकवस्तु श्राद्धमें सर्ववर्णोंके लिये योग्य दिखाईहैं तथापि पुलस्त्यजीकी कहीहुईव्यवस्था आदरकरनेयोग्यहै वो व्यस्था यिहहै कि ब्राह्मणको श्राद्धमें नीवारआदिअन्न बनाना कहाहै, क्षत्रिय और वैश्यको मांस कहाहै, शूद्रको शहत देनाकहाहै, और काल शाकआदि सर्ववर्णोंको योग्यहैं ॥

हेमित्र—पुलस्त्यऋषिकी इसव्यवस्थाके तात्पर्य्यसें तुमारेलिखे भागवत श्लोकोंमें तथा बृहत्पराशरसंहितामें यदि श्राद्धकर्ता वानप्रस्थब्राह्मणहोवे तो उसकेलिये पशुहिंसाका निषेधकर्के मुनिअन्नसें श्राद्धकरनेकी प्रशंसा की जाननी, चारोंवर्णोंकेलिये नहीं—

श्राद्धमें मांसकेप्रसंगसें अब मैं भी थोड़ेसे श्लोक दिखलाता हुं ॥

मनुस्मृति प्र० १५१—पितॄणांमासिकंश्राद्ध मन्वाहार्य्यंविदुर्बुधाः ॥ तच्चामिषेणकर्त्तव्यं प्रशस्तेनप्रयत्नतः अ० ३॥१२३॥

इसपर मनुभाष्य प्र० १५२—तदेतदामिषेण मांसेनकर्त्तव्यम् अयंचमुख्यः कल्पः तदभावे दधिघृतपयोऽ पूपादि विधायिष्यते मांसंचव्यञ्जनं भक्तादिभोज्यस्य ॥

इसपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० १५३—एवंच श्राद्धान्तरेषु नामिषनियमः ॥

इसपर नन्दनाचार्य्यका व्याख्यान प्र० १५४—आमिषेणमांसेन प्रशस्तेन भक्ष्यतयाविहितेन ॥

टीकासहित मनुश्लोकका अर्थ पितरोंका जो मासिकश्राद्धहै उसका नाम अन्वाहार्य पण्डित जानतेहैं सो श्राद्ध यत्नकर विहितमांससें करणा ॥

मनुभाष्य में कहाहै कि—यिह मांससें विधि मुख्यहै, मांसके अभावहुए दधिघृत दुग्धादिक विधानकरेंगे, मांस तो भातआदिका व्यञ्जनहै, सर्वज्ञनारायण कहतेहैं कि—इसमासिकश्राद्धमें मांसका नियमहै ऐसा होरश्राद्धोंमें मांसका नियम नहीं अर्थात् यिह श्राद्ध मांससेंही करणा ॥

मनुस्मृति प्र०—१५५ हृद्यानिचैवमांसानि, पानानि सुरभीणिच ॥ अ० ३-२२७ ॥

इसपरराघवानन्दकी टीका प्र० १५६— हृद्यानिमनोज्ञानि दृष्ट्या, सुरभीणिसुगन्धीनि ॥

अर्थ —श्राद्धमें मनोहर मांसोंको और सुगन्धित जलोंको बनावै ॥

मनुस्मृति प्र० १५७—द्वौमासौमत्स्यमांसेन त्रीन्मासान्हारिणेनतु ॥ औरभ्रेणाथचतुरः शाकुनेनाथपञ्चवै ॥ अ० ३॥२६८॥

इसपर मनुभाष्य प्र० १५८—उरभ्रा मेषाः शकुनय आरण्याः कुक्कुटाद्याः मत्स्याः पाठीनाद्याः ॥

मनुस्मृति प्र०—१५९षण्मासांश्छागमांसेन पार्षतेनच-सप्तवै॥ अष्टावेणस्यमांसेन रौरवेणनवैवतु ॥३॥२६९

मनुस्मृति प्र० १६०—दशमासांस्तुतृप्यन्ति वराह-

माहिषामिषैः ॥ शशकूर्मयोस्तुमांसेन मासाने-कादशैवतु ॥ २७० ॥

मनुस्मृति प्र० १६१—संवत्सरंतुगव्येन पयसापाय-सेनच ॥ वार्ध्रीणसस्यमांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ॥ २७१ ॥

मनुस्मृति प्र० १६२—कालशाकंमहाशल्काः खड्ग लोहामिषंमधु ॥ आनन्त्यायैवकल्प्यन्ते मुन्यन्नानिचसर्वशः ॥अ०३॥२७२॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० १६३— मात्स्यहारिणकौरभ्र शाकुनच्छागपार्षतैः अ०१॥२५७। ऐणरौरववाराह शाशैर्मांसैर्यथाक्रमम् ॥ मासवृद्ध्याभितृप्यन्ति दत्तैरिहपितामहाः ॥१॥२५८॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० १६४—खड्गामिषंमहाशल्कं मधुमुन्यन्नमेवच । लोहामिषंमहाशाकं मांसं-वार्ध्रीणसस्यचं ॥ २५९ ॥ यद्ददातिगयास्थश्च सर्वमानन्त्यमश्नुते ॥ २६० ॥

शंखस्मृति प्र० १६५—कालशाकंमहाशल्का मांसं-वार्ध्रीणसस्यच ॥ खड्गमांसंतथानन्तं यमःप्रोवाचधर्मवित् ॥ अ० १४ ॥ २६ ॥

लिखितस्मृति प्र० १६६—वार्ध्रीणसेनमांसेन कालशाकलोहखड्गमांसै मधुमिश्रितैश्चानन्त्यम् ॥ ॥ अ० १५ ॥ १ ॥

श्राद्धविषयमें इनस्मृतिओंका यिह समानहीअर्थहै कि श्राद्धमें मत्स्य के मांससें दोमास, पितरोंकी 'तृप्ति' प्रसन्नता रहतीहै, हरिणके मांससें तीन मास, मेंढेकेमांससें चारमास, बनकुक्कुटप्रभृतिपक्षीओंके मांससें पांचमास, बकरेके मांससें छीमास, चित्रितहरिणके मांससें सातमास, कृष्णहरिणके मांससें आठमास, रुरुमृगके मांससें नौमास, जंगलीसूरके मांससें और महिषके मांससें दशमास, शशके और कूर्मके मांससें ग्यारहमास, गोदुग्धसें तस्मैसें एकवर्ष पितरोंको प्रसन्नता रहतीहै, ॥ वार्ध्रीणसके मांससें द्वादश वर्ष अर्थात् अनन्तप्रसन्नता रहतीहै ॥

जलपीनेलगे जिसके दोनोंकान जलसें स्पर्शकरें ऐसे स्पेद बकरेका नाम और पक्षीविशेषका नाम वार्ध्रीणसहै॥ कालशाक, बडा सशल्कमत्स्य गैंडेका मांस, लालबकरेका मांस, नीवारआदि मुनिओंकेअन्न, शहत, वार्ध्रीणसका मांस इनसेंपितरोंकी अनन्तप्रसन्नता रहतीहै—देखियेहेमित्र—जैसी अनन्ततृप्ति मुनिओंके नीवारआदिअन्नसें स्मृतिओंमें कहीहै लालबकरेके गैंडेके वार्ध्रीणसके मांससें वैसीअनन्ततृप्तिकहीहै परन्तु यहां अधिकारभेदहै मुनिओंकेअन्नसें वानप्रस्थब्राह्मणोंका अधिकारहै, और मांससें क्षत्रिय वैश्य

श्रीमानोंका अधिकारहै ॥

तथा गयामें जोकुछ दियाजाते उस्में अनन्ततृप्ति रहती है

बृहत्पराशरसंहिता प्र०१६७-येखड्गमांसमधुपायससर्पि-
रन्नै देशेचकालसहितैश्च सुपात्रदत्तैः ॥ प्रीणान्ति-
देवमनुजान्पितृवंशजाता स्तेषांनृणांचपितरोव-
रदाभवान्ति ॥ अ० ५ ॥ ३६२ ॥

अर्थ—जो पितृवंशमें उत्पन्नहुएपुरुष शुभदेशकालमें सुपात्रपुरुषों प्रति दियेहुए गेंडेके मांससे शहत तस्मै घृत अन्नसे देवतोंका मनुष्योंको प्रसन्नकर्तेहैं उनपुरुषोंपर पितर वरदाता होतेहैं ॥

पद्मपुराण प्र० १६८-द्वौमासौमत्स्यमांसेन त्रीन्मा
सान्हारिणेनतु ॥ औरभ्रेणाथचतुरः शाकुनेना
थपञ्चवै खण्ड १ ॥ अ० ६॥ १५३ ॥

अर्थ-दोमास मत्स्यके मांससे, तीनमास हरिणके, चारमास मेंढके मांससे, विहितपक्षीओंकेमांससें पांचमास पितरोंकी प्रसन्नता रहतीहै ॥

जीवन्मुक्त मदालसाने अलर्कपुत्रको श्राद्धमें मांसदानका फलकहा हैदेखो--मार्कण्डेय पुराण प्र०१६६-वार्ध्रीणसामिषंलौहं काल
शाकंतथामधु दौहित्रामिषमन्यच्च दत्तमात्म
कुलोद्भवैः। अनन्तांवैप्रयच्छन्तितृप्तिम्॥अ० २६॥७॥

अर्थ--वार्ध्रीणसका मांस, लालबकरेका मांस, कालशाक शहद, दौहित्रने दिया श्राद्धमें मांस, और अपने कुलमें उत्पन्नहुए पुरुषोंने दिया श्राद्धमें मांस, यिहसब पितरोंको अनन्ततृप्ति देतेहैं ॥

——:o:——

महाभारत प्र०१७०—वार्ध्रीणसस्यमांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ॥ पर्व १३ । अ० ८८ ॥ ६ ॥

अर्थ—वार्ध्रीसके मांससे द्वादशवर्ष पितरोंकी प्रसन्नता रहतीहै ॥

——:o:——

महाभारत प्र० १७१—आनन्त्यायभवेद्दत्तंखड्गमांसंपितृक्षये ॥ कालशाकंचलौहंचाप्यानन्त्यंछागउच्यते ॥ १३ ॥ ८८ ॥ १० ॥

अर्थ--मृततिथिमें पितरोंको दियाहुआ गेंडका मांस और कालशाक और कचनारके फूलोंकाशाक और लालबकरे, का मांस यिह पितरोंकी अनन्तप्रसन्नतालिये होतेहैं ॥

——:o:——

महाभारत प्र० १७२—औरभ्रमुत्तरायोगे यस्तुमांसंप्रयच्छति ॥ सपितॄन्प्रीणयातिवै प्रेत्यचानन्त्यमश्नुते ॥ प्र० १३ ॥ ६४ ॥ ३२ ॥

अर्थ—उत्तरानक्षत्रके योगमें जो पुरुष मेंढके मांसको देता है वो

पितरोंको प्रसन्नकर्ताहै फिर मरके अनन्तफल पाताहै ॥

इत्यादिक श्राद्धमें मांसके विधायक बहुत प्रमाणहैं ॥

——:०:——

पूर्वपक्षी०—अहिंसादिग्दर्शनमें पराशरस्मृति और बृहन्नारदीय-पुराणका श्लोकालिखाहै उनदोनोंश्लोकोंका अर्थयिह कि—अश्वमेध, गोमेध, संन्यास, वानप्रस्थाश्रम, श्राद्धमें मांसदान, देवरसे पुत्र उत्पत्ति, मधुपर्क लिये पशुवध, यिह सातधर्म कलियुगमें त्यागकरणेयोग्यहैं ॥

आस्तिक०—बहुतलोकजानतेहोंहैं कि—बहुतकालसे तिथिपत्रोंमेंलिखते रहेथे कि—गंगाका दशवर्ष शेष आयुः है, अब गंगा का ६ वर्ष शेष आयुहै, अब आठवर्ष गंगाका शेषआयुःहै, ऐसालिखते २ फिर विद्वानोंने मिलकर निर्णयकरा कि—कल्प के अन्तिम कलियुगके पांचहजार वर्ष व्यतीतहुए गंगा पृथिवीको त्याग कर देगी ॥

ऐसेही यहांभी विचार कराचाहिये कि—अश्वमेध प्रभृति सातधर्मभी क्या कल्पके अन्तिमकलियुगमें त्यागकरणेयोग्यहैं अथवा इसकलियुगमें त्याग करणेयोग्यहैं ॥

यदि प्रथमपक्ष कहोतो—इसवर्तमानकलियुगमें तो यिह सातधर्म करणेयोग्यही सिद्धहुए ॥

यदि द्वितीयपक्ष कहो तो—इसका उत्तर श्रीस्वामीदयानन्दजीने कहा हुआहै देखो प्रमाणांक २२ को अर्थात् अश्वमेध आदिकोंका त्यागकहाहै अजमेध अविमेधआदिकोंका तो त्याग नहींकहाहै ॥

भावयिह—सत्ययुगत्रेताद्वापरके महानुभावपुरुषोंकाही उक्तसातधर्म

करणेका अधिकाररहो परन्तु कलियुगके गरीबोंको भेडबकराऽऽदिकोंकेभी बलिप्रदानसे रोकनेका क्यों दुराग्रह करतेहो ॥

होर अहिंसादिग्दर्शनमें विजयधर्मसूरिजीने महाभारतके पर्व १३ अध्याय ११६ व ११५ व ११४ के जो बहुत श्लोक लिखेहैं वो विस्तार भयसे श्लोक न लिखकर उनका तात्पर्य्य लिखता हूं कि-युधिष्ठिर को भीष्मपितामहजीने पहिलां मांसके अतिपौष्टिकताऽऽदिकगुणोंका वर्णनकरके फिर मांसखानेकी निन्दाकीहै जैसाकि महाभारत **स्वमांसंपरमांसेन योवर्धयितुमिच्छति। नास्तिक्षुद्रतरस्तस्मा त्सनृशंसतरोनरः** ॥प०१३॥ अ०११६॥११॥

अर्थ--जो पुरुष अपने मांसको दूसरेके मांससे बढायाचाहताहै उससे बढकर होरकोई क्रूर नहींहै किंतु वो अतिक्रूरहै ॥

इत्यादिक वो महाभारतके श्लोक वृथामांसविषयकेहैं अर्थात् वृथा मांसके, विधिविनामांसके खानेकी निन्दाकरतेहैं और भयंकरवचनोंसेवृथा मांसखानेके दोष कहतेहैं, व रोचकवाक्यनसें वृथामांसकेही त्यागकी प्रशंसा करतेहैं अतः वो श्लोक वृथामांसविषयकेहैं विहितमांसके खानेकी निन्दा नहींकरते ॥

और जोश्लोक महाभारतके मैंने पहिलेलिखेहैं और लिखूंगा वो विहित मांसभक्षणविषयकेहैं ॥

विजयधर्मसूरिजी तो एकतर्फेश्लोक लिखतेहैं, फिर लिखते २ भी कोई श्लोक तात्पर्य्यका बोधक आवे तो उसको छोड़जातेहैं जैसाकि-पर्व १३ अ०११६ वेंके श्लोक अहिंसादिग्दर्शनमें लिखेहैं पहिलां १३ श्लोक लिखे फिर तात्पर्य्यका दर्शक १४वां

श्लोक आया तो उसको नहींलिखा, ऐसेही और भी कई श्लोक छोड़दिये—हे पाठको—महाभारतमें भीष्मजी के मांसनिषेधक सबश्लोकोंके तात्पर्य्यका बोधक वो १४ वां श्लोकहै उसको देखो ॥

महाभारत–**विधिनावेददृष्टेन तद्भुक्त्वेहनदुष्यति यज्ञार्थेपशवःसृष्टा इत्यपिश्रूयतेश्रुतिः** १३॥११६॥१४॥

अर्थ—जिस मांसका निषेध बहुत श्लोकोंकर कराहै वेदमेंदेखेविधिसें उस मांसको खाकर मनुष्य दोषवाला नहींहोता क्योंकि–यज्ञों के लिये पशुओं को रचाहै, यिहभी वेदवाक्य सुननेमें आताहै। हे पाठको–इसश्लोक के तत्पदसें अपेक्षित यत्पदका 'जिसमांसका निषेध, इत्यादिअर्थ प्रमाणांक १८ के अर्थमें नहींलिखा, सोयिह यत्पदका अर्थ वहांभी जानलेना ॥

महाभारतप्र० १७३–**अतोऽन्यथाप्रवृत्तानां राक्षसो विधिरुच्यते॥ क्षत्रियाणांतुयोदृष्टो विधिस्तमपि मेश्रृणु** ॥१५॥

अर्थ–इसवेदविधिसे अन्यथामांसखानेमें प्रवृत्ति राक्षसविधिकहियेहै अर्थात् विधिसे मांसखाना देवविधिहै ॥

हेपाठको–इस डेढ श्लोकसें भीष्मपितामहजीनें अपने सबश्लोकोंका तात्पर्य्य दिखलाय दियाहै ॥

अब भीष्मजी कहतेहैं कि-क्षत्रियजनोंलिये जोविधि देखाहै उसकोभी मेरेसें सुन ॥१५॥

———

महाभारत प्र० १७४- वीर्येणोपार्जितंमांसं यथाभुञ्जन्नदुष्यति ॥ आरण्याःसर्वदैवत्याः सर्वशःप्रोक्षिता मृगाः॥१६॥अगस्त्येनपुराराजन् मृगयायेनपूज्यते ॥ १३ ॥ ११६ ॥ १७ ॥

इसपर नीलकंठीटीका प्र० १७५- यजमानेनोत्सृष्टानामप्यारण्यानां राज्ञामृगयायां वधो न्याय एव

अर्थ-अपने बलसें मारे हुए जंगली मृगोंके मांसको खाताहुआ जिससें दोषवाला नहींहोता वो हेतु यिहहै कि-जिस अगस्त्यजीनें शिकारका सेवन कराहै उसमहर्षिअगस्त्यजीनें सर्वदेवतोंनिमित्त बनके मृग,प्रोक्षित करादियेहुएहैं, वेदमंत्रोंसे संस्कृतकरदियेहुएहैं ॥ यजमाननें प्रोक्षितकर छोड दिये बनके मृगोंका राजाने बधकरणा न्यायहीहै क्योंकि छोडे हुए मृगपशु के जीवित रहनेमें उस २ देवताकी तृप्ति नहीं होसक्ती ॥ १७ ॥

———:(०):———

अहिंसादिग्दर्शनमें जो वराहपुराणके श्लोक लिखेहैं उनका उत्तर तो वराहपुराणके ही प्रमाणांक १३४ आदिकोंमें देख लीजिये ॥

जो कूर्मपुराणका एकश्लोकलिखा उसमेंभी वृथाहिंसाका निषेध करा जानना क्योंकि, देखो प्रमाणांक ८४ कूर्मपुराणमेंभी विहितमांसके नां खाने सें अतिदोष कहाहै और जो एकश्लोकभागवतका लिखाहै उसका उत्तरभी प्रमाणांक ५८व ३११ आदि भागवतवाक्यसेंही देखलीजिये अर्थात् देवतोंके उद्देशकर करीजो पशुहिंसा वो पशुमें द्रोह नहींहै जैसे प्रमाणांक ५६ में श्रीरामानुजस्वामीजीने वेदप्रमाणसें स्पष्टलिखाहै ॥

होर जो अहिंसादिग्दर्शनमें जैनीभाईओंके बनेहुए बहुतसे उपहास श्लोक लिखेहैं उनका तो बेसे उत्तरलिखना योग्य नहींहै क्योंकि उपहासकरणा मशकरेजनोंका कामहै धर्मवेत्तापुरुष उपहास नहींकर्ते ॥

—०ο—

और जो अहिंसादिग्दर्शनमें मुश्रुतका एक श्लोक लिखाहै वो सबमत्स्योंके नहीं किन्तु एकपाठीनमत्स्यके गुणदोषको दिखलाताहै—देखो रोहितमत्स्यके कैसे गुण कहेहैं ॥

चरकसंहिता प्र०१७६—**शैवलाहारभोजित्वात् स्वप्नस्यचाविवर्जनात् ॥ रोहितोदीपनीयश्च लघुपाकोमहाबलः** ॥अ०२७॥७५॥

अर्थ—रोहितमत्स्य शैवलआहारके खानेवालाहै और स्वप्नदोषसें रहितहै अतः अग्निको दीपनकर्ताहै, पाकमें लघुहै महाबलकारीहै ॥

निघण्टुरत्नाकर प्र०१७७—**घृतपक्वंतुयन्मांसं रुच्यंहृद्यंबलप्रदम् ॥ अपित्तलमनुष्णंच लघुदृष्टिप्रसादनम् ॥ अग्निदीप्तिकरंप्रोक्तं मांसज्ञैश्चिकित्सकैः** मांसवर्ग पृष्ठ ३२२ ॥ अर्थ घृतमें पकायाहुआ जोमांसहै वो रुचिकरहै हृदयको बलदेनेवालाहै शरीरको बलदायीहै पित्तको नहींकर्ता, मांसकेगुण जाननेवाले चिकित्सकोंनें अग्निको दीप्तकरनेवाला कहाहै ॥

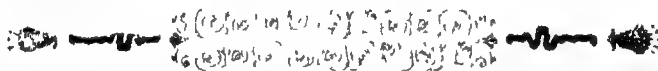
—:०:—

निघण्टुरत्नाकर प्र०१७८—**निर्धूमाग्नौशूलविद्धंभर्जितं**

वेसवारयुक् ॥ सर्वोत्तमंपथ्यकरं लघुस्निग्धंचरोचनम् । स्थिरंतर्पणकृद्धातु वर्द्धकमृषिभिर्मतम् । तदेव भर्जितंचाति दीपनंबलकारकम् । मृदुपक्कंचतज्ज्ञयं लघुदीपनकारकम् ॥ मां० पृ०३२२ ॥

अर्थ–मसालेसें मिलाके लोहेकी शलाकापर चढ़ाया हुआ, निर्धूम अग्निपर भूना हुआ जोमांसहै वो सर्वोत्तमहै हितकरहै, लघुहै, हलका है स्निग्धहै रुचिकरहै स्थिरतृप्तिकरनेवालाकहाहै धातुका वर्धक ऋषिओं ने मानाहुआहै ॥

वोअतिभूनाहुआ अतिदीपनहै बलकारकहै, थोड़ाभूनाहुआ थोड़ा दीपनकारीजाननाः अर्थात् अधिकभूनाहुआ अग्निको अधिकदीपनकरैहै वो थोड़ाभूनाहुआ अग्निको थोड़ादीपनकरैहै ॥



पूर्वपक्षी०-तुमनेभी प्रतिज्ञाकीथी कि, पशुबलिप्रदान के और मांस भक्षणके विधायक वेदस्मृतिआदिकोंके वाक्य बहुतहीहैं वो यदि हैं तो दिखलानेचाहिये ॥

आस्तिक०–हेमित्र अब तुम्हारे वाक्यनके विचारमें अवसर मिलाहै अब केईकवाक्यनको दिखलाताहुं ॥

—:०:—

कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता–यःप्रजाकामः पशुकामः स्यात्सएतं प्राजापत्यमजं तूपरमालभेत ॥

अर्थ प्रमाणांक १२२ में लिखचुकाहूं ॥

कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीसंहिता प्र० १७९-वैष्णवंवामन मालभेत स्पर्धमानोविष्णुरेवभूत्वेमान्लोकानाभिजयति कां०२ ॥ प्र०१ ॥ अनु०३॥१॥

इसमंत्रपर सायणभाष्य प्र०१८०-स्पर्धमानोगृहक्षेत्रादिविषये विवादवान् विष्णुप्रियहविर्दानादस्योपचारितविष्णुत्वम् ॥

अर्थ गृहक्षेत्र भूमिआदिकोंके विवादवालापुरुष विष्णुदेवतानिमित्तक ह्रस्वपशुको, छोटेशशआदिपशुकोमारे वो पुरुष विष्णुका प्रियहोकर इन लोकोंकोजीतलेताहै ॥ विष्णुको प्रियहविके देनेकर हविके देनेवालायजमान गौणविष्णु अर्थात् विष्णुका प्रियहोता है ॥

कृ० तैत्तिरीयसंहिता प्र०१८१-वायव्य ँश्वेत मालभेत भूति कामः ॥कां०२॥प्र०१॥अनु०१॥१॥

इसमंत्रपर सायणभाष्य प्र० १८२-वायुर्देवता यस्यपशोः सोऽयंवायव्यः सचश्वेतवर्णः तमालभेत ॥

अर्थ, विभूतिकी कामनावालापुरुष वायुदेवतानिमित्तक श्वेतपशुबकरेको मारे ॥

हे पाठको इससंहिताके दूसरेकांडमें पशुबलिप्रदानके विधायक इत्या

दिक बहुतहीवाक्यहैं उनमें थोड़ेमेही यहांलिखेहैं ॥

अबदेखिये अतिश्रेष्ठपुत्रकी उत्पत्तिलिये मातापितादोनोंको मांसखाने का विधान ।

यजुर्वेदकी बृहदारण्यक वेदान्तउपनिषद्में प्र०१८३

अथयइच्छेत्पुत्रोमे पण्डितोविगीतः समितिंगमः शुश्रूषितांवाचंभाषिता जायेतसर्वान्वेदाननुब्रुवीत सर्वमायुरियादिति मांसौदनंपाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयाता मीश्वरौजनयितवा औक्ष्णेन वाऽऽर्षभेणवा ॥अ०६ ॥

ब्राह्मण४ ॥ १८ ॥ अर्थ–औरजो गृहस्थपुरुष इच्छाकरे कि–मेरा पुत्र ऐसाहोवेजो–पण्डित, देशोंमें प्रख्यात, विद्वानोंकी सभामें जानेवाला, मधुरबाणी बोलनेवाला, चारोंवेदोंका अनुवाद करनेवाला, पूर्णआयुःवाला, ऐसेउत्तमगुणोंवाला मेरापुत्र उत्पन्नहो तो वो गृहकेस्वामी स्त्रीपुरुषदोनों जब स्त्री स्त्रीधर्मसे शुद्धहो तब हरिणादिमृग वा बकराके मांससहित भात घृत डालकर पकाकर खाएं तो वह ऐसापुत्र उत्पन्न करसकेंगे ॥

इसउपनिषद्मंत्रपर श्रीशंकराचार्य्यजीभी ऐसाहीअर्थ लिखतेहैं देखो शाङ्करभाष्य प्र० १८४–**मांसमिश्रमोदनंमांसौदनम् ॥**

अर्थ- मांससे मिलेहुए भातको खाएं ॥

नित्यानन्दाश्रमजीने कुछविशेषअर्थ लिखाहै इसउपनिषद्मंत्रकी मिताक्षराटीकामें पृ० १८५-

मांसमिश्रमोदनं मांसौदनम् । अत्रमृगादिमांसं क्रीत्वाग्राह्यम् ॥

अर्थ-मांसमें मिलेहुए भातको खाएं । यहां मृगादिकोंका मांसखरीद कर ग्रहण करणा।

श्रीस्वामीदयानन्दसरस्वतीजीनभी अपने संवत् १९३३ में छपवाए संस्कारविधिग्रन्थमेंभी इस मंत्रका एसाही अर्थ लिखाहै देखो—

संस्कारविधिपृ० १८६ जोचाहेकि-मेरापुत्र पंडित सदसद्विवेकी शिक्षितवाणीका बोलनेवाला सब वेदवेदांग विद्याका पढने और पढानेवाला तथा सर्वायुको भोगनेवाला पुत्रहोय वह मांसयुक्तभात को पकाके पूर्वोक्त घृतयुक्त खाये तो वैसे पुत्रहोने का संभवहै ॥पृ०११॥

शंका, यहबात एकदेशीहै सर्वदेशीनहीं क्योंकि मांससें पौष्टिक गुणवाला द्रव्य दुग्ध और औषधादिकोंमें अधिकहै ॥

समाधान—यिहअव्यवस्थित अप्रमाण कथन असत्यहै तथाहीकहता हुं सुनिये ॥

१-यहबात एकदेशीहै सर्वदेशी नहीं, यिह तो तुमने कहदिया परन्तु तुमने यिह नहींकहा कि—यिहबात पंचनददेशकीहै, वा पांचाल्यदेशकीहै वा ब्रजदेशकीहै, वा मरुस्थलदेशकीहै, वा गुर्जरदेशकीहै, वा महाराष्ट्रदेशकी है, वा होर किसदेशकीहै, ऐसा नां कहकर (यह बात ऐकदेशीहै सर्वदेशी नहीं) इतनामात्र जोकथनहै वो अटपटः कथन स्पष्टहीहै ॥

यदि आप कहोंकि यहां एकदेशीसें कोईएकमत विवक्षित है, तो यिह कथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि यहां मतों का प्रसंग नहीं चला हुआ है किंतु अतियोग्य, अतिलायक पुत्रकी उत्पत्तिलिये जोकुछखानेयोग्यवस्तु उपनिषद् में विधानकराहै उसका अर्थ स्वामीजीने लिखाहै ।

२-यहबात एकदेशीहै सर्वदेशी नहीं, यिह उपनिषद्मंत्रके किसी वाक्यका अर्थहै अथवा उपनिषद्वाक्यका अर्थ तो नहीं तुम अपनी तर्फसें कहतेहो ॥

इनमें प्रथमपक्ष तो असत्यहीहै क्योंकि उक्तउपनिषद्मंत्रमें ऐसाकोई भीवाक्य नहींहै कि—जिसका यिहअर्थ होसके कि यहबात एकदेशीहै सर्वदेशीनही ॥

यदिउपनिषद्वाक्यका यिहअर्थ नहींहै किंतु तुम अपनी तर्फसेंकहते हो तो तुम जोचाहो ऐसा अटपटः कथन करतेरहो वोमाननीय नहींहोसक्ता क्योंकि यिह तुम्हारा कथन उपनिषद मंत्रसें विरुद्धहै ॥

१—यदि तुम कहो कि—मांससें पौष्टिकगुण दुग्धमें अधिकहीहै, तो यिहतुम्हाराकथनभी असत्यहीहै क्योंकि देखोप्रमाणांक ६७ आदिकोंमें भीष्मपितामहजीने और चरकसंहितामें मांसके कैसे पौष्टिकताऽऽदिकगुण वर्णन करेहैं ॥

४–यजुर्वेदकी बृहदारण्यकउपनिषद्–सयइच्छेत्पुत्रोमेगौरोजायेत वेदमनुब्रुवीत सर्वमायुरियादिति क्षीरौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्त मश्नीयातामीश्वरौ जनयितवै ॥अ०६ ॥ ब्रा०४ ॥१४॥

अर्थ-जोजोगृहस्थपुरुष चाहे कि मेरापुत्र गौरवर्णवाला एकवेदका अनुवादकरनेवाला पूर्णआयुभोगनेवाला उत्पन्नहो वो गृहके स्वामी स्त्री पुरुषदोनों दुग्धभात घृत डालकर पकाकर खाएंतो ऐसापुत्र उत्पन्नकरसके

इसमंत्रका स्वामीदयानन्दजीनेंभी ऐसाहीअर्थ संस्कार विधिग्रन्थकी ११वीं पृष्ठपर लिखाहै ॥

हेभ्रातः–यहांही स्वामीदयानन्दजी दुग्धभातखानेसें तो एकवेदका वक्तापुत्र लिखतेहैं और मांसभातके खानेसें. चारवेदोंका वक्तापुत्र लिखतेहैं व मांसभातके खानेसें.मदसद्विवेकी शिक्षितवाणीबोलनेवाला, इत्यादिकहोर भी बहुतगुण अधिकालिखेहैं तो ऐसे स्वामीदयानन्दजीके लेखसेंभी (मांस सें पौष्टिकगुण दुग्धमें अधिकहै) यिहकथनमात्रहै अतः असत्यहीहै ॥

शंका, यदिमांसभातके खानेकर वेदोंका वक्तापुत्र उत्पन्नहोसके तो मांसाहारीपुरुषोंके वेदवक्तापुत्रहोनेचाहिये ॥

समाधान—यदि दुग्धभात वा घृतभातखानेकर वेदवक्ता पुत्र होसके तो दुग्धभातआदिके खानेवाले सर्वमनुष्योंके वेदवक्तापुत्रही होनेचाहियें—

हेमित्र, दुग्धघृतआदिखानेवालोंमेंभी बलबुद्धि विद्या सम्पादाआदिक देखनेमें आतेहीहैं और मांसभोजीओंमें तो बलबुद्धि विद्या कलाकौशल्य राज्यादिसम्पदा अत्यधिकहीहै इससें जानाजाताहै कि मांसदुग्धघृतादिकोंमें

जैसे २ गुणहैं वैसे २ गुण चिकित्साशास्त्रमें स्पष्ट वर्णनकरेहैं ॥

उनगुणोंके अभिप्रायसें उपनिषद्मंत्रोंमें वैसी २ संतानके उत्पन्न करणेलिये दुग्धमांसादिकोंके खानेका विधान कराहै

विदित रहे कि—दुग्ध घृत मांसादिक अपनी२ योग्यताके अनुसार बल बुद्धि पुष्टिआदिकोंको तो करतेहैं परन्तु उन बल बुद्धि पुष्टिआदिकोंको यदि मनुष्य धैर्य्य विचारादि लिये खर्चकरें तो धैर्य्य विचारआदिकोंमें वृद्धि पासक्तेहैं और यदि मनुष्य धनसम्पदाऽऽदिकोंलिये उनको खर्चकरें तो धनसम्पदाऽऽदिकोंको सिद्ध करसक्तेहैं ॥

यदि मनुष्य विषयविकारोंमेंही बलबुद्धिआदिकोंको खर्चकरें तो धैर्य्य विचारादिक उत्तमकार्य्य सिद्धनहींहोसक्ते किन्तु विषयोंके स्वल्पकाल किंचित्सुखको देखकर परतन्त्रतासें जन्मजराव्याधिमृत्युआदिकोंके पुनः पुनः दुःसहदुःखोंकोही देखना पड़ताहै ॥

५—यदि आपकहें कि—मांसमें पौष्टिकगुण औषधोंमें अधिकहै तो हेभ्रातः यिहतुम्हाराकथनभी असंगतहोहै क्योंकि औषधोंमें कैसाभी अधिकगुणहो परन्तु केवलऔषधोंसेंही पेटपूर्त्ति नहींकरसक्तेतो किन्तु पथ्यभोजन भी अवश्यंही अपेक्षित होताहै, गर्भाधानलिये योग्यभोजनके विधायक बृहदारण्यक उपनिषद्के पांचमंत्र स्वामीदयानन्दजीने लिखेहैं उनमंत्रोंमें जैसे २ योग्यपुत्रकी वा पुत्रीकी कामना हो वैसे २ योग्यभोजन खानेका विधान कराहुआहीहै ॥

हेपाठको इनमंत्रोंमें दुग्धभातादिक सबभोजनोंसे ऐसेश्रेष्ठगुणोंवाले पुत्रकी उत्पत्ति नहींकही जैसेकि— मांसभातके भोजनसें अतिश्रेष्ठगुणवाले पुत्रकी उत्पत्ति कहीहै ॥

फिर उनमंत्रोंके व्याख्यानमें स्वामीदयानन्दजीनेभी एसाहीअर्थ स्पष्ट

लिखाहै तो श्रेष्ठपुत्रकी उत्पत्तिलिये गर्भाधाननिमित्त योग्यभोजनके प्रसंगमें औषधका कथन असंगतहीहै ॥

बृहदारण्यक उपनिषद्की भाषाटीकामें डी. ए. वी. कालिजके संस्कृत प्रोफैसर पण्डितराजारामजीनेंभी इसमंत्रका ऐसाहीअर्थ लिखाहै, वो मैं प्रमाणांक २६ में दिखलाय चुकाहुं ॥

ऋग्वेदसंहिता प्र० १८७–एषच्छागः पुरोअश्वेनवाजिना पूष्णोभागो नीयते विश्वदेव्यः अभिप्रियं यत्पुरोळाशमर्वता त्वष्टेदेनं सौश्रवसाय जिन्वति ॥ अष्टक २ ॥ मण्डल १ ॥ सूक्त १६२ ॥ ३ ॥

इसमंत्रपर सायणभाष्य प्र० १८८–एषछागः शृङ्गरहितोऽजः अश्वेनवाजिना शीघ्रव्यापकेनाश्वेनसह पूष्णः पोषकस्याग्नेर्भागो भजनीयः विश्वदेव्यः सर्वदेवार्हः अग्नेः सर्वदेवात्मकत्वात् तदर्हत्वेन सर्वदेवप्रियत्वम् । एवंविधोऽजः पुरःपुरस्तान्नीयते प्राप्यते यत् यस्मादेवंक्रियते तस्मात्प्रियं प्रीणयितारं पुरोडाशं पुरस्ताद् दातव्यमेनमजं त्वष्टा सर्वस्योत्पादकोदेवः अर्वताअरणवताऽश्वे-

नसह सौश्रवसाय देवानांशोभनान्नाय तन्निमित्तम् अभिजिन्वति प्रीतिहेतुंकरोति ॥

अर्थ—सर्वदेवतोंके योग्य यिहअग्निदेवता का भाग शृंगरहित अज अश्वमेधयज्ञमें वेगवाले अश्वकेसाथ आगे लेजाया जाताहै जिस्सें ऐसे कियाजाताहै इस्सें प्रसन्न करणेवाले पहिलेदेनेयोग्य इसअजको सर्वकाउत्पादकदेव देवतोंके शोभनअन्ननिमित्त प्रीतिका हेतुकर्ताहै ॥

— —

ऋग्वेदसंहिता प्र० १८६—यदूवध्यमुदरस्यापवाति यआमस्यक्रविषो गन्धोअस्ति सुकृतातच्छमि-तारः कृण्वन्तूतमेधं शृतपाकं पचन्तु ॥ अ० १ ॥ मं.१ ॥ सूक्त १६२ ॥ मं०१० ॥

इसमंत्रपर सायणभाष्य प्र० १६०—उदरस्य संबान्धि-यदूवध्यम् ईषज्जीर्णतृणं पुरीषमपवाति अपगच्छ-ति यश्चामस्यापक्वस्य क्रविषोमांसस्य गन्धोऽस्ति लेशोऽस्ति पाकस्यसमये यत्किंचिदूवध्यम् अपक्वस्यचलेशोस्ति आमगन्धोस्तितत्सर्वं श-मितारः विशसनकर्तारः सुकृताकृण्वन्तु सुकृतम् उक्तदोषराहितं कुर्वन्तु उतआपिचमेधंमेध्यंयज्ञार्हं

पश्ववयवं शृतपाकं देवयोग्यपाकोपेतं यथा-भवातितथापचन्तु पितृमनुष्यादियोग्य मतिप-क्वमीपत्पक्कं च माकुर्वान्वित्यर्थः ॥

अर्थ--उदरमेंजो थोडापकाहुआ तृण पुरीष अधोवायुमें नीचेजाताहै, और जो कच्चा मांसका लेशहै, काटनेवाले पुरुष उससबको उक्तदोषसें रहितकरें पकानेवालेपुरुष पवित्र यज्ञके योग्य पशुके अवयवको पूरा पाकवाला पकावें, पितरमनुष्यादिकोंके योग्य अतिपाक वा थोड़ापाक मतकरें ॥

अथर्ववेद संहिताके नवमकाण्डमें "अतिथिसें पूर्वभोजन करनेकर बहुतपुण्योंका और यशश्रीआदिकोंका नाशहोताहै,, ऐसे कहकर अतिथिका लक्षण यिह कहाहै ॥

एषवाअतिथिर्यच्छ्रोत्रियस्तस्मात्पूर्वोनाश्नीयात्

का ९ ॥ अनु ३ ॥ सूक्त॥४॥७॥ पृ ३

अर्थ, एहीअतिथिहै जो श्रोत्रियहै उससें पहिले भोजन नहींकरे ॥ षडंगोंसहित वेदोंके जाननेवालेका नाम श्रोत्रियहै ॥

अथर्ववेदसंहिता प्र० १९१-एतद्वाउस्वादीयोयदधिगवं क्षीरं वा मांसंवा तदेवनाश्नीयात् ॥ का०९॥ अनु०३ ॥ सू ४ ॥ ९॥ पृ ३

अर्थ यिह जो अतिस्वादु गौका दुग्ध वा बकरेआदिका मांसहै उसको भी अतिथिसें पहिले नहींखाए अर्थात् अतिथिको खुलाकरखाए ॥

इसपर कोईसमाजीभ्राता लिखताहै कि इससे पहिले आठवेंमंत्रमें अतिथिका प्रसंग समाप्तहोचुकाहै अतः यिह मंत्र अतिथिविषयका नहींहै, यों लेखभी असत्यहीहै क्योंकि तृतीयअनुवाकमें चतुर्थसूक्तकी समाप्तिका यिह नवममंत्रहै इसके आगे पंचमसूक्तमें अतिथिको विचित्रभोजन के देनेसे विचित्रफलोंकी सिद्धिका प्रतिपादनकराहै अतः चतुर्थसूक्तमें अतिथिका प्रकरण समाप्त नहींहुआ किंतु पहिले आठवेंमंत्रमें यिहकहाहै कि अतिथि भोजनको करचुके तो पीछे भोजनकरे वो व्रतहै इससे अनन्तर नवममंत्रमें उसीव्रतकी पूर्णतालिये विशेष कथनकराहै कि जो अतिस्वादु गौका दुग्धहो वा बकरेआदिका मांसहो उसकोभी अतिथिसे पहिले नहींखाए ऐसे चतुर्थ सूक्तमें कहकर फिर पंचमसूक्तमें दशमंत्रोंसे अतिथिको विचित्रभोजनदेनेके विचित्रफलकहेहैं उनमें देखो ॥

अथर्ववेदसंहिता प्र० १६२—**सयएवंविद्वान् मांसमुपसि-च्योपहरति** का० ६॥अनु ३ ॥सूक्त ३॥७॥

यावद्द्वादशाहेनेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्द्धे तावदेनेना वरुन्द्धे ॥८॥

अर्थ—सोजो पुरुष ऐसे जानता हुआ मांसको उपसेचनकरके उपहार कर्ताहै,, अतिथिप्रति अन्नप्रदानकर्ताहै, अधिकश्रेष्टसामग्रीरूप सम्पत्तिवाले द्वादशाहयज्ञकरके जितने पुण्यफलको पुरुष सिद्धकरसक्ताहै उतनेपुण्यफलको 'अनेन, अतिथिको मांसउपसेचनकरके अन्नभेट करणेकर गृहीपुरुष सिद्ध करसक्ताहै ॥७॥८॥

यहां उमीसमाजीभ्राताने मांसपदका उडदअर्थ बदलाहै वोभी असत्य हीहै तथाही कहताहूं सुनिये ॥

१–इसएकहीप्रकरणके पहिले नवममंत्रमें मांसपदका आपनेभी मांस हीअर्थलिखाहै, उसीप्रकरणके इसमांसपदका अर्थ उडदालिखना, यिह दुराग्रह नहींहै तो होरक्या है ॥

२ कोशग्रन्थनमें तथा होर कहींभी मांसपदकी वाच्यता उडदों में नहींकहीहै तो सबसे विरुद्धअर्थलिखना असत्यहीहै ॥

३-देखो शतपथब्राह्मणप्र० १६३–राज्ञे वा ब्राह्मणाय वा महोक्षं वा महाजं वा पचेत्तादिहमानुष[१] ॥ का०३ अ०४ ॥ ब्रा० १ ॥ १ ॥

अर्थ—अतिथिराजालिये वा ब्राह्मणअतिथिलिये बडेबकरेको पकावे वो मनुष्यअतिथिका आतिथ्यहै ॥

४–इसीअर्थको स्पष्टकराहै वसिष्टस्मृतिमें प्र० १६४– अथापि ब्राह्मणाय वा राजन्याय वाऽभ्यागताय वा महोक्षं वा महाजं वा पचेदेवमस्यातिथ्यंकुर्वन्तीति ॥ अ०४ ॥८॥

अर्थ ब्राह्मण वा राजा के आगमन सें अनन्तर ब्राह्मणके लिये वा राजाके लिये वा अतिथिं के लिये बडे बकरेको पकावे, इस प्रकार द्विज

——:(०):——

पुरुष इसब्राह्मणादिका आतिथ्य करतेहैं ॥

हेपाठको — देखो प्रमाणांक ७५ को बृहत्पराशरसंहितामेंभी नित्य पंचयज्ञनमें आतिथ्यालिये मांसका विधानहै तो प्रथम प्रकरणसें विरुद्ध और कोशादिग्रन्थोंसे विरुद्ध और शतपथब्राह्मण वसिष्ठस्मृतिआदिकोंसे विरुद्ध किसीसमाजीभ्राताने असंभवअर्थ लिखडाला तो कोइआश्चर्य्य नहींहै क्योंकि समाजीभाईजी तो पाठको तोडफोडदेनेमें बदलदेनेमें भी संकोच नहींकर्ते तो असंभवअर्थ लिखडालना क्या बड़ीबातहै ॥

ऐतरेयब्राह्मण प्र०१६५–सएनयोरेषोऽच्युतोवरवृतो ह्येनयोस्तस्मात्तस्याशितव्यंचैवलीप्सितव्यंच ॥ अध्याय ६ ॥खण्ड ३ ॥

इसपर सायणभाष्य प्र०१६६-सएषपशुरेनयोरग्नीषोमयो रच्युतो अवश्यंकर्त्तव्यः वरेणवृतत्वात् तस्मादेवंप्रशस्तत्वात्तस्यपशोर्मांसमाशितव्यंचैवसर्वदाभक्षितव्यमेव । नकेवलंभक्षणं किंतु लीप्सितव्यंच भक्षणात्पूर्वमादरेणमहतालब्धुमेष्टव्यमपि

हेपाठको—ऐतरेयब्राह्मणके इसस्थलमें अग्नि व सोमदेवतानिमित्तक हविःसें शेष जो अग्नीषोमीयअजपशुका मांसहै वो अवश्य भक्षणयोग्यहै, इसअर्थका पूर्वपक्ष उत्तरपक्षकर विस्तारसें प्रतिपादन कराहै वो विस्तारभय सें पूर्वपक्षउत्तरपक्षके वाक्यनको छोडकर उस उत्तरपक्षके यिह सिद्धान्त वाक्य लिखेहैं —

इनका अर्थ-वोयिह अग्नीषोमीयपशु अज इनअग्निसोमदेवता लिये अवश्यं बनाना चाहिये क्योंकि यिह अग्निसोम देवताने इन्द्रसें वर लियाहुआ है उससें श्रेष्ठ होनेकर उसअजपशुका मांस नित्यभक्षण कराचाहिये ॥

केवलभक्षणही नहीं किंतु भक्षणसें पहिले प्राप्तहोनेलिये बडेआदरसें चाहनाभीचाहिये ॥

ऐतरेयब्राह्मणमें यज्ञीयपशुके विभागकथनकी प्रतिज्ञा करके उसका विभागभी ऐसेकहाहै देखो ॥

ऐतरेयब्राह्मण प्र० १६७—अथातःपशोर्विभक्ति स्तस्य विभागंवक्ष्यामः ॥ हनूसजिह्वे प्रस्तोतुः,श्येनंवक्ष उद्गातुः,कण्ठः काकुद्रः प्रतिहर्तु, दक्षिणाश्रोणि होतुः सव्या ब्रह्मणो

हेमित्र-पशुविभागका इत्यादिबहुतपाठहै विस्तारभयसें यहां थोडाही लिखाहै और इसपर देखिये ॥

सायणभाष्य प्र०१६८—जिह्वयासहितं हनूद्वयं प्रस्तोतुर्भागः। श्येनाकारं वक्षउद्गातुर्विभागः,यःकण्ठो यश्चकाकुद्रःकाकुदं तदुभयं प्रतिहर्तुर्विभागः। श्रोणिरूरुमूलं तदुभयं दक्षिणसव्यरूपंक्रमेणहोतु र्ब्रह्मणोविभागः

अर्थ-शस्त्रके निर्णयसें अनन्तर इसयज्ञीयपशुकी विभक्तिकहिये उस पशुके विभागको अबकथनकर्तेहैं। जिह्वाकेसहितदोनोंहनू प्रस्तोताका भागहै ॥

कपोलद्वयसेंउपरि मुखके भागका नामहनूहै ॥

श्येनाकार पशुका उर उद्गाताका विभागहै। सामवेदके गायनकरने वालेका नाम उद्गाताहै। बाजपक्षीकानाम श्येनहै, कंठ व तालु प्रतिहर्ताका विभागहै ॥

यज्ञीयपशुका दक्षिणश्रोणि होताका विभागहै और सव्य श्रोणि ब्रह्मा का विभागहै ॥

श्रोणिनाम कटिकाहै, ऋग्वेदके जाननेवालेका नाम होताहै, ऐसेही प्रस्तोता प्रतिहर्ता ब्रह्मा. यिहभी वेद वक्ता परोहितों के नाम हैं ॥

अश्वमेधयज्ञमें २१ यूप गाडेजातेहैं उनमें केईसैंकड़ों पशु व पक्षी देवतोंके बलिप्रदानालिये प्रथमबांधेजातेहैं, वो कौन २ पशु किस २ देवता लिये होताहै, यिह भी यजुर्वेदसंहिताके २४वें अध्यायमें स्पष्टकहाहै सोइस विषयका पाठ बहुतहै अतिविस्तारभयसे यहां स्वल्प मात्रही पाठ दिखलायाहै ॥

यजुर्वेदसंहिता प्र० १६६—अश्वस्तूपरोगोमृगस्ते प्राजापत्याः कृष्णग्रीव आग्नेयोरराटेपुरस्तात्॥ ॥अध्याय २४

अश्व, शृंगरहितअज गवय, सोयिह तीनपशु प्रजापतिब्रह्मादेवतानिमित्तकहैं, और कालीग्रीवावाला अज अग्निदेवतानिमित्तक अश्वके आगे ललाटस्थानके सन्मुख बांधाहोताहै ॥

प्रमाणांक २१में जो स्वामीदयानन्दजीने मांसादिकोंसे सायंप्रातः होमकरना कहाहै वोस्वामीजीका उपदेश निर्मूल नहींहै, देखो उसका मूल—

शतपथब्राह्मण प्र० २००—अहरहः पशुमालभेत ॥

काण्ड ४ ॥ अ० ६ ॥ ब्रा० ५ ॥ कण्डिका २ ॥

अर्थ—भाग्यवान् गृहस्थ प्रतिदिन देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर पशु का बलिप्रदानकरे ॥

शतपथब्राह्मण प्र २०१—एतदुहवै परममन्नाद्यं यन्मांसं ॥ का० ११ ॥ अ० ७ ॥ ब्रा० १ ॥ ३ ॥

अर्थ—निश्चितहै स्पष्टहै यिह 'परम' श्रेष्ठअन्नखानेयोग्यहै जो मांसहै ॥

कात्यायन श्रौतसूत्र प्र० २०२—विशास्ति पशुमन्यः ॥

अ० ६ ॥ १४७ ॥

—c—

कात्यायन श्रौतसूत्र प्र० २०३—ऋत्विजांवैकोप्रक्लृप्तत्वाच्छामित्रे ॥ ६ ॥ १४८ ॥

—(०)—

इनदोनोंसूत्रोंपर कर्कभाष्य प्र० २०४—शशुर्हिंसायाम् अन्यः पशुंहिनास्ति मारयतीत्यर्थः ॥१४७॥

—**—

कर्कभाष्य प्र० २०५—ऋत्विजांवैकः करोतिसंज्ञपनं नान्यः कुतएतत् । अप्रक्लृप्तत्वाच्छामित्रेशमन कर्माणि संज्ञपने नैवकश्चित्प्रकल्पितो वेदे । ननु शमितैनं कण्ठे बध्वा नयतीत्यस्ति प्रकल्पनम् । उच्यते ऋत्विजामेवैकः शमनक्रियायोगाच्छ

मितेति तस्मादृत्विजामेवैकः करोति ॥ १४८ ॥

दोनों सूत्र व भाष्यनका अर्थ-पशुको अन्य पुरुषमारैहै ॥ १४७ ॥ ऋत्विजोंमेंही एकऋत्विज् पशुका हिंसनकर्ताहै ऋत्विजोंसें अन्यकोई नहीं हिंसनकर्ता क्योंकि-पशुके बन्धनस्थान में पशुके मारणेलिये वेदमें होर कोई पुरुष कल्पन नहीं करा ॥

शंका-कंठमें बांधकर 'शमितापुरुष' मारणेवालापुरुष इसपशुको ल्यावे है, ऐसे वेदमें कल्पन कराहै ॥

समाधान—ऋत्विजोंमेंही एकऋत्विज मारणक्रियाके योगसें शमिता कहाजाताहै इसहेतुसें ऋत्विजोंमेंही एकऋत्विज हिंसनकर्ताहै ॥

कात्यायन श्रौतसूत्र प्र० २०६—शूले हृदयं प्रतृद्य शामित्रे श्रपयति ॥ अ० ६ ॥ १६२ ॥ ५-६२६

कात्यायन श्रौतसूत्र प्र० २०७—पशुंचोखायाम् ॥ १६३ ॥

का० श्रौतसूत्र प्र० २०८— पशुदेवतायै पुरोडाश एकादशकपालः ॥ ६ ॥ १६४ ॥

अर्थ—पशुके बन्धनस्थानके समीप उसपशुके हृदयको शूलमें चढा कर पकावे ॥ १६२ ॥ और पशुके मांसको हांडीमें पकावे ॥ १६३ ॥ पशुके देवतालिये एकादशकपालवाला पुरोडाशकरै ॥ १६४ ॥

—०—

का० श्रौतसूत्र प्र० २०६— हुतोच्छिष्टभक्षः ॥ अ० १६ ॥ १३ ॥

अर्थ-अग्निहोत्रमें हवनकरे मांसादिकोंसें शेषरहेके खानेवाला यजमान है ॥

का० श्रौतसूत्र प्र० २१०ऐन्द्रःपशुः॥ अ०१९ ॥ १६ ॥

इसपर-कर्कभाष्य प्र० २११—कर्त्तव्यइतिशेषः ॥

अर्थ—इन्द्रदेवतानिमित्तक पशुबनावे ॥

—०—

अलर्कप्रति मदालसानेंभी कहाहै देखो मार्कण्डेयपुराण प्र० २१२ शशकः कच्छपोगोधा श्वावित्खड्गोऽथपुत्रक। भक्ष्याह्येतेतथावर्ज्यौ ग्रामशूकरकुक्कुटौ ॥ अ० ३२ ॥ २ ॥ अर्थ—हेपुत्रअलर्क शश कच्छु गोह सेह गेंडा, यिहभक्ष्य हैं, ग्रामका सूर व कुक्कुट वर्जितहैं अर्थात् वनका सूर व मुर्गा भक्ष्यहै ॥

महाभाष्य प्र० २१३—अभक्ष्यप्रतिषेधेन वा भक्ष्य नियमः तद्यथा अभक्ष्यो ग्राम्यकुक्कुटःअभक्ष्यो ग्राम्यसूकरः इत्युक्ते गम्यत एतदारण्योभक्ष्यइति

अर्थ—अभक्ष्यके प्रतिषेधकरनेकर भक्ष्यका नियम जानाजाताहै वोजैसे ग्रामका कुक्कुट अभक्ष्यहै, ग्रामका सूर अभक्ष्यहै, ऐसेकहहुए यिह जाना जाताहै कि वनका सूर व मुरगा भक्ष्यहै ॥

मार्कण्डेयपुराण प्र० २१४—मांसमन्नंतथाशाकंगृहेयच्चो पसाधितम्॥ नचतत्स्वयमश्नीयाद्विधिवद्यन्ननिर्व पेत् अ० २६ ॥ ४८ ॥

अर्थ—गृहमें जो मांसअन्न तथाशाक पकायाजावे ताको आप नहीं खाए जे विधिसे देवताऽऽदिकोंको न देवे तो अर्थात् देवादिकोंको समर्पण

ककेंखाए ॥

शंखस्मृति प्र०२१५=राजीवान्सिंहतुण्डांश्च शकुलांश्चतथैवच ॥ पाठीनरोहितौभक्ष्यौ, मत्स्येषुपरिकीर्तितौ अ०१७ ॥२५ ॥

अर्थ–राजीव सिंहतुण्ड शकुल पाठीन रोहित, यिह पांचप्रकारके मत्स्य मत्स्यनमें भक्ष्यकहेहैं ॥

शंखस्मृति प्र० २१६--तित्तिरंचमयूरंच लावकंचकपिञ्जलम् ॥ वार्ध्राणसंवर्तकंच भक्ष्यानाहयमस्तथा अ० १७॥ २७ ॥

अर्थ–तित्तिर मोर लवा कपिंजल वार्ध्राणस बटेरा, इनको धर्मराजजी भक्ष्य कहतेभए ॥

मनुस्मृति प्र०२१७-- स्वमांसंपरमांसेन योवर्धयितुमिच्छति । अनभ्यर्च्यपितॄन्देवान् ततोऽन्यो नास्त्यपुण्यकृत् ॥ अ० ५ ॥ ५२ ॥ अर्थ–पितरोंको देवतोंको न पूजकर जो परके मांससें अपनेमांसको बढाया चाहताहै उससें भिन्नकोई अपुण्यकारी नहींहै अर्थात् उनको पूजकर मांसखानेसें पाप नहींहोता ॥

---o---

इस मनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० २१८--अविधिमांस-

भक्षणनिन्दानुवादः ॥

इसीपर गोविन्दराजकी टीका प्र० २१९—इत्यविधिमांस-भक्षणनिन्दार्थवादएव ॥ यिह अविधिसें मांसखानेकी निन्दा का अनुवादहै ॥

मनुस्मृति प्र० २२०—असंस्कृतान्पशून्मन्त्रै, र्नाद्याद्विप्रः कदाचन ॥ मन्त्रैस्तुसंस्कृतानद्या, च्छाश्वतंविधिमास्थितः ॥ अ०५॥३६॥

इसपर मनुभाष्य प्र० २२१—शाश्वतंशाश्वतोनित्योवैदिकइत्यर्थः ॥ आस्थितआश्रितः ॥

इसपर कुल्लूभट्टकी टीका प्र० २२२— शाश्वतंप्रवाहानादितयानित्यं ॥

इसीपर रामचन्द्रकी टीका प्र० २२३— शाश्वतमित्यनेन मुनिकृतत्वमुक्तम् । तेनान्यैः कृतमिति तेनतु सर्वथादोषाभावः ॥

अर्थ—वेदमंत्रोंसें जिनका प्रोक्षणादिसंस्कार नहींहुआ ऐसे पशुओंको ब्राह्मण कबी नहींखाए नित्यसनातन विधिमें स्थितहुआ ब्राह्मण मंत्रोंसें संस्कृतपशुओंको खाए । रामचन्द्रकहतेहैं कि—नित्यसनातनविधिकहने

कर पाहिले मुनि मांसभक्षण कर्तेरहेहैं यिह कहाहै, इस्सें सर्वथादोषका अभाव मनुजीने सूचनकराहै ॥

मनुस्मृति प्र० २२४— नमांसभक्षणेदोषो नमद्येन चमैथुने । प्रवृत्तिरेषाभूतानां निवृत्तिस्तुमहाफला ॥ अ० ५ ॥ ५६ ॥

इसपरमनुभाष्य प्र० २२५— महाफला फलविशेषा श्रुतेः स्वर्गः फलमिति मीमांसकाः एवंमद्ये क्षत्रियादीनां मैथुनेतु सर्ववर्णानाम् ॥

हेपाठको—यद्यपि इसमनुश्लोकके अर्थ पंडितजनोंने अपनी २ रुचिसें कईप्रकारके करेहैं तथापि जो प्रमाणोंसें तथा युक्तियोंसें विरुद्धअर्थ नहींहो वोई अर्थ साधुजानना होसक्ताहै ॥

—०—

अर्थ—विहितमांस भक्षणमें दोष नहीं, और अनिषिद्धमद्यके पानमें दोष नहीं, व चारोंवर्णोंको स्वस्त्रीगमनमें दोषनहीं, इनमें मनुष्यनकी प्रवृत्ति चलीआई है परंतु अविहितमांसके खानेसें निषिद्धमद्यके पीनेसें परस्त्रीगमनसें निवृत्ति तो महाफला, स्वर्गफलवालीहै ॥

विहितमांसखानेसें निवृत्ति महाफला नहीं इनतीनोंमें जैसे व्यासस्मृति— भ्रूणहत्यामवाप्नोति ऋतौभार्यापराङ्मुखः अ० २ ॥४५

अर्थ—ऋतुसमय जो स्वस्त्रीसें विमुख हो वो गर्भहत्याकेपापको प्राप्त होताहै, ऐसेही देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें मनुव्यासादि महर्षिओंने विहितमांसखानेकी निवृत्तिसें महादोष कहेहैं ॥

और प्रमाणांक २७ व २८में शास्त्रीयनियमविधिके उल्लंघनके ही यिह महादुष्टफल कहेहैं ॥

मनु व्यास वसिष्ट स्मृतिआदिकोंमें निरुद्ध विहितमांसखानेकी निवृत्ति को महाफला कहना अयुक्तहीहै ॥

यदि विहितमांसखानेकी निवृत्ति महाफलाहोती तो रामलक्ष्मणादि अवतार, सीतादमयन्तीआदि सतीस्त्रीएं और वेदवेत्ताब्राह्मण, नलअम्बरीप इक्ष्वाकु भीम अर्जुन युधिष्ठिरप्रभृतिमहाराजे, मांसभक्षणमें प्रवृत्तही कैसे हो सक्तेथे ॥

हेभ्रातः देखो प्रमाणांक १८३-- और २४२ आदिकोंको चारों वेदोंका अनुवादकरनेवाले ब्रह्मतेजवाले पुत्रके होनेलिये श्रुति और सूत्र मांसके खाने खुलानेका विधानकरतेहैं तो ऐसा वेदोंका वक्ता ब्रह्मतेजस्वी दीर्घआयुवाला पुत्रहोना क्या महाफल नहींहै ॥

हेमित्र, स्वर्गकीदृष्टिसें ऐसापुत्रहोनाही महाफलहै अतःविहितमांस खानेकी निवृत्ति नहीं किंतु अविहित मांसखानेकी निवृत्ति और विहितमांस खानेकी प्रवृत्ति महाफलाहै ॥

इसअर्थमें संकोचकरना पंडितोंका समीचीन नहीं क्योंकि इसअर्थके अनुकूल देखो व्यासजीकेपिता पराशरजीकी बृहत्पराशरसंहिता प्र० २२६

अन्नादेरपिभक्ष्यस्य स्नेहमद्यामिषस्यच ॥ महा-फलानिवृत्तिःस्यात्प्रवृत्तिःस्वर्गसाधना अ० ७। ३२३॥

अर्थ भक्षणयोग्य अन्नादिककोभी और घतैलआदिक स्नेहकी व मद्यकी मांसकी इनचारोंकी निवृत्ति महाफलाहै इनकी प्रवृत्ति स्वर्गका साधन है ॥

यहां विचार करना चाहिये कि-- भक्ष्यअन्नादिकोंकी सर्वथानिवृत्ति तो संभवेही नहीं किन्तु देवतापितर अतिथिआदिकोंके उद्देशसें विना अन्न

आदिकोंका पकाना, न देवताऽऽदिकोंको न अर्पण करके खाना, धर्मशास्त्रों में निषिद्धहै उसीको वृथापाक वृथाभोजन कहतेहैं और देवताऽऽदिकोंको अर्पणकरके खाना विहितभोजनहै, वृथाअन्नादिकोंके खानेकर पापहोताहै यो प्रबलप्रमाणोंमें पहिले लिखचुकाहूं ॥

अतः वृथाअन्नके वृथाघृतमांसादिकोंके खानेकी निवृत्तिमहाफलाहै और विहितअन्नघृतमांसादिकोंकी प्रवृत्ति स्वर्गका साधनहै क्योंकि उस में देवताऽऽदिकोंको अन्नघृतमांसादिकोंके समर्पणकरणेकर स्वर्गका हेतुपुण्य उद्भवहोताहै सो, यिह अर्थ प्रमाणांक ७५ बृहत्पराशर संहितामेंभी स्पष्टहीहै

यहां जो अन्नादिकोंके साथ मद्यकाभी ग्रहणकराहै उसनिषिद्धमद्यकी निवृत्ति महाफलाहै, और सौत्रामणीयज्ञमें मद्यका विधानहै अतः सौत्रामणी यज्ञ में मद्यकी प्रवृत्ति स्वर्गका साधन जाननी ॥

मनुस्मृति प्र० २२७—**यज्ञायजग्धिर्मांसस्ये,त्येषदैवो विधिःस्मृतः । अतोऽन्यथा प्रवृत्तिस्तु राक्षसो विधिरुच्यते ॥ अ० ५ ॥ ३१ ॥**

अर्थ—देवमनुष्यादियज्ञलिये यज्ञका अंगरूपजो मांसखानाहै यिह देवविधि कहीहै, इस्से अन्यथा मांसखाना राक्षसविधि कहीजातीहै अर्थात् देवतापितरअतिथि आदिकोंको समर्पणकरकेमांसखाना दैवविधिहै, उनको समर्पणकरेविना मांसखाना राक्षसविधिहै यिहमनुका सिद्धान्तहै ॥

—०—

भविष्यपुराण प्र० २२८—**वसुभ्यो मांसमोदनम् ॥**
पर्व १ ॥ अ० ५७ ॥ ४ ॥ अर्थ— वसुदेवतोंकेलिये मांसभातको देवे ॥

—०—

भविष्यपुराण अ० २२६—गरुडेमत्स्यमोदनम् ॥

॥ १ ॥ ५७ ॥ १३ ॥ अर्थ-गरुडदेवतानिमित्त मत्स्य और भातको देवे ॥

———

भविष्यपुराण अ० २३०—अन्नंचापितथापक्वं, मांसं च कुरुनन्दन। दातव्यंप्रथमंतस्मै, श्रावकेनृप सत्तम ॥ पर्व १ ॥ अ० २१६ ॥ १५१ ॥

अर्थ—हेकुरुनन्दनयुधिष्ठिर ! उसपुराणवाचनेवालेको अन्न और मांस पकाहुआ पहिले देना चाहिये ॥

——◉——

पूर्वपक्षी०-महाभारत—सप्तर्षयोवालखिल्या, स्तथैवचमरीचिपाः ॥ अमांसभक्षणंराजन् प्रशंसन्ति मनीषिणाः ॥ १३ ॥ ११५ ॥ ११ ॥

अर्थ—हेयुधिष्ठिर मरीचि अत्रिआदिक सप्तऋषि और वालखिल्यमुनि मरीचिपा, यिहसव बुद्धिमान् अमांसभक्षणकी प्रशंसा करतेहैं इत्यादि श्लोक भी तो भीष्मपितामहजीने कहेहैं ॥

आस्तिक०—अमांसभक्षीका लक्षणभी तो भीष्मपितामहजीने कहाहै वो क्या तुमने देखानहीं तो अब देखिये महाभारत अ०२३१—

अभक्षयन्वृथामांस,ममांसाशीभवत्युत ॥ दानंददत्पवित्रीस्या, दस्वप्नश्चादिवाऽस्वपन् १३॥६३॥१२॥

अर्थ—वृथामांसके न खानेवालापुरुष अमांसभक्षीहै और दानका दातापुरुष पवित्रहै दिनमें न सोनेवाला अनिद्रहै ॥

महाभारत प्र० २३२ न भक्षयेद्वृथा मांसं ममांसा शीभवत्यपि ॥प० ७॥२२१॥१२॥

अर्थ - वृथामांसको जो नहीं खाता वो अमांसाशी निश्चितहै ॥

अर्थात् वृथामांसका न खाना अमांसभक्षणहै ऐसे वृथामांसके त्याग रूप अमांसभक्षणकी सप्तऋषिआदिक प्रशंसाकरतेहैं, विहितमांसके त्याग की नहीं प्रत्युत विहितमांसके त्यागसे तो देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें व्यास वसिष्ठादिमहर्षिओंने नरकआदिकोंकी प्राप्तिकहीहै, व्यासजीने बहुत महर्षिओंको मांसखानेका ऐसेविधानकराहै देखो पद्मपुराण प्र० २३३--

गोधाकूर्मःशशःखड्गः शल्लकश्चेतिसत्तमाः ॥ भक्ष्यान्पञ्चनखान्नित्यं मनुराहप्रजापतिः खण्ड ३॥ अ० ५६॥ ३६ ॥

अर्थ हेश्रेष्ठमहर्षिओ गोह कूर्म शश गेंडा सेह इनपांचनखवालोंको प्रजा पतिमनुजी नित्यभक्ष्यकहतेरहे ।

पद्मपुराण प्र०२३४—मत्स्यान्सशल्कान्भुञ्जीत, मांसं रौरवमेवच ॥ निवेद्यदेवताभ्यस्तु ब्राह्मणेभ्यश्च- नान्यथा ॥३॥५६॥३७ ॥

अर्थ - सशल्कमत्स्यनको रुरुमृगके मांसको, देवता और ब्राह्मणोंप्रति अर्पणकरके खाए, अन्यथा नहीं ॥

पद्मपुराण प्र० २३५—मयूरंतित्तिरंचैव कपोतंचकपि-

ञ्जलम् ॥ वार्ध्रीणसंचकंभक्ष्यं, मीनं प्राहप्रजापतिः ३८ ॥

अर्थ मोर निसार कबूतर चातक वाध्रीणस बगला मीन, इनसबको प्रजापतिमनुजी भक्ष्यकहते रहे ॥

पद्मपुराण प्र० २३८— शफरींसिंहतुण्डंच, तथापाठी नरोहितौ ॥ मत्स्याश्चैतेसमुद्दिष्टा भक्षणीयाद्विजोत्तमाः ॥३९॥

व्यासजी कहतेरहे हेद्विजोंमेंउत्तम महर्षियो - शफरी सिंहतुण्ड तथा पाठीन रोहित, यिह भक्षणीय मत्स्यकहेहैं ॥

पद्मपुराण प्र० २३७ प्रोक्षितंभक्षयेदेषां, मांसचाद्विज काम्यया । यथाविधि प्रयुक्तंच प्राणानामपिचात्यये ॥ ४० ॥

अर्थ—वेदमंत्रसें संस्कृतमांसकोखाए, और ब्राह्मणोंकी कामनासें सिद्ध करे मांसको खाए, और देवकर्म पितृकर्मादिकोंमें यथाविधिविहितमांसको खाए, और प्राणान्तसमय अर्थात् औषधालियेभी मांसको खाए ॥

पद्मपुराण प्र० २३८—भक्षयेन्नैवमांसानि, शेषभोजीनलिप्यते । औषधार्थमशक्तोवा, नियोगाद्यज्ञकारणात् ॥ ४१ ॥

अर्थात् वृथा मांसोंको नहीं खाए, देवताऽऽदिकोंको अर्पणकर्के शेष मांसके खानेवाला दोषमें लिपायमान नहीं होता, वा औषधलिये अशक्त पुरुष विधिसेंविनाभी मांसखानेकर दोषवाला नहींहोता। और देवतादिकोंके यज्ञलिये श्रुतिस्मृतिओंकी प्रेरणासें मांसखानेकर दोषवाला नहींहोता

—०—

औरकेई पुरुष कहतेहैं कि वेदसूत्रस्मृतिओंका तात्पर्य्यमांसखानेकी निवृत्तिमेंहै प्रवृत्ति में नहीं, मांसभक्षणमें प्रवृत्तितो मनुष्यनकी रागसें हुईहै होरहीहै। विधिवाक्यनसें नहीं सो यिहकथनभी असत्यहीहै तथाहि कहताहूं सुनिये—

१—यदि मांसकीनिवृत्तिमें तात्पर्य्यहोतातो उसका वेदसूत्रस्मृति ग्रन्थनके किसी स्थलमेंभी विधान न करसक्ते किन्तु निषेध २ ही कर देते परन्तु उनग्रन्थनमें पशुवलिप्रदानका मांसभक्षणका हजारोंवाक्यनमें विधान कराहुआहै॥

यदि आप कहें कि-रागसें प्रवृत्तिहुईहै उसके निरोधलिये विधान करेगएहैं, तो यिहकथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि जैसे जिनदेवजीने विधान नहीं किन्तु निषेध २ ही कराहै तो जैनमतमें आदिसेंअवतक मांसकी प्रवृत्ति होईहैनहीं, तैसेही वेदसूत्रस्मृति पुस्तकोंमें भी विधान नहीं किन्तु निषेध २ ही करदेते तो मांसकी प्रवृत्तिका होनाही असंभवथा तो उसके निरोधलिये विधानोंकी कुछ अपेक्षाही नहींथी॥

और मांसभक्षणके विधान करनेकर मांसकी प्रवृत्तिका निरोध होभी नहीं सक्ता अतः हजारोंवाक्यनमें मांसभक्षणका पशुवलिप्रदानका विधान-करनेकर वेदादिकोंका तात्पर्य विहितमांसखानेकी प्रवृत्तिमेंसिद्धहोताहै॥

२-यदि आप कहें कि- अविहितमांसकी निवृत्तिमें सर्वनिषेध

वाक्यनका और विहितमांसकी प्रवृत्तिमें मब विधानवाक्यनका तात्पर्यहै तो यिह ठीकहै ॥

३—यदि मांसकी निवृत्तिमेंही तात्पर्य्यहोता तो यज्ञोंमें पशुबलिदान का मांसभक्षणका विधान कभी न करमक्के क्योंकि-यज्ञनमें तो धर्मात्मा-महाराजे वेदवक्ताब्राह्मण महर्पिजन एकत्रहोतेहैं और रामकृष्णादिअवतार भी संमिलितहुएहैं वहां वेदमंत्रोंसे होमजपप्रभृत्ति श्रेष्ठकर्म तथा पशुबलिदान होमकर्के शेषमांसको भक्षणभी कराजाताहै तो ऐमेपरमपूज्यपुरुषोत्तमजनोंके संमुख मानों पशुबलिदानको मांसभक्षणको मम्मान दिया जाता है

यदि मांसकी निवृत्तिमें तात्पर्य्यहोता तो यज्ञनमें परमपूज्यजनोंके समीप नहीं किन्तु मांसभक्षणका किसीऐकान्त नीचस्थानमें विधान करते परन्तु एकान्तनीचस्थानमें नहीं प्रत्युत अतिश्रेष्ठयज्ञस्थलआदिकोंमें पशु-बलिदानका मांसभक्षणका विधानकराहै इस्से विहितमांसकी प्रवृत्तिमें वेदा-दिकोंका तात्पर्य्य सिद्ध होसक्ताहै ॥

—०—

४—वेदवेत्ताब्राह्मणोंकी धर्मात्मामहाराजोंकी रामलक्ष्मणादि अव-तारोंकी पशुबलिदानमें मांसभक्षणमें प्रवृत्ति श्रुतिस्मृतिओंकी ' विधिसे ' प्रेणासे हुईहै,रागसेही नहीं क्योंकि विचारशील परमधर्मात्माजनोंकी प्रवृत्ति तो विधिविहित अर्थोमेंही होतीहै देखो जैसे प्रमाणांक ११२ में रामजीने लक्ष्मणको पशुबलिदानालिये कहाहै फिर विधिसे मांसका बलिदानकराहै ॥

—=—

५—हेपाठक-यदि-रागसेंही पशुहिंमामें मांमभक्षणमें प्रवृत्ति होती तो मरुत्त दशरथ युधिष्ठिरप्रभृत्ति महाराजोंको यज्ञनमें महर्पिओंको ऋत्विज् बनानेकी क्या आवश्यकताथी ।

६—हेभ्रातः-देखो प्रमाणांक १६५ और १६६ में बलात्कारसें मांस भक्षणालिये प्रेरणाकीहै ॥

और देखो प्रमाणांक १८३ को यजुर्वेदकी बृहदारण्यक वेदान्त उपनिषद्‌मेंभी वेदवक्तापुत्रकी कामनासें गर्भाधाननिमित्त स्त्रीपुरुषदोनोंको मांस सहितभातखानेकी प्रेरणाकीहै तो इत्यादिकविधिवाक्यनसें निश्चयहोसक्ताहै कि—पहिले मांसकी प्रवृत्ति विधानवाक्यनसें हुईहै अतः वेदादिकोंका मांस की निवृत्तिमें तात्पर्य्य कहना असत्यहीहै ॥

शंका—क्या स्त्रीओंलियेभी मांसखानेका विधानहै ॥

समाधान—स्त्रीओंलिये विधान नहोता तो सीता दमयन्तीआदि सतीस्त्रीआं मांसको कैसे खायसक्तीथीं ॥

और प्रमाणांक १८३ आदिकोंमें स्त्रीपुरुषदोनोंको मांससहित भातखानेका विधान है ॥

—:०:—

वसिष्ठस्मृति प्र० २३६— त्रिरात्रंरजस्वलाऽशुचिर्भवति सान मांसमश्नीया न्नग्रहान्निरीक्षेत ॥ अ० ५ ॥ ७ ॥ अर्थ—रजस्वलास्त्री तीनरात्रि अशुद्ध होतीहै वह मांसको न खाए और चन्द्रमाऽऽदिक ग्रहोंको न देखे अर्थात् शुद्धहोनेपर मांसकोखाए और ग्रहोंकोदेखे ॥

(आश्वलायन गृह्यसूत्र)—षष्ठेमास्यन्नप्राशनम् ॥ अ० १ ॥ कण्डिका १६ ॥ १ ॥

अर्थ—अपनी सन्तानको जन्मसें षष्ठेमासमें विधिसें अन्न खुलाए षष्ठे मासमें कैसे अन्नखुलाए इसका उत्तर—

आश्वलायन गृह्यसूत्र प्र० २४०— आजमन्नाद्यकामः ॥ ॥ १ ॥ १६ ॥ २ ॥ —इससूत्रपर गार्ग्यनारायणीयावृत्ति प्र० २४१ अजस्येदमाजम् तैत्तिरसाहचर्य्या न्मांसस्यात्र-ग्रहणम् न क्षीरदधिघृतानाम् ॥

अर्थ मेरा पुत्र अन्नादिबहुतखुराक पचायसके,, ऐसी कामनावाला पुरुष सन्तानकोजन्मसें षष्ठमासमें बकरेका मांसखुलाए, इसीद्वितीयसूत्रकी वृत्तिमेंलिखतेहैं कि–साथही तृतीयसूत्रमें तैत्तिरपदकहनेसें यहां अजके मांसका ग्रहणहै, यहां अजाके दुग्धदधिघृतका ग्रहण नहींहै ॥

आश्वलायन गृह्यसूत्र प्र० २४२—तैत्तिरंब्रह्मवर्चसकामः ॥ १ ॥ १६ ॥ ३ ॥

इसपर गार्ग्यनारायणीया वृत्ति प्र० २४३— तित्तिरेरिदंतैत्तिरम् । आजतैत्तिरयो र्व्यञ्जनत्वेनोपदेशो नान्नत्वेन तथालोके प्रसिद्धत्वा त्तेनान्नमपि सिद्धम् ॥

अर्थ—ब्रह्मतेजकी कामनावाला पुरुष संतानको तित्तिरका मांस खुलाए ॥

वेदोंके पठनेसें अनुष्ठानसें जन्य जोतेज वोब्रह्मतेजपदका अर्थ जानना वृत्तिकार लिखतेहैं कि—अजके और तित्तिरके मांसका व्यंजनतासें उपदेशहै अन्नरूपतासें नहीं क्योंकि वैसेही लोकमें प्रसिद्धहोनेसें, अतः व्यंनजके उपदेशकरणेकर अन्नभी खुलाना सिद्धहै ॥

—:o:—

संस्कारविधि प्र० २४४—अजके मांसका भोजन अन्नादिकी इच्छाकरनेवाला तथा विद्याकामना के लिये तित्तिरका मांसभोजनकरावे ॥

विदितहो कि–वहां चतुर्थसूत्रमें जो तेजकीकामनावालेको घृतयुक्त भातका भोजनकरवानालिखाहै वो वहां अन्नका उपदेशहै और पहिला दूसरे तीसरेसूत्रमेंअजके तित्तिरके मांसका व्यंजनरूपका उपदेशहै ॥

फिर पंचमसूत्रमेंजो दधिमधुघृतमें युक्तअन्नका भोजनकरवानाकहाहै वो मांसमेंभातके भोजनमेंअनन्तर शहदतदधिसेंयुक्त मिष्ट अन्न खुलाना कहाहै ॥

—०—

अथषष्ठेमासमें अन्नप्राशनसंस्कारके पारस्करगृह्यसूत्रोंकोभी देखो ॥

पारस्करगृह्यसूत्र प्र० २४५—भारद्वाज्यामांसेन वाक् प्रसारकामस्य ॥ काण्ड १ ॥ कण्डिका १९ ॥ ७ ॥

इससूत्रपर हरिहरभाष्य प्र० २४६—भारद्वाज्याः पक्षिण्याः मांसेनकुमारस्य प्राशनंकारायितव्यंभवति कस्य, पितुः कथंभूतस्य वाक्प्रसारकामस्य वाचः प्रसारोवहुत्वं तत्कुमारस्यकामयतेइतिवाक्प्रसार कामः तस्य ॥

सूत्र व भाष्यका अर्थ–जन्ममें षष्ठमासमेंबच्चेको भारद्वाजीपक्षिणी के मांससाथभोजनखुलावे यदि उसकापिताचाहताहै कि–मेरा पुत्रविनारुके बहुभाषणकरनेवालाहो ॥

इससूत्रपर पं० राजारामजीका हिन्दीभाष्य प्र० २४७-
भारद्वाजीके मांसकेसाथ 'अन्नखिलाए' यदि वह चाहताहै कि इसकापुत्र विनारुके सुन्दर बोलनेवालाहो ॥ ७ ॥

—०—

पारस्करगृह्यसूत्र प्र० २४८—कपिञ्जलमांसेनान्नाद्यकामस्य ॥ १ ॥ १६ ॥ ८ ॥

इसपर हरिहरभाष्य प्र० २४६—एवमन्नाद्य कामस्य कपिञ्जलमांसेन ॥

अर्थ- ऐसेकपिञ्जल के मांससाथअन्नखुलावे यदि वह चाहताहै कि- मेरापुत्र अन्नादिबहुतपचाने वालाहो ॥

इससूत्रपर पं० राजारामजीका हिन्दीभाष्य २५०—
कपिञ्जलके मांसकेसाथ यदि वहचाहताहै कि उसका पुत्र खुराक का पचानेवालाहो ॥ ८ ॥

—०—

पारस्करगृह्यसूत्र प्र० २५१—मत्स्यैर्जवनकामस्य ॥ ॥ १ ॥ १६ ॥ ६ ॥

इसपर हरिहरभाष्य प्र० २५२—यदि कुमारोऽयं जवनः शीघ्रगामीस्यात्तदा यथासंभवं मत्स्यान्प्राशयेत् ॥

सभाष्यसूत्रका अर्थ-यदि पिताचाहताहै कि, यिह बाल शीघ्रगामी हो तो बालकको यथासंभव मत्स्यनके मांससाथ भोजनखुलाए ॥

इससूत्रपर पं० राजारामजीका हिन्दीभाष्य प्र० २५३—

मछलियोंके मांसके साथ यदि वह चाहताहै कि-वेगवाला हरएक काममेंहो ॥ ९ ॥

—०—

पारस्करगृह्यसूत्र प्र० २५४—कृकषाया आयुष्कामस्य ॥ १ ॥ १९ ॥ १० ॥

इसपर हरिहरभाष्य प्र० २५५—सयदिकुमारो दीर्घायुः स्यादिति कामयेत्तदाकृकषायामांसं प्राशयेत्

सभाष्यसूत्रका अर्थ-सोपिता यदि ऐसे चाहताहै कि-यिह बाल दीर्घायुवालाहो तो कृकपाके मांससाथ भोजनखुलाए ॥

इससूत्रपर पं० राजारामजीका हिन्दीभाष्य प्र० २५६—

कृकपाके मांसके साथ यदि वह चाहताहै कि दीर्घायुवालाहो ॥ १० ॥

पारस्करगृह्यसूत्र प्र० २५७—आत्याब्रह्मवर्चसकामस्य ॥ १ ॥ १९ ॥ ११ ॥

इसपरहरिहरभाष्य प्र० २५८—यदि कुमारो ब्रह्मवर्च-

स्वीस्यादिति कामये त्तदा आड्या मांसं प्राशयेत्

सभाष्यसूत्रका ॥

अर्थ यदि उसका पिता ऐसे चाहताहै कि- यिह बाल ब्रह्मतेजवालाहो तो शरालपक्षीके मांससाथ भोजन खुलाए ॥

इससूत्रपर पं० राजारामजीका हिन्दीभाष्य प्र० २५६-आटिके मांसकेसाथ यदि वह चाहताहै कि—ब्रह्मवर्चसवालाहो ॥ ११ ॥

पारस्कर गृह्यसूत्र प्र०२६०—सर्वैःसर्वकामस्य ॥ ॥ १ ॥ १६ ॥ १२ ॥

इसपर हरिहरभाष्य प्र०-२६१—यदि वाक्प्रसारादीनि ब्रह्मवर्चसान्तानिसर्वाणि कुमारस्यभवन्त्वितिकामये त्तदा भारद्वाज्यादीना माद्यन्तानां सर्वाणिमांसानि क्रमेण प्राशयेत् अन्नपर्याय वा अन्नपरिपाट्या वा अन्नवदेकीकृत्यप्राशयेदित्यर्थः अन्नपर्यायेति अविभाक्तिक मार्षपदम् ॥

सभाष्यसूत्रका अर्थ-यदि उसका पिताचाहताहै कि-मेरे इसपुत्रके (विनारुके बहुभाषण, बहुतअन्नादिपचाना, शीघ्रगमन, दीर्घआयु, ब्रह्मतेज) यिह सबगुणहों तो भारद्वाजी कपिञ्जल मत्स्य कृकषा शराल, इनसबके मांसोंसाथ क्रमसे अथवा इनसबके थोडे २ मांसोंका एकठाकर्के उनमांसोंके साथ उसबालको भोजन खुलाए ॥ १२ ॥

अथ निर्णय करिये कि- छी महीनेके बच्चेका मांसखानेमें राग है हीनहीं किन्तु श्रुतिस्मृतिसूत्रादिकोंके वाक्यही बलात्कारसें मांसखानेमें प्रवृति करवातेहैं अतः वेदसूत्रस्मृतिओंका तात्पर्य्य मांसकी निवृतिमें कहना असत्य हीहै ॥

—o—

यद्यपि अविहितमांसकी प्रवृतिमें तात्पर्य्य संभवेनहीं तथापि देखो प्रमाणांक १ आदिकोंमें मांसको घृततैलकीन्याई शुद्ध पवित्र कहाहै, फिर प्रमाणांक १६ आदिकोंमें कहाहै कि-विनामांगे मांसको कोई दे तो उस मांस को वापस नहींहठाए किंतु ग्रहण करले ॥

पुनः प्रमाणांक ३१ आदिकोंमें कहाहै कि- देवताऽऽदिकोंको अर्पण करके मांसखानेमें कोईदोष नहींहोता फिर प्रमाणांक ४८ आदिकोंमें वेद-विहित हिंसाको अहिंसारूपही स्वीकारकराहै ॥

पुनः प्रमाणांक ६६ आदिकोंमें वेदविहितहिंसाका श्रेष्ठफल वर्णन कराहै

फिर प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर अतिदोष कहाहै, इत्यादिक वाक्यनसें मांसकी निवृत्तिमें नहीं किन्तु विहितमांसखाने की प्रवृतिमें तात्पर्य्य सिद्धहीहै ॥

—:o:—

कथनकरे प्रमाणोंका संक्षेपसें अनुवाद पूर्वपक्षीद्वारा करतेहुए सिद्धा-न्तीद्वारा अबकहतेहैंकि-वेदादिकोंकर विहितआचरणका त्यागही वेदादिकों सेंभ्रष्टताहै ॥

मन्वाद्यैर्हिनिरूपितंशुचिपलं, वेदादिवैधंयतः

प्रत्याख्येयमितंनयाचनमृते, स्वीकार्य्यमेवेत्यपि
नोखादामिपलंतथापिसुरसं, बुद्धिप्रदम्पौष्टिकं,
वेदेभ्योपिसखेस्मृतिप्रभृतितो श्रेष्टस्यकान्यागतिः
॥ ९ ॥

भुङ्क्तेयश्चवृथापलंसतुनरो, दोषान्वितोजायते,
दत्वादेवमुखांश्चखादतिपलं, नैवास्यदोषोभवेत् ॥
मन्वाद्यैःसुमताऽथवेदविहिता, हिंसाह्यहिंसैवसा,
तस्याश्चाप्युभयोःफलंहिकथितं, श्रेष्ठागतिश्चेत्य-
पि ॥ ॥ १० ॥

योनाश्नातिपलंद्विजोहिविहितं, श्राद्धेचदैवेतथा,
प्रोक्तंतस्यमहार्षिभिस्तुनरकः, प्राप्त्याद्यनिष्टंफलम्
नोखादामिपलंतथापिसुरसं, बुद्धिप्रदम्पौष्टिकं,
वेदेभ्योपिसखेस्मृतिप्रभृतितो, श्रेष्टस्यकाऽन्यागतिः
॥ ११ ॥

वेदेषूपानिषत्सुसौम्याविहितं, स्मृत्यादिशास्त्रेष्वपि,
व्याख्यातंखलुभाष्यकृद्भिरपित, चक्रीसायणाद्यै-
स्तथा। नोखादामिपलंतथापिसुरसं,बुद्धिप्रदम्पौ-

ष्टिकं. वेदेभ्योपिसखेस्मृतिप्रभृतितो, भ्रष्टस्यकाऽन्यागतिः ॥ ॥ १२ ॥

टीका--पूर्वपक्षी०--यद्यपि मनु पराशर वशिष्ट आदि महर्षिओंनें तथा श्रीरामजीनेंभी मांसको प्रमाणांक १ आदिकोंमें शुद्ध पवित्र निरूपणकराहै क्योंकि जिस्में वेदादिकोंकर विहितहै, और याचनासेंविना किसीसें प्राप्तहुए मांसको वापस नहींहटाए किन्तु ग्रहणकरले, यिहभी मनुआदिकोंने प्रमाणांक १६ आदिकोंमें विधान कराहै, तथापि अन्यन्तपुष्टिकारी बुद्धिदेनवाले सुष्टु रसीलेमांसको मैं नहींखाता ॥

उत्तरसिद्धान्ती०--हेमित्र--वेदोंसें स्मृतिआदिकोंसें भ्रष्टहुएपुरुषकी होर क्या दशाहोतीहै अर्थात् वेदादिकोंकर विहितआचरणका त्यागही वेदादिकों सें भ्रष्टता है ॥८॥

पूर्वपक्षी०--वृथामांसकोजो खाताहै वो दोषवालाहोताहै, और जोपुरुष देवताऽऽदिकोंको अर्पणकर्के मांसको खाता है उसपुरुषको दोष नहींहोता, यिह प्रमाणांक ३१ आदिकोंमें मनुआदिकोंने निरूपणकराहै ॥ और वेद-विहितहिंसा प्रमाणांक ४६ आदिकोंमें अहिंसारूपही मानीहै,फिर प्रमाणांक ६८ आदिकोंमें विहितहिंसाका श्रेष्ठफलही वर्णनकराहै ॥ १० ॥

और श्राद्धमें तथा देवकर्ममें विहितमांसको जो द्विजपुरुष नहींखाता उसको नरकप्राप्तिआदिक अनिष्टफल प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें महर्षिओंनें

स्पष्टकहाहै, तथापि अतिपुष्टिकारी बुद्धिदेनेवाले सुष्ठुरसीलेमांसको मैं नहींखाता ॥

उत्तरसिद्धान्ती०-हेमित्र- वेदोंसे स्मृतिआदिकोंसे भ्रष्टहुएपुरुषकी होर क्या दशाहोतीहै ॥ ११ ॥

पूर्वपक्षी०—हेसौम्य— देखो प्रमाणांक १७६ आदिकों को वेदोंमें उपनिषद्में स्मृतिआदिकोंमें मांसखानेका विधान कराहुआहै, और भाष्यकार श्रीसायणाचार्य्यआदिकोंनेभी वैसेही वेदानुसारीहि मांसखानेकी व्याख्याकरीहै यद्यपि तथापि अतिपुष्टिकारी बुद्धिदेनेवाले सुष्ठुरसीले मांस को मैं नहींखाता ॥

उत्तरसिद्धान्ती०--हेमित्र वेदोंसे स्मृतिआदिकोंसे भ्रष्टहुएपुरुषकी होर क्या दशाहोतीहै अर्थात् वेदादिकोंकर विहितआचरणका त्यागही वेद आदिकोंसे भ्रष्टताहै ॥ १२ ॥



अन्तर्यामीके अनुग्रहसे प्रथमप्रकाशकी समाप्तिको सूचनकर्तेहुए अब परमेश्वरके स्मरणरूप मंगलाचरणको कर्तेहैं ॥

आरब्धोयान्नियुक्तेन मयाऽसौतदनुग्रहात् ।
प्रकाशःप्रथमोऽस्यायं निर्मलोह्यादितीकृतः १३

टीका, जिस सर्वशक्तिमान् परमेश्वरकर प्रेरेहुए मुझने यिह भक्ष्यनिर्णय भास्कर ग्रन्थ आरम्भ कराथा उस अन्तर्यामी परमेश्वरके अनुग्रहसें इसग्रन्थ का यिह प्रथमप्रमाणप्रकाश निर्मलउदयकरादियाहै इति ॥

चौपाई, शुरूकियो पुस्तकमैंजासें, प्रेरितहो उसकीहिकृपासें ।
उसका प्रथमप्रमाणप्रकाशा, निर्मल उदयकियोतमनाशा ॥

—०—

इति श्रीहरिद्वारे पातञ्जलाश्रमनिवासिना
स्वामि तेजोनाथेनोदिती कृते
भक्ष्यनिर्णयभास्करे
प्रथमःप्रमाण
प्रकाशः
॥१॥

—:*:—

श्रीगणनाथायनमोनमः　　　　　　　　श्रीमरस्वत्यैनमोनमः ॥

चौपाई—ध्याकरवन्दोताईशानं, हमरिधियोंकाप्रेरणवानं ॥
हमरिधियोंकोप्रेरेईशा, सद्दृष्टान्तविषयजगदीशा ॥

—:०:—

प्रथम प्रमाणप्रकाशमें पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक वेदादिकोंके प्रमाणोंको दिखलाकर अब उसीविषयमें शिष्टाचाररूप दृष्टान्तों के दिखलाने लिये द्वितीयदृष्टान्तप्रकाशका आरम्भ कर्तेहुए निर्विघ्नसमाप्ति लिये पहिले मङ्गलश्लोकका उच्चारणकर्तेहैं ॥

ध्यात्वावन्देतमीशान, मस्मद्धीप्रेरकोहियः ।
धियोनःप्रेरयत्वीशः, सद्दृष्टान्तनिरूपणे ॥१॥

टीका—उसपरमेश्वरको ध्यानकर्के मैं बन्दना कर्ताहूं जो हमारी बुद्धिओंको प्रेरै है, वोअन्तर्यामी ईश्वर हमारीबुद्धिओंको मत्स्यदृष्टान्तोंके निरूपणमें प्रेरै ॥ १ ॥

श्रुत्यादीनिहिदर्शितानिशतशो, दुर्लङ्घ्यमानानिवै, स्पष्टान्येवपलाशनेपशुबला, वादिप्रकाशेमया ॥ दृष्टान्तान्खलुदर्शितुंचविषये, तस्मिन्नसंख्यान्वरान्, आरब्धोऽनतिविस्तरोऽयमधुना, नूनंप्रकाशोऽपरः ॥ २ ॥

टीका०—पहिलेप्रकाशमें पशुबलिप्रदान और मांसभक्षणविषयमें श्रुतिसूत्रस्मृतिआदिक आस्तिकजनोंमें दुर्लंघ्यबहुतप्रमाण दिखलायदियेहैं

उसहीविषयमें असंख्यश्रेष्ठदृष्टान्तोंके दिखलानेलिये अब अनतिविस्तृत द्वितीय दृष्टान्तप्रकाश आरम्भ करतेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—आपकेकथनकरे बहुतहीप्रबल श्रुतिसूत्रस्मृति आदिक प्रमाण तो सुनलिये, परन्तु तुमारेलिखे इनकेअर्थोंमें विश्वास तब होसक्ताहै जब उनके अनुकूलप्रामाणिक दृष्टान्तभी मिलें। अर्थात् प्रामाणिक सद्दृष्टान्तों सेंही प्रमाणोंके अर्थका तात्पर्य्य का निर्णयहोसक्ताहै—

भावार्थयहहै कि यदि वेदसूत्रस्मृतिओंका तात्पर्य्य पशुबलिप्रदान की व मांसकी निवृत्तिमेंहो तो पशुबलिप्रदानमें व मांसभक्षणमें अवतार वा महर्षि वा धर्मात्माराजे प्रवृत्त नहीं होसक्ते ॥

यदि वेदादिकोंका पशुबलिप्रदानकी मांसखानेकी प्रवृत्तिमें तात्पर्य्यहो तो वह प्रवृत्त होसक्तेहैं अतः कहनाचाहिये कि पशुबलिप्रदानमें व मांसभक्षणमें कोई उत्तमपुरुषभी प्रवृत्तहुआहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र—उक्तप्रमाणसिद्धअर्थमें शिष्टाचाररूपदृष्टान्त असंख्यहोंहैं वो दिखलावुंहीगा परन्तु पहिले तुमारे दृष्टान्तोंका निर्णय तो करलवुं इसलिये प्रथम आप अपने दृष्टान्तोंको सुनाइये ॥

पूर्वपक्षी०—अहिंसाप्रदीपके तृतीयभागमें लिखाहै कि सुनो हिंसा दोषपर भीष्मजीका दृष्टान्तसुनाजाताहै कि— प्रश्नहुआ कि— इसजन्ममें तो आपने कोईपाप कर्म नहींकिया फिर ऐसाक्लेश क्यों पारहेहैं ऐसासुनकर भीष्मजी ध्यानलगाकर बोले कि मैंने बाल्यावस्थामें किसीएकजीव को सींखसे पीडादीथी उसीका यहफलहै कि—अन्तमें बाणोंसे पीडा पारहाहूं, शिक्षा —किसीभी जीवको पीडा देनी न चाहिये ॥

आस्तिक०यिह आपका दृष्टान्त प्रामाणिकभी नहीं, और प्रसंगमें उपयोगीभी नहीं, क्योंकि यदि किसी आर्षग्रन्थमें यिह प्रश्न उत्तर लिखाहोता

तो तुम उसग्रन्थका नामभी अध्यायांकभी लिखते तो तुमारा दृष्टान्त प्रमाणसिद्ध कहाजाता सो तो तुमने लिखाही नहीं अतः यिह तुमारा दृष्टान्त प्रमाणसिद्ध नहींहै ॥

और यदि भीष्मजीने बाल्यावस्थामें किसीएकजीवको सींखसे पीडा दीथी तो वह विहितहिंसा नहीं किन्तु वह निषिद्धहिंसाथी, ऐसी निषिद्धहिंसाका अनिष्टफलहुआ परन्तु विहितहिंसाके प्रसंगमें निषिद्धहिंसाका दृष्टान्त देना प्रकरणमें उपयोगी नहीं किंतु अपनी अज्ञता प्रकट करणीहै।

औरजो तुमने कहा कि—किसीभीजीवको पीडादेनी न चाहिये, इसमें निषिद्धहिंसाका तो त्यागही कराचाहिये और विहितहिंसाका त्याग तो श्रुतिसूत्रस्मृतिओंमें विश्वासके अभावरूप नास्तिकतासेंही कहरहेहो क्योंकि यदि विहितहिंसाका त्याग अपेक्षितहोता तो उसहिंसाका वेदसूत्रस्मृतिओंमें विधानही क्यों करा जाता, फिर उसमें रामलक्ष्मणादिअवतार और वेदवेत्ताऋत्विजआदि ब्राह्मण और धर्मात्मामहाराजे प्रवृत्तही कैसे होसक्तेथे क्या उनको तुमारेजैसा धर्माधर्मका ज्ञान नहीं था ॥

और प्रमाणांक ५६ और ६६ आदिकोंमे विहितहिंसाका श्रेष्ठफल दिखलायाहै अतः विहितहिंसाका त्याग कहना समीचीन नहीं ॥

—:०:—

पूर्वपक्षी०—हिंसाके बदलेपर सदनेका दृष्टान्त एकदिन रातके समय मांसके लिये राजाने सदने कसाईके पास अपने नौकरको भेजा, सदनेके घरमें एकजीताहुआ बकरा बंधाथा सदनेने मनमें सोचा कि—यदि इसी समय मैं बकरेको मारूंगा तब सबेरेतक बाकीका मांस बिगड जाएगा इस कारण इसवक्त बकरेके पतालू काटकर राजाको भेजदूं सवेरे इसकी गरदन

काटूंगा, यिह सोच जिससमय सदना छुरीलेकर बकरेके पतालूओंको काटने लगा तब बकरा हंसा, सदनेने पूछा तूं क्यों हंसताहै बकरेने कहा आगे केईबार तूने मेराशिरकाटा और मैंने तेराशिर काटा सिरके काटनेका तो तेरामेरा हिसाब बहुतदिनमें चलाआताहै पर आज तूं नयाहिसाब चलाताहै, मैं इसनएहिसाबको देखकरके हंसाहूं, रातभर मैं तड़फता रहूंगा सवेरे जब कि तूं शिर काटेगा तब मैं मरूंगा, यहीहाल दूसरे जन्ममें तेराभीहोगा, बकरेकी इसबातको सुनकर सदनेको वैराग्य पैदाहुआ और बकरेको उसने न मारा ॥

आस्तिक० - हेमित्र शास्त्रीविद्वानपुरुष वेदोंके शास्त्रोंके प्रामाणिक दृष्टान्तदेतेहैं कि ऐसी २ काल्पनिक अप्रामाणिक कहानीएं सुनाते हैं ॥

इसमेंभी विचारें कि-रातभर रहनेमें मांस नहीं बिगड़जाता किंतु पतालू कटनेसे दुःखीबकरेका मांस दोषकर होजाताहै ।

बहुतचिर नहींहुआ मुसलमानोंकेवक्त सदनाकसाई हुआहै तब क्या बकरे हंसते और मनुष्योंसे बातां करतेथे और बकरे मनुष्योंको उपदेश करतेथे, यिहबातें क्या मुसलमानोंके वक्तहोतीथीं, तब सदनाऽऽदिमनुष्योंको पहिलेजन्मोंका ज्ञान न हुआ तो बकरे को कैसे होसकताथा ॥

सदनाकसाई मुसलमानथा वो बकरेको हलालकरे बिना अपनीशराहसे विरुद्ध पतालूको पहिलेही कैसे कटसक्ताथा, भावयिह-ऐसेअयुक्त अप्रामाणिक दृष्टान्तसे तुम कुछसिद्ध नहीं करसक्तेहो ॥

देखो प्रमाणांक १३० और १४१ व १४६ आदिकोंमें दृष्टान्त दिखाचुकाहूं, युधिष्ठिर दशरथ रन्तिदेवआदिकोंके यज्ञनमें सैकड़ेपशुओंका बलिदानहुआ इस्से वह दशरथ युधिष्ठिरादिक स्वर्गमेंही पहुंचे ॥

पूर्वपक्षी० -शिक्षा जितने जीवोंको अपने जिह्वाके स्वादकेलिये जो मनुष्य मारतेहैं उनकोभी दूसरेजन्ममें फिरवह बकरेआदि मनुष्य बनकर मारतेहैं अर्थात् जो मनुष्य पशुओंको काट २ कर रुधिरकी नदी बहातेहैं वहभी उनसे कट २ कर सद्गतिको नहींपाते बल्कि नरकोंमें पड़तेहैं ॥

आस्तिक०—हेमित्र-प्रमाणांक २६ और ६६ आदिकोंमें तो विहित-पशुहिंसाकर दोनोंको उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही वर्णन करा० उन प्रबलप्रमाणोंसे विरुद्ध तुम कथन करतेहो इसीसे तुमको नरक स्मरणमें आताहै ॥

पूर्वपक्षी०—एकभीलराजाकी शबरीकन्याथी जब वह जवान हुई तो उसके विवाहकी तयारीमें भोजनालिये हजारों बकराऽऽदिक मगवाये गए भील मांस तो खातहीहैं इसमें तो संदेह नहीं इन बकराऽऽदिकोंकी हिंसा के विचारकर वो शबरी खेदको प्राप्तहोइ सो रातमेंही नगर छोड़कर बन में चलीगई और भगवान्के दर्शनकी इच्छा रखकर ऋषिसेवापूर्वक भजन करतीरही जिसका फल यहहुआ कि-योगीओंके हृदयमेंभी कठिन आने वाले परमात्माका अपने आश्रमपरही दर्शन पाकर कृतार्थहुई ।

शिक्षा—अहिंसाधर्मसे भीलजातिभी श्रेष्ठ होसक्तीहै अहिंसाधर्मके पालन सेंही हृदयमें भक्ति उत्पन्नहोकर ईश्वरका दर्शन होसक्ताहै ॥

आस्तिक०—विद्वान्पुरुष तो आपग्रन्थनका प्रमाण व दृष्टांत देकर अर्थ सिद्धकरतेहैं तुमतो किसीग्रन्थका नामभी न लिखकर अर्थ सिद्ध करा चाहतेहो, इच्छा अब विचारें कि—

भील मांस खातेहीहैं तो उस भिल्लराजाके गृहमें मांस तो पकायाही जाताथा वो शबरीभी मांसको खातीहुइ जवानहुइथी, क्योंकि भिल्लजाति स्त्रीभी पुरुषभी मांसखातेहैं तो फिर इतनी ग्लानी कैसेहोसक्तीहै ॥

हेमित्र—तुमारेसें तो शवरीकोभी धर्मज्ञान अधिकथा क्योंकि धर्म शास्त्रनमें विहितपशुहिंसा अहिंसारूपहीमानीहै ॥ सोविहितहिंसा व विहितमांसका खाना प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंका धर्महै, गृहस्थाश्रममें रहनेसें वो धर्म करणा ही होगा वो वानप्रस्थोंका धर्म नहीं, यिह धर्मशास्त्रोंका सिद्धार्थ जानतीथी अतः वो शवरी वानप्रस्थ होकर भजनकरनेलगी इस्सें श्रीरामजीका दर्शन पाकर स्वर्गमें प्राप्तहुई ॥

परंतु तब शवरीको यिह विचारनहींहुआ कि, रामजीके दर्शन तो क्या विहितमांसके खानेवाले गुह सुग्रीवविभीषण लक्ष्मणआदिक श्रीरामजीके परममित्रहुएहैं भ्राताहुएहैं देखो—

वा० रामायण दृष्टान्त प्र० २६२—**इत्युक्त्वोपायनंगृह्य मत्स्यमांसमधूनिच । अभिचक्रामभरतं निषादाधिपतिर्गुहः** ॥ का २ ॥ सर्ग ८४ ॥ १० ॥ २८५

अर्थ—मैं परीक्षालिये जाताहुं यदि रामजीके अनुकूल हुआतो भरत जी को गंगापार करदेंगे, यदि ऐसा न हुआ तो भरतसें युद्धकरेंगे भरतको गंगापार नहींजानेदेंगे,, ऐसे निषादोंको कहकर निषादोंका राजागुह मत्स्यमांसशहत, यिह भेटलेकर भरतजीके सम्मुख जाताभया ॥

—०—

तुलसीरामायण दृष्टान्त प्र० २६३—**लखवसनेहसुभाय सुभाये, वैरप्रीति नहि दुरतदुराये । असकहिभेंट सजोवनलागे, कन्दमूलफलखगमृगमांगे ॥**

मीनपीनपाठीनपुराने भरिभरिभारकहारनआने

का० २ ॥ १८६ ॥

—०—

बा० रामायणदृष्टान्त प्र० २६४—तेपिवन्तःसुगन्धीनि मधूनिमधुपिंगलाः । मांसानिचसुमृष्टानि मूलानिचफलानिच ॥ उत्तरकाण्डसर्ग ३६ ॥ २६ ॥

रामोपिरेमेतैःसार्धं वानरैःकामरूपिभिः ।
राक्षसैश्चमहावीर्य्यैर्ऋक्षैश्चैवमहाबलैः ॥ २८ ॥

अर्थ—अयोध्यामें वो सुग्रीवप्रभृति वानर और विभीषणादिक सुगन्ध वाले मधुओंको पीतेहुए मांसोंको और मीठे मूलोंकोफलोंको खातेरहे ॥ २६ ॥ रामचन्द्रभी उनकामरूपी वानरोंके महावीर्य्यवान्राक्षसोंके महाबली भालुओंकेसाथ अयोध्यामें रमण कर्ते रहे ॥ २८ ॥

हेमित्र—दशरथजीने पशुयज्ञकरा जिसमें रामजीकीमाताकौसल्या ने आप अश्वकोकाटा वो दिखाचुकाहूं प्रमाणांक १४१ में तदनन्तर देखो

बा० रामायणदृष्टान्त प्र० २६५—धूमगन्धंवपायास्तु, जिघ्रतिस्मनराधिपः । यथाकालं यथान्यायं निर्णुदन्पापमात्मनः ॥ १ ॥ १४ ॥ ३७ ॥

—०—

अर्थ, जिससमयमें जैसा शास्त्रका विधिहै वैसे उस अश्वकी चरबीके धूमगन्धको दशरथजी अपने पापनको दूरकर्तेहुए सूंघतेभए ॥ हेभ्रातः ऐसे यज्ञकरणेकर दशरथके घरमें रामलक्ष्मणाऽऽदिक चारपुत्ररत्न प्राप्त हुए ॥

वा०रामायणदृष्टांत प्र० २६६--तौतत्रहत्वाचतुरो महामृगान् वराहमृष्यंपृषतंमहारुरुम्। आदायमेध्यं त्वरितंबुभुक्षितौ वासायकाले ययतुर्वनस्पतिम् २॥५२॥१०२॥

अर्थ, गंगासें पारजाकर वहां क्षुधायुक्तहुए रामलक्ष्मण एकवराह और ऋष्य पृषत रुरु, इन तीनजातिके पवित्र हरिण ऐसेचार बड़े मृगोंको मारके लेकर्के शीघ्र सायंकालमें निवासलिये वृक्षको जातेभए ॥

पूर्वपक्षी० वा रामायणदृष्टान्त प्र० २६७--

चतुर्दशाहिवर्षाणि वत्स्यामिविजनेवने। कन्दमूलफलैर्जीवन् हित्वामुनिवदामिषम् ॥२॥२०॥२६॥

अर्थ रामजीने कहा कि कंदमूल फलोंमें जीविता हुआ मुनि की न्याई मांसको त्यागकर्के मैं चौदांवर्ष निर्जन वन में निवासकरूंगा। देखिये चौदांवर्षलिये वनवास समय रामजीने मांसके त्यागकी प्रतिज्ञा की है ॥

आस्तिक, हे मित्र जिस वस्तु का ग्रहणही नहींकर्ते तो उसके त्याग की प्रतिज्ञा संभवे नहीं किंतु जिसका पहिले ग्रहण कर्ते होवें उसकेही त्यागकी प्रतिज्ञा संभवेहै अतः इस तुमारेलिखे श्लोकसेंही निश्चयहोताहै कि श्रीरामजी पहिले मांसको खातेहीथे फिर वनको जानेलगे मांसके त्यागकी प्रतिज्ञा

कीहै परंतु वो प्रतिज्ञाभी पाचकपुरुषोंद्वारा घृतमिरच मसालादिकोंसे विशेष संस्कारकर संस्कृतमांसके त्यागकी प्रतिज्ञा कीहै ॥

हेपाठको। आगिसें केवलभूनेमांसके त्यागकी प्रतिज्ञा नहींकी देखो इस श्लोक की ॥

रामायणतिलक टीका प्र० २६८—मुनिवदामिषंसूदै विशिष्टसंस्कारसंस्कृतम् तेनेदंमेध्यमिदं स्वादुनिष्टप्तमिदमग्निनेति वक्ष्यमाणेन नविरोधः तस्यशुद्धमांसपरत्वात् मुनिवदित्युक्त्याश्राद्धीयादिमांसपरत्वाच्च ॥

अर्थयिहहैकि आगे इस दूसरे कांडमें सर्ग ९६ के पहिले और दूसरे श्लोकमें कहेंगे कि तब चित्रकूटमें श्रीरामजी जानकीको मंदाकिनीनदी दिखलायके स्थित हुए सीताजीको मांस विशेषसें खुशकर्तेहुएकहा कि यह मांस पवित्रहै यिह स्वादु है यिह मांस अग्नि से भूना गर्महै, इत्यादिक बहुत श्लोकोंमें मांसखानेका प्रसंग आवेगा अतः उनश्लोकोंसें विरोध होगा यदि यहां मांसमात्रका त्याग करामानोंगे तो इससे जैसे वनवासी मुनिजन घृतमसालाऽऽदिकोंसें बिना केवल भूना हुआ मांस खातेहैं वैसेही पाचकसें विशेषसंस्कारकर संस्कृत मांसका रामजीने वनवाससमय त्याग करा जानना ॥

फिर देखो प्रमाणांक १३में भी वा० रामायण का दृष्टान्त

और वा० रामायण प्रमाणांक १० में भी स्पष्ट दृष्टान्त को देखो, गंगा यमुनासरस्वतीके प्रवाह जहां चलरहे हैं ऐसी प्रयागराज त्रिवेणीके तटपर अपने आश्रममें महामुनि भरद्वाजजीनें भरतके आतिथ्यमें नाना प्रकारके पवित्रमांस बनवाए खुलाएथे—

अब मांसके प्रसंगचलानेसेंभी मेरेभ्राता क्षोभकर्तेहैं ॥ इसमें कारण जैनमतके बहुतकालसें संस्कारहीहैं ॥

—:o:—

वा० रामायणदृष्टान्त प्र० २६९— भ्रातरंसंस्कृतंकृत्वा, ततस्तंमेषरूपिणम् ॥ तान्द्विजान्भोजयामास, श्राद्धदृष्टेनकर्मणा ॥३॥११॥५७॥ अर्थ - मेढारूपधारे वातापी भ्राताको मारके पकाकर इल्वल उनब्राह्मणोंको श्राद्धकर्ममें खुलाता रहा ॥

—o—

वा०रामायणदृष्टान्त प्र० २७०— रामोपिसहसौमित्रि, र्वनंगत्वासवीर्य्यवान् ॥ स्थूलान्हत्वामहारोही ननुतस्तारतंद्विजम् ॥३॥६८॥३२॥

अर्थ—वो पराक्रमी श्रीरामजी लक्ष्मणके साथ वनमें जाकर स्थूल रोहीमृगोंको मारके जटायुकेलिये पिंडदेनेवास्ते हरिघासको फैलातेभए ॥

—:o:—

वा० रामायणदृष्टान्त प्र० २७१—रोहिमांसानिचोद्धृत्य. पेशीकृत्वामहायशाः ॥ शकुनायददौरामो रम्य-हरितशाद्वलं ॥३३॥

अर्थ—रमणीयहरिघासवाले स्थलमें महायशस्वीश्रीरामजी रोहीमृगों के मांसोंको निकासकर पिंडबनाकर जटायुपक्षीप्रति देतेभए ॥

—o—

वा० रामायणदृष्टान्तप्र० २७२— आगमिष्यतिमेभर्ता, वन्यमादायपुष्कलम् ॥ रुरूनगोधान्वराहांश्च, हत्वाऽऽदायामिषंबहु ॥३॥४७॥२३॥

अर्थ—सीताके हरणेलिये संन्यासीरूप धारकर आये रावणको सीता जीनें कहाकि मेराभर्त्ता रुरुहरिणोंको गोहोंको सूरोंको मारकर बनके मृगों का बहुतमांसलेकर आवेंगे ॥

--०--

वा० रामायण दृष्टान्त प्र० २७३—निहत्यपृषतंचान्यं, मांसमादायराघवः । त्वरमाणोजनस्थानं, ससाराभिमुखंतदा ॥ ३ ॥ ४६ ॥ २७ ॥

अर्थ - मरीचकोमारकर उसमें अन्य पृषतहरिणको मारकर उसके मांसको लेकर श्रीरामजी वेगसें तब अपनेआश्रमको जातेभए ॥

——:*:——

वा० रामायणदृष्टान्त प्र० २७४—मांसानिचसुमृष्टानि, फलानिविविधानिच । रामस्याभ्यवहारार्थं, किंकरास्तूर्णमाहरन् ॥ उत्तरकाण्ड ६ ॥ ४२ ॥ १६ ॥ १०'' \

अर्थ, राजतिलक होनेसे पीछे सीता सहितरामजी बहुतकाल अशोक वनिकामें रहेहैं वहांका प्रसंग है कि रामजीके भोजनालिये सेवकजन मांसों को और बहुततरोंके मीठेफलोंको ल्याते रहे ॥

और जो आपने अहिंसाके श्रेष्ठफल लिये शिक्षाकी सो ठीकहै परंतु देखो प्रमाणांक ४६ आदिकोंमें विहित हिंसा अहिंसारूपही मानीहै ॥

—:०:—

पूर्वपक्षी० अहिंसा धर्मही सबसें श्रेष्ठहै इसपर व्यतिरेकद्वारा एकमुनि का दृष्टांत निम्नकथा महाभारतमें इसतरहहै कि पूर्वसमयमें एकमुनि तप करताथा उसके तपसें भयपाकर सबदेवताओंने इन्द्रसें प्रार्थनाकी कि कोई ऐसाकामहो जिससें यह तपसें गिरजाए, इन्द्र इनकी प्रार्थनाके वश होकर एकनंगीतलवार रखकर आप स्वर्गमें चलाआया, उसबाद कभी कुशा और काष्ठ के वास्ते बनमें फिरतेहुए मुनिने उसतलवारको देखा और सोचा कि—इससें लकड़ीआदि अच्छीतरह कटसकेगी इसलिये यह लेलेनी चाहिये, तब उसको लेकर वार २ आनन्दसें घुमाने लगा उससें लता एवं वृक्षोंको काटताहुआ वह अपनीउत्तम तपस्यासें भ्रष्टहुआ ॥

शिक्षा— जब कि–लता वृक्षआदिकी हिंसाभी पापको पैदाकरके धर्म सें पतितकरदेतीहै तो फिर पशुआदिकी हिंसाका फल पापोत्पत्तिद्वारादुःख रूप क्यों नहींहोगा ॥

आस्तिक०—यदि ऐसीकथा महाभारतमेंहै तो उसके जिसपर्वमें जिस अध्यायमेंहै उसपर्वका अध्याय का अंक तुम क्यों नहीं लिखसके, अतः जानाजाताहै कि—आप महाभारततक नहींपहुंचे सुनीसुनाई कहानीए लिखतेहो ।

यदि लतावृक्षादिकोंकीहिंसा पतित करदेतीहै तो वोमुनि पहिलेनित्य ही कुशालकड़ी फलशाकआदिकोंके कटनेकर पतित क्यों न हुआ ॥

पूर्वपक्षी०—मांसभक्षणपर चौवेजीका दृष्टान्त–एक चौवेजी—अच्छे धनवान् मुसलमानके मिलनेके लिये गए आपने चौवेजीसें प्रश्नाकियाकि– चौवेजी आप देवता क्यों और मुझे म्लेछ क्यों कहतेहो–

यहसुनकर चौबेजी बोले कि—जनाब तुम मट्टीखातेहो इसलिये म्लेच्छ कहलातेहो, तबतो मुसलमानने पूछा कि जनाव मट्टी किसको कहतेहो, चौबेजीने कहाकि जनाब मट्टी गोश्तको कहतेहैं, इसपर मुसलमान साहबनेउलटकर जवाब दिया कि, चौबेजी इसकोतो तुमभी खातेहो क्योंकि, शाकभाजीअन्नवगैरहमें तुमभी जीव मानतेहो इसपर चौबेजीने कहा कि, हमतो जो अन्नादिखातेहैं वहशुद्धजलसे पैदा होताहै, और तुम जो मांस खातेहो, वह मूतसें पैदा होताहै, वस हमारा आपसे इतनाही भेदहै जितना मूत और जलमें, इसलिये हम देवता आप म्लेच्छहैं ॥

आस्तिक०—इसपर फिर जो मुसलमानने कहाथा उसको तुम क्यों छिपातेहो उसको तुम क्यों नहीं कहतेहो—

पूर्वपक्षी०—फिर मुसलमानने क्या कहाथा,

आस्तिक०—फिर मुसलमानने कहाकि, ऐभाईओ तुमभी तो माता पिताके मूतसें पैदा होएहुएहो तो तुमारीजबानसें ही तुमार में और मूत में कुछफरक साबत न हुआ ॥

होरजो तुमने कहाकि, शुद्धजलसें अन्नशाकादिक पैदाहोतेहैं, यिहभी तुम बेसमझी सें कहतेहो क्योंकि, जलसें ही नहीं किंतु बीजसें भी अन्नादिक वहां पैदा होतेहैं जिसजमीनमें घोडाकुत्तागधा भेड मनुष्यादिकों का 'मैला, खात पड़ा होताहै, और शहरके बदररोंका मैलापानी पड़ताहै ऐदोस्तो होशकरो देखो—बड़ेबड़े नगरोंमें जो म्युन्सिपल कमेटीसें हजारों रुपैओंका मैलाफरोखत कराजाताहै वो मैला किसकाममें लगाया जाताहै ॥

———

पूर्वपक्षी०—शिक्षा मांसका खाना मलमूत्रखानेके वराबरहै इसलिये आपको इसका त्यागकर उत्तमफल दुग्धादिकाही आहार करनाचाहिये ॥

आस्तिक०—अज्ञानका महिमा अतिप्रबलहै कि जिससें तुम सारखे पढ़ेलिखे मनुष्यनकोभी विहविचार उदय नहींहुआ कि—ऐसेकथनकी अति

व्याप्ति कहांतक पहुंचगी अर्थात् यह पहिले तुमारे परमपूज्य पुरुषभी मांसको खाते ग्भुलातहीरहेहैं अतः ऐसे अनुचितकथनसें तुमारेमें नास्तिकता क्यों नहींहै ॥

———

पूर्वपर्चा० मांसही मारेदोषोंका कारणहै—दृष्टान्त एकबाबूसाहब शहर मे एकमीलपर दूररहतेथे उनोंने नौकरको कहा कि—आज मांस लाओ नही पकेगा नौकर बोला बहुतअच्छा—नौकर शहरमें पहुंचकर कमाईकी दुकानसें मांसखरीदा और जब चलनेलगा तब उसे मालिकका हुकम याद आया कि एककामके साथ औरभी अपनीबुद्धिसें कोईकाम सोचकर करते— आयाकरो आज मांसलियाहै पर विनाशराबके बाबूजीको उसका आनन्द कुछभी नहीं आएगा क्योंकि उसका छोटाभाई शराबभीहै, यदि मैं बिना इसकेलिये जाऊंगा तो फिरमुझे वापस आना पडेगा, यह सोच एकबोतल शराबकीभी खरीदली, फिर सोचा कि—शराब पीकर जब बाबूजीकी अकल को ताला लगजाएगा तो फिर बिना वेश्याके बुलाए भला कब रह सकेंगे तो फिरभी मुझेही आनाहोगा, यहसोच वेश्याभी साथलेली थोडीदूर चलकर सोचनेलगा कि यह बाजारकीस्त्रियें अनेकरोगोंसे मिलीहुईहोतीहैं तो इसकेसंगसें बाबूजी जरूरही बीमारहोजाएंगे तो फिर डाक्टरकी जरूरत होगी इसलिए डाक्टरको भी साथलेचलें तो अच्छाहै, ऐसासोचकर उसेभी साथकरलिया फिर थोडीदूर आगेचलकर उसनें सोचाकि—वेश्याके संगसें पैदाहोनेवाले दुष्टरोगगर्मीसें बचनातो बाबूजीका सर्वथाअसंभव होगा इसलिएबाबूजीके वास्ते तखता लकड़ी आचार्य्यआदि सभी सामग्री भी लेचलताहूं, फिर वार २ शहरमें कौनआवे, यह सोचकर सब समान साथलेकर बाबूजीके सामने हुआ आजतो बहुतदेरके होजानेसें औरभी बाबूजीका मुख मारेक्रोधके लालसा होरहाथा देखतेही उसपर टूट और

झाडनेलगे और यहविचारा कांपताहुआ हाथ बन्धकर बोला कि—हजूर आपकेही हुकमके पालनकरनेमें देरहुईहै, यह कहकर मांसके साथ शराब वेश्यावगैरः बाबूजीके सामनेकिया और साराहाल उसके लानेका सुनादिया तब बाबूसाहबकी होश खुली और फिर मांसखानेसे कसमकरी ॥

शिक्षा—एकमांसके खानेसे औरअनेक बुराइये साथ पैदाहोतीहैं यहांतककि—हमारे प्राणोंकाभी नाशहोकर हमें नरकप्राप्तहोताहै ॥

आस्तिक०—वाह लालबुझक्कड़जी क्या यिह दृष्टान्तहै, दृष्टान्त नहीं यिहतो किसीबाशेमनुष्यका बनायाहुआ मखौलहै ॥ शोकहै कि—तुम पाण्डित्यकी ध्वजातो बड़ीऊंची दिखलातेहो और बीचसार इतनाभी नहीं कि—शास्त्रीयप्रामाणिकदृष्टान्त एकभी अनुकूल लिखसके क्या लिखे पढेमनुष्य ऐसे असद्दृष्टान्त बनाकर लिखतेहैं, नहीं मशकरेमनुष्य ऐसे मखौल बनाकर सुनातेहैं, ऐसे २ व्याख्यानोंको सुनकर अशास्त्रीयमनुष्य खुशहोतेहैं, अफसोसहै उनकी बुद्धिसे ॥

हेपाठको—लालबुझक्कड़जीसे पूछनाचाहियेकि मांसखानेआदिसे तुरतही प्राणों का नाश होहीनहींसक्ता तो मिथ्याभाषणजन्यपापके भयसे लालबुझक्कडजीने अपनेलिये यिह डाकटर तखता लकडीआदिक सभीसामग्री मगवाई होगी ॥

हेमित्र—पहिलेसमयोंके सत्पुरुष और इसकालकेभी कश्मीर नयपाल मैथिलादिदेशोंके ब्राह्मणक्षत्रियादि श्रेष्ठपुरुष मांसको खाते खुलातेहीरहेहैं अतः विहितमांसखानेसे बुराइयें नहींहोसक्तीं किंतु शास्त्रसे विरुद्धआचारकरनेकर बुराइयेंहोतीहैं और धर्माधर्मके निर्णयमें शास्त्रसे विरुद्ध असत्यभाषणही नरकका द्वारहै ॥

पूर्वपक्षी—भर्तृहरिजीने कहाहै—**भिक्षोमांसनिषेवणंप्रकुरुषे, किंतेनमद्यंविना, मद्यंचापितवप्रियंप्रियमहो, वाराङ्गनाभिःसह ॥ तासामर्थरुचिःकुतस्तवधनं, द्यूतेनचौर्य्येणवा, द्यूतचौर्य्यपरिग्रहोऽपिभवतो, भ्रष्टस्यकाऽन्यागतिः ॥**

हेभिक्षु -तुम क्या मांस खायाकरतेहो उ० हां शराबके साथ खाताहुं। प्र० शराबभी पीतेहो उ० हां वेश्याओंके साथ पियाकरताहूं प्र० वेश्या तो धन चाहतीहैं तुम्हारे पास धन कहांसेआताहै उ० जूये या चोरीसें ॥ यदि यह भी तुम करतेहो तोफिर ऐसेभ्रष्टपुरुषकी औरनीचदशा क्या होसक्तीहै ॥

आस्तिक०-भर्तृहरिके तीनोंशतकोंमें यिहश्लोक नहींहै अतः तुम मिथ्यालेखके पापसें भय नहीं करतेहो, यिह श्लोक निवृत्तिमार्ग वाले संन्यासी विषयकहै क्योंकि-संन्यासी का नाम भिक्षुहै भिक्षुलिये मांस खानेकाविधान नहीं है फिर साथ वेश्या जूआ चोरीमें भिक्षुकी भ्रष्टता कहीहै तो वो ठीककहीहै, क्योंकि— मांससेंविना वेश्याजूआचोरी, आदि-कोंसेंतो गृहस्थभी भ्रष्ट होजाताहै तो संन्यासीका क्या कहनाहै ॥

पूर्वपक्षी०—मांसदोषपर पठानका दृष्टान्त—एक पठान ने एक मनुष्यका गलाकाटदिया जबकि—राजकर्मचारीसें पकड़ाहुआ हाकिमके सामने आयातो हाकिमनें उसे पूछाकि—तूने इसका गला क्यों काटा वह बोला मैं देखताथाकि, यह तलवार कैसी चलतीहै, इसको सुनकर सब आश्चर्य्यहुए —शिक्षा —मांसहारीजीवोंमें दयाका नामतक नहीं रहता, वह

बिनाही किसी अपराधके दूसरेके प्राणोंतकका नाश करदेतेहैं, इसलिये ऐसे दुष्ट पदार्थ में घृणाही करनी चाहिये ॥

आस्तिक०—हेमित्र-सद्विद्याके अभावमें सत्संगके अभावसें धर्म अधर्मके अज्ञानका यिह दोषहै मांसाहारका दोष नहींहै, क्योंकि देखो—

यूरपीन मांसाहारीओंने कैसे २ शफाखाने दयासें बनाएहैं—उन में लाखों रुपयोंके औषध दयासें दियेजातेहैं, अपने हाथोंसें आंखोंका अपरेशन करके मानो नवीननेत्रबनाकर मानो गएहुए जहानको फिर दिखलाय देतेहैं ।

जो पागल अपने पराएबहुतोंको दुःखदेतेहैं उनसबके कष्ट दूरकरनेलिये मांसाहारीयूरपीनोंने दयाकर कैसे २ पागलखानेके इन्तजाम करेहुएहैं ॥

बहुतलोक जानतेहीहैं—भारतखंडमें उत्तमकुलकेभी पुरुष कन्याओंको मारडालतेथे और काशीमें मनुष्योंको कलवत्तसें काटडालतेथे, फिर प्रसिद्धहीहै कि मांसाहारी यूरपीनोंनेही दयाकर्के लडकीओंका मारणाऽऽदि हुकमसें रोकदिया, महाहत्याके महापापोंसे बचा लिया, इस्सें" मांसाहारीओंमें दयानहीं रहती,, यिहकथन असत्यहीहै ॥

भारतखंडकेभी मांसाहारी अनेकमहाराजोंने रामेश्वर गोदावरी काशी बृन्दावन आदिकोंमें लाखोंरुपएओंके खर्चवाले अन्नक्षेत्र शफाखाने पाठशालाऽऽदिक दयाकर प्रचलित करेहुएहैं अतः" मांसाहारीओंमें दयाका नामतक नहींरहता,, यिहकथन बालपनमेंहै ॥

हेमित्र-सद्विद्याके नहींपढनेकर धर्माधर्मके अज्ञानमें निर्दयताहोतीहै ॥

होरजो तुमने कहाकि"—"ऐसे दुष्टपदार्थसें घृणाही करनीचाहिये,,

सोयिह कथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि देखो प्रमाणांक १ आदिकोंमें जब मांसको शुद्धपवित्र कहाहै फिर विहितमांसखानेमें परमपूज्यपुरुष प्रवृत्तहुएहैं तोउसको दुष्टपदार्थ कहना क्या नास्तिकता से विनाहोसक्ताहै ॥

पूर्वपक्षी०—गौओंकी महिमापर याज्ञवल्क्यजीका और महर्षिच्यवनका दृष्टान्त—राजाजनककी सभामें जिनके सींगोंमें स्वर्ण लगायाहुआथा ऐसीगौआं याज्ञवल्क्यजीने लेलईं ॥ महर्षिच्यवनजीने अपनामोल एकगौ मन्जूर करा ॥

शिक्षा—पूर्वसमयमें सबसे उत्तमपदार्थ गौएंही समझीजातीथीं महर्षिलोग सिवागौके अपनेबराबर राज्यादिककोभी नहींसमझतेथे इस्तें सबकोही गौओंकी सेवा करणीचाहिये ॥

आस्तिक०—अबतो सींगोंमे स्वर्णके विनाभी गौएं लेनेको तियारहैं, गौओंको घरघरमें रखनाचाहिये सेवा करनीचाहिये ॥

पूर्वपक्षी ०—नचिकेताके दृष्टान्तमें प्रसिद्धहै शिक्षा गौका दान बहुत-उत्तमहै परंतु वह गौ बूढी बिना दूधआदिके दीहुई उत्तमफलके बजाय दाताको नरकगामी बनादेती है ॥

आस्तिक०— हेमित्र इसतुमारे कथनसें जानाजाताहै कि—इतनालंबा गौओंकी सेवाका उपदेश तो तुम औरनोंके लिये करतेहो परंतु आप गौओं-की सेवा नहीं दुग्धकी सेवाकरनीचाहतेहो ॥

पूर्वपक्षी०—गौकी सेवाके फलपर राजादिलीपका दृष्टान्तहै, शरणमें आएकी रक्षामें राजाशिविका दृष्टान्तहै और भजनोंमेंभी कहाहै कि—गोरक्षाका ध्यानकरो

आस्तिक०—ठीकहै परंतु अजशशहरिणादिक के बलिप्रदानके व मांसभक्षणके प्रकरणमें यिहसबदृष्टान्त अनुपयोगीहींहैं, बहुत क्या हेमित्र पशुबलिदानके और विहितमांसखानेके त्यागमें प्रामाणिक, श्रुतिस्मृति-ओंसेंसिद्धदृष्टान्त एकभी तुम नहींदिखलायसके और जो दृष्टान्त दिखलाये-हैं वो प्रसंगमें अनुपयोगीहैं अप्रामाणिकहैं ॥

पूर्वपक्षी०—यदि ऐसादृष्टान्त एकभी मैं नहींदिखलाय सका तो तुमनेभी प्रतिज्ञाकरीथी कि-ऐसेयोग्यदृष्टान्त बहुतहीहैं वो अब आपही दिखलाइये ॥

आस्तिक०—अजशशप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानमें व विहितमांसभक्षणमें शिष्टाचाररूप प्रामाणिकदृष्टान्तोंको दिखलायभी आयाहुं औरभी अब दिखलाताहूं

कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता दृष्टान्त प्र० २७५—प्रजापति र्वा इदमेकआसीत् सोऽकामयत प्रजाःपशून्त्सृजे-येति सआत्मनो वपा मुदक्खिद त्तामग्नौ प्रागृ-ह्णात् ततोऽजस्तूपरः समभवत्त स्वायै देवता-या आलभत ततोवैस प्रजाः पशूनसृजत ॥

काण्ड २ ॥ प्रपाठक १॥ अनुवाक १॥४॥

इसमन्त्रपर सायणभाष्य दृष्टान्त प्र० २७६—यदिदंप्रजापशु-रूपं जगदिदानींदृश्यते तदिदंसृष्टेःपूर्वं प्रजा-पतिरेक आसीत् प्रजापति रेव स्थितो नान्य-

त्किञ्चिदित्यर्थः ॥ सचप्रजापशुसृष्टिकाम स्त-त्साधानत्वेन स्वशरीरादुदर मध्यवर्त्तिनीं पटस-दृशीं वपामुदक्खिद दुत्खिद्योद्धृतवान् ताञ्चवपा मग्नौ प्रक्षिप्तवान् ततोदग्धाया वपाया अजस्तूपरः शृङ्गरहितः समुत्पन्नः तञ्चाजं स्वा-त्मरूपां देवतामुद्दिश्यालभत तत्कर्मसामर्थ्यात प्रजापशूनसृजत ॥

अर्थ—जो यिह प्रजापशुरूपजगत् अब दिखरहाहै वो यिह सृष्टिसें पहिले एक प्रजापतिथा अर्थात् तब प्रजापतिही स्थितथा औरकुछनहींथा वो प्रजापशुरचनेकी कामनावाला प्रजापति अपने उदरसें पटसदृश वपाको निकासता भया उस वपाको अग्निमें डालता भया, दग्धहुई उसवपासें श्रृंगरहितअजउत्पन्न हुआ उस अजको स्वात्मरूप देवताकेउद्देशकर प्रजा पतिनें हनन किया उस कर्मके सामर्थ्यसें प्रजापतिब्रह्माजी प्रजापशुओंको रचता भया ॥



कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता दृष्टान्त प्र० २७७—देवासुरा एषु लोकेष्वस्पर्धन्त सएतंविष्णुर्वामनमपश्यत् तं स्वायैदेवताया आलभत ततोवैसइमान् लोका नभ्यजयत् ॥ का० २ ॥ प्र० अनु० ॥३ ॥ ११ ॥

इसमन्त्रपर सायणभाष्यदृष्टान्त प्र० २७८—वामनंह्रस्वंपशुं स्वार्येविष्णुरूपायै देवतायै ॥

अर्थ—इन स्वर्गादिलोकोंके निमित्त देवता और असुर स्पर्धा कर्तेभए विष्णुने इसछोटेपशुको देखा, वो विष्णुजी इस छोटेपशुको स्वात्मरूप विष्णुदेवतालिये हनन कर्ताभया उस कर्ममें वो विष्णुजी इन लोकोंको जीततेभए ॥

—०—

ऋग्वेदसंहिता दृष्टान्त प्र० २७६—पीवानंमेषमपचन्त वीराः ॥ अष्टक ७ ॥ मण्ड० १० ॥ अनु० २ ॥ सू० २७ ॥ १७ ॥

इसमंत्रपर सायणभाष्य दृष्टान्त प्र० २८०—वीराःप्रजापतेः पुत्रा अङ्गिरसः पीवानं स्थूलं मेदोमांसादियुक्त मित्यर्थः । मेषमजमपचन्त प्रजापतिरूपस्येन्द्र स्यार्थाय पक्ववन्तोऽभवन् पशुयागं कुर्वन्तइत्यर्थः

अर्थ–प्रजापतिके पुत्र आङ्गिरस मेदःमांसादियुक्त स्थूलअजको प्रजा पतिरूप इन्द्रकेलिये पकातेभए अर्थात् पशुयज्ञको करतेभए ॥

—०—

और प्रमाणांक १०४ आदिकोंमें अगस्त्यमुनिजीकाभीदृष्टान्त दिखा चुकाहूं फिर वहां देखलीजिये ॥

मनुस्मृति–असंख्यदृष्टान्त प्र० २८१—बभूवुर्हिपुरोडाशा भक्ष्याणांमृगपक्षिणाम् । पुराणेष्वृषियज्ञेषु ब्रह्म

त्त्रसवेषुच अ० ५ ॥ २३ ॥

इसपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० २८२—पुराणेषुऋतिपूर्व कालेषुमृगपक्षिमांसेन पुरोडाशा बभूवुः ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका द० प्र० २८३—यस्मात्पुरातने ष्वपि ऋषिकर्तृकयज्ञेषु भक्ष्याणांमृगपक्षिणां मांसेन पुरोडाशा अभवंस्तस्माद्यज्ञार्थमधुनात-नैरपि मृगपक्षिणोवध्याः ॥

इसपर रामचन्द्रकी टीका द० प्र० २८४—भक्ष्याणां मृगप क्षिणामगस्त्येन प्रोक्षितानां मांसैःपुरोडाशाः

अर्थ-जिस्सें ऋषिओंके पुरातन यज्ञोंमें और मिलेहुए ब्राह्मणक्षत्रियों के यज्ञोंमेंभी भक्ष्यमृगपक्षिओंके मांसके पुरोडाश होतेरहेहैं इस्सें अबके ब्राह्मणादिकोंनेभी यज्ञलिये विहितमृगपक्षी मारणे चाहिये ॥

यज्ञमें देवताऽऽदिकोंको जो पहिले भाग दिये जातेहैं उनका नाम पुरोडाशहै ॥

हेपाठको—पहिलेसमयोंमें देवतोंके ब्राह्मणोंके क्षत्रियोंके असंख्ययज्ञ हुएहैं उनमें मृगपक्षीओंके मांसके पुरोडाश होतेरहेहैं अतः वो असंख्य दृष्टान्तहैं ॥

वासिष्ट दृष्टान्त प्र० २८५—इत्युक्त्वाऽस्मान्पितातत्र, चुचुम्बाभ्यालिलिङ्गच । ददौदेव्यायदानीत, मस्मभ्यंचतदामिषम् ॥ नि. पू० अ० ६ ॥ सर्ग २० ॥ ४२ ॥

अर्थ—जीवन्मुक्त चिरंजीवी भुशुंडजीने कहा कि-वहां हमको पिता ऐसेकहकर चुंबिताभया, आलिंगन कर्ताभया और देवीसें जो मांस ल्याया था वो मांस हमको देताभया ॥

ऽ—:०:—ऽ

विष्णुनारायणके परमप्रियसदस्य कश्यपमहर्षिके पुत्र गरुडभगवान्का दृष्टान्त महाभारत प्र० २८६

मात्राचात्रसमादिष्टो, निषादान्भक्षयेतिह ।
नचमेतृप्तिरभवद्, भक्षयित्वासहस्रशः ॥१॥२९॥११

अर्थ—गरुडजी पितामहर्षिकश्यपके पास पहुंचे तब कश्यपजीने पूछा कि—हेपुत्र तुमको भोजन तो बहुत मिलता है तब गरुडजीने कहा कि निषादोंको खाले,, ऐसे माताने आज्ञाकीथी फिर बहुत निषादोंकोखाकरभी मुझे तृप्ति नहींहुई ॥

—०—

महाभारतदृष्टान्त प्र० २८७—ततस्तस्यागिरेःशृङ्ग,मास्थायसखगोत्तमः । भक्षयामासगरुड, स्तावुभौगजकच्छपौ ॥१॥३०॥३०॥

अर्थ—तदनन्तर उसपर्वतके शृंगमें स्थित होकर खगाधिराज गरुड जी उसहस्तीको और कच्छपको खातेभए ॥

—•—

देखो प्रमाणांक १११ आदिकोंको जैसे चित्रकूटपर कुटिकी प्रतिष्ठा श्रीरामजीने कृष्णमृगके मांससें की थी वैसेही इन्द्रप्रस्थमें सभास्थानकी प्रतिष्ठाभी महाराजायुधिष्ठिरने मांसादिकोंसें कीथी—

महाभारतदृष्टान्त प्र० २८८—ततः प्रवेशनंतस्यां चक्रे-राजायुधिष्ठिरः ॥ अयुतंभोजयित्वातु, ब्राह्मणानां-नराधिपः पर्व२॥ अ०४॥१॥ साज्येनपायसेनैव, मधुनामिश्रितेनच ॥ भक्ष्यैर्मूलैःफलैश्चैव, मांसैर्वाराहहारिणैः ॥१॥ मांसप्रकारैर्विविधैः खाद्यैश्चापितथान्नृप ॥२॥

अर्थ—जब मयदानवनें सभास्थान बनाकर तियार करदिया तदनन्तर घृत मधुसहित क्षीरसें भक्ष्यमूलफलोंसें और वराह हरिणादिकोंके मांसोंसें और नानाप्रकारके मांसोंसें तथा खाद्य चोष्य पेय वस्तुओंसें दशहजार ब्राह्मणोंको भोजनखुलायकर उस सभास्थानमें महाराजा युधिष्ठिरजी प्रवेशकरतेभये ॥

——:०:——

महाभारतदृष्टान्त प्र० २८९—गृह्णीष्वपिठरंताम्रं मया-दत्तंनराधिप ॥ यावद्वत्स्यतिपांचाली पात्रेणानेनसुव्रत ॥प० ३॥३॥७२॥ फलमूलामिषं शाकं, संस्कृतंयन्महानसे ॥ चतुर्विधंतदन्नाद्य मक्षय्यं-तेभविष्यति ॥७३॥

अर्थ—प्रसन्नहुए सूर्य्यभगवान् वरदेते हैं कि-हेसुव्रत राजन् युधिष्ठिर मेरेदिये तांबेके देचकेको ग्रहणकर पाकस्थानमें जोकुछ फल फूल मांस

शाक पकाया जावेगा इसपत्रसे जबतक द्रौपदी वर्तेगी तबतक वो चारप्रकार का अन्न अक्षय होगा ॥

महाभारत दृष्टान्त प्र० २६०-**ब्राह्मणांस्तर्पमाणेषु, येचान्नार्थमुपागताः। आरण्यानांमृगाणांच मांसैर्नानाविधैरपि** ॥ ३ ॥ २६२ ॥ २ ॥

अर्थ—जनमेजय पूछताहै कि—धनेक मृगोंके नानाविध मांसोंसे ब्राह्मणोंको तथा हौर जो अन्नकेलिये आये उनको भी तृप्तकर्तेहुए पांडवोंमें दुर्योधनादिक कैसा वर्ताव कर्तेभए ॥

महाभारत दृष्टान्त प्र०२६१--**चरन्तोमृगयांनित्यं शुद्धैर्बाणैर्मृगार्थिनः॥ पितृदैवतविप्रेभ्यो निर्वपन्तोयथाविधि** ॥ ३ ॥ ३६ ॥ ४५ ॥

अर्थ--वो मृगाभिलाषी पांडव विषरहितबाणोंसे नित्यशिकार खेलते पितरदेवता ब्राह्मणोंको यथा शास्त्रविधिमें अर्पणकर्तेहुए वनमें वस्तेरहे ॥

अब राजानल दमयंतीके दृष्टान्त देखिये-

जब आपत्कालमें राजानल अयोध्यामें राजाऋतुपर्णके सारथिहुए तब उसका नाम बाहुक हुआ, वो ऋतुपर्णराजा बाहुकसारथि केसाथ विदर्भदेश ' कुंडिननगरमें ' नागपुरमें आए तब वहां दमयन्तीके पिता राजाभीमने ऋतुपर्णको सत्कारसे निवासस्थान दिया तब--

महाभारतदृष्टान्त प्र०२६२—**ऋतुपर्णस्यचार्थाय, भोजनीयमनेकशः। प्रेषितंतत्रराज्ञातु, मांसंबहुचपाशवम्** ॥ ३ ॥ ७५ ॥ ११ ॥

अर्थ-वहां ऋतुपर्णकेलिये खानेयोग्य अनेकवस्तु राजाभीमने भेजे और बकराऽऽदिपशुका बहुतमांसभी भेजा-



तब यिहजो बाहुकहै वो राजानलहै वा कोई होर है, एसी परीक्षालिये दमयन्तीने केशिनीदासीको कहा महाभारत दृष्टान्त प्र० २६३—पुन र्गच्छप्रमत्तस्य, बाहुकस्योपसंस्कृतम् । महान साच्छृतंमांस, मानयस्वेहभाविनि ॥ ३ ॥ ७५ ॥२० ॥

अर्थ-फिर तूं जा हे केशिनि, प्रमादीबाहुकका पकायाहुआ महानससें मांसको यहां लेआ । भाव यिह, जैसेअश्वविद्यामें राजानल अतिकुशलथे वैसेमांसपकानेमेंभी अति चतुरथे इस्सें राजानलके पकाएमांसका स्वाददेख कर मैं निश्चयकरलवुंगी कि, यिह मांस राजानलका पकायाहै ॥

महाभारतदृष्टान्त प्र० २६४-सागत्वाबाहुस्याग्रे,तन्मांस मपकृष्यच । अत्युष्णमेवत्वरिता, तत्क्षणात्प्रिय कारिणी । दमयन्त्यैततः प्रादा,त्केशिनी कुरु नन्दन ॥ ३ ॥ ७५ ॥ २१ ॥

अर्थ-हे युधिष्ठिर वो प्रियकारिणी केशिनी बाहुककेआगेजायके उस अतिगर्महीं मांसको झटिति खैंचकर तदनन्तर तत्क्षणही दमयन्ती को देतीभई ॥



महाभारतदृष्टान्त प्र० २६५—सोचितानलसिद्धस्य-मांसस्यबहुशः पुरा। प्राश्यमत्त्वानलंसूतं, प्राक्रोशद्भृशदुःखिता ॥ १ ॥ ७५ ॥ २२ ॥

अर्थ—जितनीअग्निसें पकानायोग्यहै उतनीयोग्यअग्निसें राजानलके पकाएहुए मांसको पहिलेबहुतवार खानेकर वो दमयन्ती उसमांसको खाकर उसबाहुकसारथिको राजानल जानकर अति दुःखीहुई रोती रही ॥

—०—

महाभारतदृष्टान्त प्र० २६६-ब्राह्मणार्थेपराक्रान्ताः,शुद्धै, र्वाणैर्महारथाः। निघ्नन्तोभरतश्रेष्ठ, मेध्यान्बहु, विधान्मृगान् ॥ ३ ॥ ८० ॥ ८ ॥

नित्यंहिपुरुषव्याघ्रा, वन्याहारमरिन्दमाः।
उपाकृत्यसमाहृत्य, ब्राह्मणेभ्योन्यवेदयन् ॥९॥

इसपर नीलकण्ठीटीका प्र० २६७—उपाकृत्यहिंसित्वा, उपहृत्ययज्ञार्थसमाहृत्य ॥

अर्थ—हेजनमेजय—पुरुषोंमेंश्रेष्ठ पराक्रमवालेशत्रुओंको दबानेवाले महारथी पांडव विषरहितबाणोंसें ब्राह्मणोंकेलिये यज्ञकेयोग्य बहुततरोंके मृगोंको मारतेहुए ॥ ८ ॥ नित्यही मारकर यज्ञलिये बनकेमृगमांसोंका आहार एकठाकर्के ब्राह्मणोंको निवेदन कर्तेरहे ॥ ९ ॥

—०—

तुलसीरामायणदृष्टान्त प्र० २६८—बन्धुसखासबलेहि बुलाई बनमृगयानितखेलहिजाई । पावनमृग मारहिंजियजानी, दिनप्रतिनृपहिदिखावहिआनी जेमृगरामबाणकेमारे, तेतनुतजिसुरलोकसिधारे बालकाण्ड १ ॥

देखो-नित्यमृगोंको मारकर श्रीरामजी पितादशरथको हररोज दिखलाते रहे ॥

—०—

महाभारतदृष्टान्त प्र० २६६—अगस्त्यएवकृत्स्नंतु,वातापिंबुभुजेततः ॥ मुक्तवत्यसुरोऽह्वान-मकरोत्तस्य चेल्वलः ॥ ३ ॥ ६६ ॥ ६ ॥ वातापेनिष्क्रमस्वेति,पुनः पुनरुवाचह । तंप्रहस्याब्रवीद्राजन् अगस्त्योमुनि सत्तमः ॥ ८ ॥ कुतोनिष्क्रमितुंशक्तो, मयाजीर्णस्तु सोऽसुरः ॥ ६ ॥

अर्थ-महर्षिअगस्त्यजीनेंही मेंढारूपहुए पकाएहुए सारे वातापिकोखाए लिया फिर हेवातापे निकसआ ऐसे फिर २ वातापिका इल्वलअसुर आह्वान कर्ताभया, पुनः उसको हसकर्के मुनिवर अगस्त्यजी बोले कि; मैंने हजम करालियाहै वो वातापि निकसनेको कैसे समर्थ होसक्ताहै ॥

—०—

महाभारतदृष्टान्त प्र० ३०० समृगान्महिषांश्चैव विनिघ्नन्राजसत्तमः। गंगामनुचचारैकः सिद्धचारणसेविताम् ॥ १ ॥ ९७ ॥ २५ ॥

अर्थ–शान्तनुमहाराजाएकाकी मृगोंको महिषोंको मारताहुआ सिद्ध चारणोंसें सेवितगंगाके तट विचरताभया ॥

महाभारत दृष्टान्त प्र० ३०१—अगस्त्यः सत्रमासीनश्चकारमृगयामृषिः । आरण्यान्सर्वदैवत्यान्, मृगान्प्रोक्ष्यमहावने ॥ १ ॥ ११८ ॥ १४ ॥

अर्थ–यज्ञकर्तेहुए महर्षिअगस्त्यजी सर्वदेवतोंको देने योग्य बनके मृगोंको प्रोक्षणकर्के महाबनमें शिकार करतेरहे ॥

महाभारत दृष्टान्त प्र० ३०२–भुञ्जानामुनिभोज्यानि रसवन्तिफलानिच। शुद्धबाणहतानांच मृगाणां-पिशितान्यपि ॥ ३ ॥ १६० ॥ ८ ॥

अर्थ मुनिओंके भोजनयोग्य रसवालेफल और शुद्धबाणोंसें मारेहुए मृगोंके मांसोंकोखातेहुए पांडव गंधमादनपर्वतपर निवासकरतेरहे ॥

महाभारत दृष्टान्त प्र० ३०३–ददर्शाथद्विजःकश्चिद्राजानंप्रस्थितंवनम्। अयाचतक्षुधापन्नः, समांसंभोजनंतदा ॥ १ ॥ १७८ ॥ ४ ॥

अर्थ—बनको गेहुएराजाको देखकर तब कोईक क्षुधातुरहुआ ब्राह्मण मांससहितभोजनको मांगताभया ॥

महाभारतदृष्टान्त प्र० ३०४—ततस्ते यौगपद्येन, ययुःसर्वेचतुर्दिशम्। मृगयांपुरुषव्याघ्रा ब्राह्मणार्थेपरंतपाः ॥ ३ ॥ २६४ ॥ ४ ॥

अर्थ—फिर वो पुरुषोंमेंश्रेष्ठ शत्रुको तपानेवाले पांडव एककालमें चारोंदिशोंको ब्राह्मणोंलिये शिकारको जातेरहे ॥

—०—

महाभारत दृष्टान्त प्र० ३०५—पाद्यंप्रतिगृहाणेद, मासनंचनृपात्मज ॥ मृगान्पंचाशतंचैव, प्रातराशंददानिते ॥३॥२६७॥१३॥

उसीका दृष्टान्त प्र० ३०६—वराहान्महिषांश्चैव याश्चान्यामृगजातयः ॥ प्रदास्यतिस्वयंतुभ्यं, कुन्तीपुत्रो-, युधिष्ठिरः ॥१५॥

अर्थ—राजाजयद्रथको द्रौपदी कहतीहै कि—हेराजपुत्र पादप्रक्षालनलिये इसजलको और आसनको लीजिये, और सवेरेके भोजनको पचासमृग तुमारेलिये देतीहूं ॥ १३ ॥ वराहोंको और महिषोंको होर जो मृगजातिहैं उनको युधिष्ठिरजी आप तुम्हारेलिये देंगे ॥१५॥

—०—

प्रह्लादजीको जीवन्मुक्तब्राह्मणका कथन मोक्षधर्ममें महाभारत दृष्टान्त

प्र० ३०७—कर्णंकदाचित्खादामि, पिण्याकमपिच ग्रसे ॥ भक्षयेशालिमांसानि, भक्ष्यांश्चोच्चावचान्पुनः ॥प०१७॥ अ०१७८ ॥२१॥ अर्थ—कभी कणको कभी तिलों के खल को, कभी चावल मांसको खाताहूं अर्थात् कभी बढिआ कभी घटिआ भक्ष्यवस्तुओंको खाताहूं ॥

महाभारतदृष्टान्त प्र० ३०८—मधुरैस्त्वासुमनसो,मन्त्र पूताजनाधिप। मोदकैःपायसेनाथ मांसैश्चोपाहरद् बलिम् ॥ प० १४ ॥ ६७ ॥ ४ ॥

अर्थ—हेराजनमंत्रोंमें पवित्रपुष्पोंको ग्रहणकरके वह युधिष्ठिर महाराजा लड्डू खीर और मांसोंसे बलि देताभया ॥

अध्यात्मरामायणदृष्टान्त प्र० ३०९—तत्रमेध्यंमृगंहत्वा पक्त्वाहुत्वाचतेत्रयः। भुक्त्वावृक्षदलेसुप्त्वा, सुख मासततांनिशाम् ॥ का० २ । स० ६ । २७॥

अर्थ—वहांवनमें मेध्यमृगको मारकर पकाकर फिर होमकरके वह तीनों अर्थात् सीतारामलक्ष्मण वृक्षके पत्रपर भोजनकरके शयनकर वो रात्रि सुखसे स्थितहुए ॥

भगवद्भागवतदृष्टान्त प्र० ३१०—तत्राविध्यच्छरैर्व्याघ्रा, न्सूकरान्माहिपान्रुरून्। शरभान्गवयान्खड्गान्,

हरिणान्शशशल्लकान् ॥ स्कन्ध १० ॥ अ० ५८ ॥ १५ ॥

भगवद्भागवत दृष्टान्त प्र० ३११—तान्निन्युःकिंकराराज्ञे, मेध्यान्पर्वण्युपागते ॥ १० ॥ ५८ ॥ १६ ॥

अर्थ–एकसमय श्रीकृष्णजीके साथ अर्जुननें गहनबनमें प्रवेशकिया वहांबनमें बाणोंसें व्याघ्रोंको मृगोंको महिषोंको रुरुमृगोंको, शरभमृगोंको, गवयोंको, गेंडओंको, हरिणोंको, खरगोशोंको, शल्लकपक्षिओंको, मारा ॥ ॥ १५ ॥ उनमेध्यमृगोंको पर्वकेआनेपर राजायुधिष्ठिरकेलिये किंकरजन पहुंचातेभए ॥ १६ ॥

—०—

विदितरहे कि, उन्मतका और चतुर्दशी अष्टमी अमावास्या पूर्णिमा रविसंक्रान्ति, इनतिथिओंका नाम पर्वहै ॥

हेपाठको–देखो हस्तिनापुर श्रीगंगाजीकेतटपर युधिष्ठिरादिक धर्मात्मा जन पर्वसमयमेंभी देवादिकमा निमित्त मेध्यपशुओंके मांसोंको वर्ततेरहेहैं।

फिर देखो प्रमाणांक ३० को बहुतकालमें जैनमतका असरहोनेकर आज प्रकरणानुसार मांसके नामकहनेमेंभी मेरे भ्राता अतिक्षोभकर्तेहैं ॥

—०—

कथनकेर दृष्टान्तोंका संक्षेपमेंअनुवाद पूर्वपक्षीद्वारा करतेहुए कहतेहैं कि, उक्तदृष्टान्तरूप शिष्टाचारोंका त्यागही वेदादिकोंमें अष्टताहै ॥

रामाद्याअवतारमुख्यमुणिता, देव्योपिसीता दयो
ब्रह्मर्षिप्रवराश्चवैदिकरताः, श्रीकुम्भयोन्यादयः ॥
राजानश्चनलादयोपिदमय, न्त्याद्याःस्वधर्माचला,

धर्मासक्तयुधिष्ठिरप्रभृतयो, धर्मादिजाताहिये ॥ ३ ॥ देवाभ्यागतभूसुरादिन्दवरे, भ्योमांस-दानेपुन, मांसाहारउदारधर्मयशमः, सर्वेप्रवृ-त्ताहिते ॥ नोखादामिपलंतथापिसुरसं, बुद्धिप्र-दम्पोष्टिकं, वेदभ्योपिसस्वैरस्मृतिप्रभृतितो; भ्रष्टस्यकाऽन्यागतिः ॥

टीका-पूर्वपक्षी० अवतारोंमें मुख्यगिनेगएहुए रामलक्ष्मणादिक और सीताऽऽदिदेवीएं तथा वैदिककर्मोमें अनुरागी ब्रह्मऋषिओंमें अति श्रेष्ठ अगस्त्यादिमहर्षि और इच्वाकुनल विकुक्षि अम्बरीषप्रभृति महाराज तथा स्वधर्मोमें स्थिर दमयन्तीआदिक महारानीएं, धर्मराजइन्द्रादिकोंसें उत्पन्न हुए स्वधर्मोमें आसक्त युधिष्ठिर अर्जुनभीमसेनआदिक, यिहसब धर्मयशवाले श्रेष्ठपुरुष देवताअतिथिब्राह्मण आदिकोंप्रति मांसदानमें पुनः मांसखानेमें प्रवृत्तहुएहैं यद्यपि-तथापि अतिपुष्टिकारक बुद्धिदेनवाले सुन्दररसीले मांसको मैं नहींखाता ॥

उत्तरसिद्धान्ती०—हेमित्र-वेदोंसें और स्मृतिआदिकोंसें भ्रष्टहुए पुरुषकी होर क्या दशा होतीहै अर्थात्—श्रुतिस्मृतिओंसें विहित जो शिष्टपुरुषोंके आचारहैं उनशिष्टाचारोंका त्यागही वेदादिकोंसें भ्रष्टताहै ३।।४।।

—:✱:—

अन्तर्यामीके अनुग्रहसें द्वितीयप्रकाशकी समाप्तिको सूचनकर्तेहुए परमेश्वरके स्मरणरूप मंगलाचरणको अबकरेहैं—

आरब्धोयान्नियुक्तेन, मयाऽसौतदनुग्रहात् द्विती-
योऽयंप्रकाशोऽस्य निर्मलोऽप्युदितीकृतः ॥ ५ ॥

टीका—जिसअन्तर्यामीपरमेश्वरकर प्रेरेहुए मैंने यिहभक्ष्यनिर्णय भास्करग्रन्थ आरम्भकराथा उसपरमेश्वरके अनुग्रहसें इसग्रन्थका यिह दूसरादृष्टान्तप्रकाशभी निर्मल उदय करदियाहै ॥ ५ ॥

चौपाई—शुरूकियोपुस्तकमें जिससें, प्रेरितहोउसकीहिकृपामें ॥
दूजोयिह दृष्टान्तप्रकाशा, निर्मलउदयकियोतमनाशा ॥

इतिश्रीहरिद्वारे पातञ्जलाश्रमनिवासिना
स्वामितेजोनाथेनोदितीकृते
भक्ष्यनिर्णयभास्करे
द्वितीयोदृष्टान्त
प्रकाशः
॥२॥

भक्ष्यनिर्णायभास्कर

* श्रीगणनाथायनमोनमः　　　　　　श्रीसरस्वत्यैनमोनमः *

चौपाई—ध्याकरवन्दहोंनाईशानं, हमरि धियोंकाप्रेरणवानं ॥

हमरिधियोकोप्रेरेईशा, सत्ययुक्तिकथनेजगदीशा ॥

प्रथमप्रकाशमें अजशशहरिणादिक पशुओंके बलिप्रदान और मांस भक्षणविषयके विधायक श्रुतिस्मृतिआदिकोंके वाक्यरूप प्रमाणोंको दिखलायकर द्वितीयप्रकाशमें उसी अर्थविषयके शिष्टाचाररूप असंख्य दृष्टान्त दिखलाए अब उसीअर्थमें सत्ययुक्तिओंके दिखलानेलिये तृतीययुक्तिप्रकाश का आरम्भकर्तेहुए निर्विघ्नसमाप्तिकेलिये पहिले मङ्गल श्लोकका उच्चारण करतेहैं ॥

ध्यात्वावंदेतमीशान, मस्मद्धीप्रेरकोहियः ।
धियोनःप्रेरयत्वीशः, सत्युक्तिनिरूपणे ॥ १ ॥

टीका—ध्यानकरके मैं उस परमेश्वरको वन्दनाकर्ताहुं जो हमारी बुद्धिओंका प्रेरकहै वो अन्तर्यामीईश्वर हमारी बुद्धिओंको सत्ययुक्तिओंके निरूपण में प्रेरे ॥ १ ॥

आदौमानशतानिसन्तिसततं, संदर्शयित्वा-सखे, यस्मिन्नेवपलाशनेपशुबलौ, मध्येप्रकाशे-मया । दृष्टान्ताहिपुरातनाः सुबलिनः, प्रामाणि-कादर्शिता, युक्तीर्दर्शयितुंतृतीयइहचा, रब्धः प्रकाशःसतीः ॥ २ ॥

टीका—जिसही पशुबलिदानविषयमें और मांस भक्षण विषयमें बहुत श्रेष्ठप्रमाणोंको आदिप्रकाशमें दिखलायके द्वितीयप्रकाशमें प्रमाणसिद्ध पुरातन सुप्टुप्रबलवाले दृष्टान्त दिखलाएदिएहें, हेसखे उसीविषयमें सत्य-युक्तिओंके दिखलानेलिये तृतीययुक्तिप्रकाश आरम्भकराहे ॥

--:o:—

शंका—जब सैकड़ेप्रबलप्रमाण और शिष्टाचाररूप असंख्यदृष्टान्त दिखलायेदियेहें तोफिर उसमें युक्तिओंके दिखलानेकी क्या आवश्यकता है इसका उत्तर कहते हैं ॥

दृष्ट्वापिमानानिबहूनिमान्ति, श्रुत्वापिदृष्टान्त-शतम्प्रशस्तम् युक्तींविनानैवसयातितोषं, यो-ऽश्रद्दधानोऽस्तिकुतर्कबुद्धिः ॥ १ ॥

टीका - श्रुतिस्मृतिआदि श्रेष्ठ बहुतप्रमाणोंको देखकरभी तथा बहुत प्रामाणिक दृष्टान्तोंको सुनकरभी युक्तिओं विना वो पुरुष संतोषको नहीं प्राप्तहोसक्ता जो श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें श्रद्धासेरहित कुतर्क बुद्धिवालाहे अतः उसलिये श्रेष्ठ युक्तिओंके दिखलानेकी आवश्यकताथी इसलिये तीसरे प्रकाशका आरम्भकरा है ॥

—o—

पूर्वपक्षी०—मांसके त्यागमेंभीतो युक्तिएं हैं ॥

आस्तिक०—हेमित्र—वो युक्तिएं आप पहिले कहो ॥

—o—

पूर्वपक्षी०—सुनिये अहिंसाप्रदीपमें कहा है कि—यदि आपकहेंकि [ईश्वरने सब पशुआदिजीव मनुष्योंकेलिये बनाएहें इसलिये मनुष्य का अधिकारहै हकहै कि—वह जैसा चाहे उनसे वैसाही कामले क्योंकि—मनुष्य

ही सबसें अच्छाहै चाहे वह उनके दूधआदिकों अपने काममें लावे अथवा मांमको सर्वथा ऐसाकरनेपर मनुष्यको दोषवाला नहीं समझना चाहिये] तो इसका उत्तर सभापति सभाके और पिता पुत्रके दृष्टान्तसें कहागयाहै कि-खानेकेलिये नहीं बनाएहैं ॥

आस्तिक०प्रश्न उत्तर आपका अज्ञानसें भराहुआहै क्योंकि-"ईश्वर ने सबपशुआदिजीव मनुष्योंके खानेलिये बनाएहैं" ऐसेतो कोईभी नहीं कहता इसीसें गर्दभ श्वान वानर काक किरली चींटीआदि सब जीवोंको कोईभीमनुष्य नहींखाता, और सबजीवोंको खाना किसीके धर्मपुस्तकमें कहाभी नहींहै किंतु धर्मपुस्कोंमें जिसजिस बकरा भेड दुम्बा हरिण शश तित्तिर बटेरा॥दिकोंके मांसखानेका विधान कराहुआहै उसउसकेही मांसको आस्तिकमनुष्य खातेहैं ॥

यदि परमेश्वरने भेडबकरा॥दिक मनुष्योंकेखानेलिये न बनाएहोतेतो उनको मनुष्य कभी न खासके क्योंकि, सर्वशक्तिमान्ईश्वरतो सदा सत्यसंकल्प हीहै, सत्यहोवे व्यर्थ नहीं होवे अर्थात् तत्कालसफलहोवे संकल्प जिसका उसको सत्यसंकल्पनामसें पंडितजनकहतेहैं, ऐसे सत्यसंकल्पईश्वरका संकल्प कदापि व्यर्थ नहीं होसक्ता ॥

जैसे गौभैंस बैलहस्तिआदिकोंके खानेलिये ईश्वरने बकराभेडदुम्बा॥दिक नहीं बनाए, इस्सें वो उनके मांसको नहीं खासके ॥

और जैसे सत्यसंकल्पपरमेश्वरने सिंहादिकोंका कच्चामांसही आहार बनायाहै अतः वो घासआदिको नहीं खायसके होर जैसे सत्यसंकल्पईश्वर नें काकश्वानमार्जारआदिक जीवोंकेलिये मांस और अन्नादिकदोनोंआहार रचेहैं इससे वो मांसकोभी अन्नादिककोभी खासक्तेहैं ॥

अर्थात् सत्यसंकल्पपरमेश्वरने जिस २ जीवका जोजो आहार नियत कराहै वोवो जीव उसी २ आहारको खासक्ताहै होर को नहीं खायसक्ता ॥

एवं सत्यसंकल्पईश्वरने मनुष्योंकेखानेलिये भेडबकरादिकोंका मांस और अन्नादिकबनाएहैं तबही परमधर्मनिष्ठश्रीरामलक्ष्मणादिक तथा वेदवेत्ताब्राह्मणभी अन्नादिको और मांसकोखातेरहेहैं, अबभी ब्राह्मण व क्षत्रिय राजेमहाराजेआदि मांसको खातेहीहैं ॥

यदि परमेश्वरने बकराभेडदुम्बाऽऽदिक मनुष्योंके खानेलिये न बनाए होतेतो वेदसूत्रस्मृतिओंमें पशुबलिप्रदानका मांसभक्षणका विधान कहींभी न करसक्ते परंतु वहां अनेक २ वाक्यनसें विधान कराहुआहै इस्सें जाना जाताहै कि, मनुष्योंके खानेलिये ईश्वरने बनाएहैं तबहीतो योगयुक्तपुरुषोंनें उसका विधान कराहै ॥

हेमित्र—असंख्यपदार्थहैं वो असंख्यप्रयोजनोंकेलिये बनाएहोतेहैं—

जैसे गुरुजन ज्ञानदानसें अज्ञानके नाशलिये होतेहैं परंतु यदि मूर्ख अज्ञानीको गुरु बनाया जावेतो वो अज्ञानकी दृढताका कारणहोजाताहै ॥

मातापिता सन्तानके पालणपोषणआदिकोंलिये होतेहैं वो यदि दुरदृष्ट उदयहोवेतो मातापिताभी सन्तानके प्राणान्तदुःखलियेही होजातेहैं । जैसे पहिलेसमयमें केईअज्ञानी पापीमनुष्य अपनी कन्याको मारडालतेथे फिर योग्यबुद्धिमान् न्यायकारी गवर्मिन्टनें उस महापापको हुकमन बन्दकरादिया इस्सें मैं अंगरेजगवार्मिंटको धन्यवादकर्ताहूं जिनोंनें ऐसे महापापोंसें बचा लियाहै ॥

और जैसे पुत्र मातापिताकी सेवाऽऽदिकोंलिये होताहै परंतु दुरदृष्ट दुर्वासनाके प्रभावमें वो पुत्रभी अतिकष्टदायक होजाताहै ॥

बकरा भेडआदिक मनुष्योंके खानेवास्ते होतेहैं परंतु कहीं कोई २ वो सिंहव्याघ्रादिकोंके खानेमेंभी आयजातेहैं ॥

तात्पर्य्य यिह--जीवोंके कर्मानुसारही जगत्की विचित्र रचना परमेश्वर कर्ताहै अतः जिसजिस भोक्ताके जैसेजैसे उत्तम वा मध्यम वा निकृष्ट कर्महोतेहैं उसउसभोक्ताके लिये वैसेवैसेही भोग्यपदार्थोंको परमात्मा रचदेताहै ॥

इसीअभीप्रायसे कहाहै महाभारतके उद्योगपर्वमें--

विदुरनीति प्र०३१२--**आढ्यानांमांसपरमं मध्यानांगोरसोत्तरम् ॥ तैलोत्तरंदरिद्राणां भोजनंभरतर्षभ ॥** अ० २॥४६ अर्थ-- हेराजन् धृतराष्ट्र धनराज्यादि संपदावाले पुरुषोंका मांस प्रधान भोजनहै, मध्यमपुरुषोंका गोरसवाला, और निर्धनदीनमनुष्योंका तैलयुक्त भोजन होताहै ॥

हेपाठको--प्रसिद्ध सुननेमें देखनेमेंभी आताहै कि राजे महाराजे पातशाहआदिक भाग्यवानोंका मांसही प्रधानभोजन होताहै, हुआहै ॥

पूर्वपक्षी०---जब न्यायकारी परमात्माने जीवोंके पूर्वकर्मकेअनुसारही अनेकप्रकारके जीवोंके शरीर रचेहैं तो सृष्टिको अनादिमाननेवाले यह कैसे कहसक्तेहैं कि-- बकरीआदिजीव हमारेही पेटमें जानेके वास्ते ईश्वरने रचेहैं, ऐसा माननेकर ईश्वरके दयालु और न्यायकारी नामपर धब्बा लगाना नहीं तो होर क्याहै ॥

आस्तिक०--हेपाठको-देखो कैसी असत्ययुक्ति कहीहै, अब इसीअर्थको मैं स्पष्टकर दिखलाताहुं, सृष्टि और कर्म प्रवाहरूपसे अनादिहैं, परमेश्वर निरतिशयन्यायकारीहै अतः पुण्यपापसे विना सुखदुःखको व उनके साधनोंको नहींदेसक्ता किंतु जैसा २ पुण्य पाप होताहै वैसा २ सुखदुःख और

उनके साधनोंको ईश्वर देताहै इसनियममें निश्चय होसकताहै कि जब जिस-जिस बकरा भेड दुम्बाऽऽदिकजीवके जीवनकालमें दुःखसुखदेनेवाले प्रारब्धकर्म फलदेकर निवृत्त होजातेहैं और मृत्युका देनेवालाकर्म फलदेनेके लिये उद्यत होताहै तबही बलिप्रदानसें वा अन्यकिसीनिमित्तसें उसउसपशुका पक्षीका मरणहोताहै ॥

और जिसजिसभोक्ताके अतिस्वादुरस बलआदिदेनेवाला शुभप्रारब्ध फलदेनेकेवास्ते उद्यतहोताहै उसउसभोक्ताकी विहितमांसखानेमें वा अविहितमांसखानेंमे प्रवृत्ति होसक्तीहै,

यद्यपि-अविहितमांसके खानेकर दोषहोताहै और विधिविहितमांसके खानेकर कोईदोष नहींहोसक्ता तथापि जीवोंके कर्मोंसें विना तो ईश्वर किसी जीवको मृत्यु नहींदेता और बलबुद्धिअतिस्वादुरसआदिकोंके सुखकोभी नहींदेता तो हेमित्र-परमेश्वरके न्यायकारीनामपर धब्बाकेसे लगसक्ताहै अर्थात् कर्मानुसारफलके देनेकर ईश्वरके न्यायकारीनामपर धब्बा नहींलग सक्ता किंतु असत्ययुक्तिके कथनसें तुम्हारे पंडितनामपर स्पष्टधब्बा लगाहै ॥

दयालुनामके प्रसंगमें पहिले दयाकालक्षणसुनिये शब्दस्तोममहानिधि

यत्नादपिपरक्लेशं, हर्तुंयाहृदिजायते । इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ, सादयापरिकीर्तिता ॥

अर्थ-हेश्रेष्ठब्राह्मण दूसरेके क्लेशको यत्नसेंभी नाश करणेकेलिये जो हृदयमें इच्छाउदयहोतीहै वो दयानामसें कथनकीजातीहै ।,

अब विचारिये कि, यिह दया ईश्वरमें क्यासिद्ध होसक्तीहै क्योंकि, ईश्वरतो सत्यसंकल्पहै यदि जीवोंके क्लेशोंके नाशकरनेकी इच्छारूपदया सत्यसंकल्प

ईश्वरमेंहोतो किसीभीप्राणीके कोईभी क्लेश नहीं रहनाचाहिये परन्तु जीवोंमें अनन्तक्लेश देखनेमें आतेहैं इस्से ईश्वरमें दयाकी सम्भावना होसकेनहीं ॥

बहुत क्या–असंख्यजीवोंको जो अनेक २ प्रकारके भयंकर २ क्लेश होतेहैं उनमेंकोई एकभी क्लेश किसीभीजीवको ईश्वरकी इच्छासेंबिना नहीं होसक्ता क्योंकि, सर्वजीवोंको कर्मफलप्रदाता ईश्वरहीहै अतः स्वल्प वा बृहत् सबही क्लेश जीवोंके कर्मानुसार ईश्वरकी इच्छासेंही होतेहैंतो जीवोंके क्लेशोंके नाशकरणेकीइच्छारूपदया ईश्वरमें कैसे सिद्धहोसक्तीहै ॥

अर्थात् न्यायसें जो दण्डदेनेवालाहै उसमें दया संभवेनहीं, यदि दयाहोतो न्याय नहींहोसक्ता, सो ईश्वर निरतिशयन्यायकारीहै अतः ईश्वरमें दया सिद्ध नहीं होसक्ती ॥

यदि आपकहोंकि, "अपराधीजीव फिर ऐसाअपराध नहींकरें" ऐसा संकल्पकर न्यायसेंजो दण्डदेनाहै वो ईश्वरकी दयाहीहै" तोहेमित्र, यिह कथनभी अयुक्तहीहै।,

क्योंकि—ईश्वरतो सत्यसंकल्पहीहोताहै सत्यसंकल्पईश्वरमें यदि 'अपराधीजीव फिर ऐसा अपराध नहीं करें" ऐसा संकल्पहोवेतो वोभी सत्यही होनाचाहिये उस्से यिह व्यवस्था नहीं रहनीचाहिये जोकि, अनादिकालसें सर्वअज्ञानीजीव पुनः २ अपराधकर्तेरहेहैं और ईश्वरद्वारा अपराधोंके फल क्लेश पातेरहेहैं व पारहेहैं इस्से जानाजाताहैकि, सत्यसंकल्पईश्वरमें ऐसाउक्त संकल्परूपदया नहुआहै नाहैहै ॥

प्रश्न—सर्वविद्याओंसें पहिलेजो बन्धमोक्षधर्माधर्मके ज्ञानलिये और उनके कारणोंकेज्ञानलिये ईश्वरनेवेदप्रकटकरेहैं वो तो मनुष्यों पर दयासेंही प्रकट करेहैं ॥

उत्तर–जीवोंकेजो अदृष्टहैंवो "साधारणकारणहैं" सर्वकार्य्योंकेकारणहैं

अर्थात् जीवोंकेअदृष्टोंसेंविना कोईभी कार्य्यनहीं होसक्ता, यिह शास्त्रकार महर्षिओंका नियमहै तो वेदोंका प्रकटहोनाभी जीवोंके अदृष्टोंबिना कैसे होसक्ताहै किन्तु जीवोंके अदृष्टरूपानिमित्तोंसेंही ईश्वर वेदोंको प्रकटकर्त्ताहै ॥

—०—

प्रश्न—यदि ईश्वरमें दया संभवेनहीं तो बहुतग्रन्थोंमेंईश्वरको दयासिंधु करुणानिधि कृपासागरआदिनामोंसें क्यों कहतेहैं ॥

उत्तर—जीवोंके कर्मानुसार जगत्का उत्पादनपालन पुनः संहारकरना असंख्यजीवोंके विलक्षण २ असंख्यकर्मोंके यथायोग्यफलोंका देना, इत्यादिक जीवोंसें असाध्यअसंख्यकार्य्योंको निरतिशय न्यायसें जो ईश्वर कर्ताहै वो क्या किसी अपने प्रयोजनके लिये कर्ताहै ऐसे नहीं क्योंकि, ईश्वर आप्तकामहै पूर्णकामहै नित्यतृप्तहै सुखसमुद्रहै अतः अपनेप्रयोजनसें बिना असंख्यकार्य्योंको कर्ताहै इस्सें ईश्वर दयासिन्धुकृपासागरनामसें कहनेयोग्यहै परन्तु निरतिशयन्यायकारितासें भिन्न कोईदया ईश्वरमें संभवेनहीं—

ईश्वर निरतिशयन्यायकारीहै अतः पुण्यपापसेंबिना सुखदुःखको और उनके साधनोंको नहींदेसक्ता इस्सें जीवोंकेकर्मानुसारही जीवोंका मृत्युकेवश करेहै और कर्मानुसारही बलबुद्धि पुष्टि अतिस्वादुरसआदिकोंके सुखको ईश्वरदेताहै अतः ईश्वरनिर्दोष निरतिशयन्यायकारीहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—यदि आपकहेंकि, हमहीउत्तमहैंतो हमपूछतेहैंकि, आपकी उत्तमता यहीहैकि, आप बेजबानदुर्बलजीवोंके गले काट२ कर अपनेघरोंको श्मशानभूमि पेटको कबरस्तान घरोंकी हवाको बिगाड़तेहुए रोगमय जीवन व्यतीतकरके नरकगामी बने, नहीं २ ऐसे उत्तम नहीं होसक्ते ॥

आस्तिक०—उत्तम वोही होसकाहै जोकि, श्रुतिस्मृतिआदिकोंके अनु-

कूल 'आचार' वर्तावकर्ताहैं उनके अनुसारही कलम चलाताहै हेमित्रतुमतो श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्ध मखोलकी बातेंबनाकर उत्तम कहलाया चाहतेहो ॥

विचारियेकि, घरोंमें चुल्ली, जलघट बुहारी दीपकआदिक हिंसाकीजगें सब मानतेहीहैं तो क्या तुम्हारेघर श्मशान कहजातेहैं ॥

दिखाचुकाहुं—महाराजा दशरथयुधिष्ठिरादिकोंके यज्ञोंमें सैंकडेपशु मारेगयेथेतो क्या वो श्मशानभूमिएं कहीजातीरहीं वा यज्ञभूमियें कहलाती रहीं—

और उनयज्ञनमें सैंकडेपशुओंके गले,काटे जानेपरभी हवाका बिगड़ना तो नहींहुआ ॥

पहिले दिखाचुकाहुं कि, श्रीरामलक्ष्मण और वेदवेत्ताब्राह्मण व नल अम्बरीष युधिष्ठिरप्रभृतिमहाराजे मांसको खातेखुलातेरहेहैं ॥

और इससमयमेंभी—यूरप काबुल मैथिल नयपालआदिदेशोंके जो कोटिन पुरुषस्त्रियें ब्राह्मणक्षत्रियआदिक मांसकोखानेवालेहैं उनका जीवन क्या रोगमय व्यतीत होताहै ।

हेनादान—उन परमपूज्य पुरुषों के पेटको कबरस्तान कहताहैं ॥

यिह भेडबकरा दुंबा आदि जीव 'गले काट २ कर' अर्थात् बलि प्रदान करके खानेकेलियेही विधाताने रचेहैं अतः सबदेशोंमें यिहसब इसी काममें आतेहैं और आस्तिकतासें देखो प्रमाणांक ६०, व ७०, व १०४, व ६१ आदिको इसविषयमें बहुतही प्रमाण और असंख्यदृष्टान्त भी दिखाचुकाहुं धर्माधर्म अतीन्द्रियपदार्थहैं अतः धर्माधर्मका विज्ञान शास्त्रसेंहीहोसक्ताहै यिह प्रमाणांक ५७ शंकरभाष्यमेंभी दिखलाय चुकाहुं भक्ष्याभक्ष्यका निर्णयभी प्रबलप्रमाणोंसे तथा असंख्य दृष्टान्तोंमेंसें लिखचुकाहुं उनसें विरुद्ध कहनेकर तुमको वारंवार नरकही भास्ताहै ॥

पूर्वपक्षी०—मनुष्यकी श्रेष्ठता इसीमेंहै कि, वह निजरूपको समझे प्रभुकी भक्तिकरे जीवोंपर दयाउपकार और क्षमाकरें ॥

आस्तिक०-निजरूपका समझना प्रभुकी भक्ति अवश्यंकरनी चाहिये और योग्यमनुष्योंपर दयाउपकार और क्षमाभी करीही चाहिये और इतर जीवोंपरभी दया उपकार क्षमाको योग्यताके विचारसें समझकरहीकरी चाहिये ॥

जैसे जहां सूरहरिणादिकोंसें खेतआदिका नाशहोतादीखे तो वहां उनपर दयाउपकारक्षमाका करना योग्य नहींहोसक्ता ॥

यदिआप कहेंकि—उनसूरहरिणादिकोंको भयदेकर वहांसें भगादेनाचाहिये परंतु उनको मारना नहींचाहिये तो यिहकथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि-यदि उनको कबीभी कोईभी न मारें तो वृद्धिको पाकर वह बहुत पृथिवीमें फैलसक्तेहैं फिर उनसें खेतादिका बचानाभी होहीनहींसक्ता खेतादिकोंसें विना मनुष्योंका जीवन कैसेरहसक्ताहै ॥

==०==

जैसे—वर्षाऋतुमें गेहूंचावलचनाऽऽदिकोंमें सुसरीआदिक हजारों लाखोंजीव पैदाहोजातेहैं तो उनपर दयाउपकार क्षमा कौनपुरुष कैसे करसक्ताहै ॥

शंका—उनकी उपेक्षाकरछोडे अर्थात् वोजीव अन्नको खातेरहें उनकी तरफ ख्यालहीनकरे तो ऐसे उनपर दयाउपकार क्षमा होसक्तीहै ॥

समाधान—वाह तुमने अच्छा विचारकरा उधर चार छीमहीनेमें सुसरीआदिजीवभी सब अन्नको खाकर फिर अन्नके अभावसें प्रलयको प्राप्तहोजावेंगे, इधर अन्नके अभावसें मनुष्यनका जीवनभी कैसेरहसक्ताहै जैसे गौ भैंस मनुष्यादिकोंके व्रणमें वा कूपजलमें कृमि पैदाहोजातेहैं लाखों मकरी पैदाहोजातीहैं अनेकरोगोंकेकृमि पैदाहोजातेहैं, तो इत्यादिकजीवोंपर

दया उपकार क्षमाकाकरना अतिअयुक्तहीहै क्योंकि-इत्यादिकजीवोंके जीवतेहुए गी भेंस मनुष्यआदिकोंको प्राणांतकष्ट प्राप्तहोतेहैं अतः जीवोंकी योग्यता का सम्यक्विचारकरकेंही दयाउपकार क्षमाका करना योग्यहोसक्ताहै

==+०+==

पूर्वपक्षी०—यदि आप कहोंकि-परमात्मानें यहसवपशु हमारेलिये हीबनाएहैं तो एसाही क्यों न मानलेंकि-तुम्हारे शरीर सिंहआदिहिंस्र जीवोंके लियेहीबनाएगएहैं ।

आस्तिक०—यह सब पशु हमारेलिये बनाएहैं एसे तोकोईभीबुद्धिमान्‌पुरुष नहींकहसक्ता क्योंकि-निरतिशयन्यायकारी सत्यसंकल्प परमेश्वरने जोजो भेडबकराऽऽदि जिसजिसमनुष्यादिकोंके लिये बनाएहोतेहैं वोवो उसउसकेही काममें आतेहैं और जो कोईमनुष्यशरीर सिंहादिकोंके लिये परमात्माने बनायाहै वो उस केही खानेमें आताहै क्योंकि परमेश्वरका संकल्प सत्यहीहोताहै ॥

==÷०÷==

पूर्वपक्षी०—कभीकिसीपुरुषके कोमलपुत्रको शेर उठाकर उसके सामनेही उसके सुन्दर २ अंगोंको काट २ कर खानेलगे तोफिर उससमय ज्ञानहो कि-इसीप्रकार बकरीआदिके बच्चोंको खानेमें बकरीआदिकोभी वैसाही, दुःखहोताहोगा ॥

आस्तिक०—ज्ञानमें स्नेहआदिकोंमें मनुष्योंका और पशुओंका बहुत भेदहै होमित्र-देखो व पूछो कि कसाईलोक भेडोंके बकराऽऽदिके इज्जड रखतेहैं पालतेहैं तो उनको यिहज्ञान नहींहोसक्ता कि-यिह कसाईही हमारे इज्जड मेंसें दोचार हमारेभाईभेडबकरोंको नित्यमारताहै मरवाताहै अतः यिहहमारा घातकहै, प्रत्युत वो भेडबकराऽऽदिक उसकसाईमेंही पालकजानकर स्नेह

रखतेहैं और जबतक बच्चा दूध पीताहै तबतकही बकरीआदिपशुका बच्चेकी तर्फ ख्याल व स्नेहहोताहै फिर जब दूधपीनेसें हटजाए तबसें बकरीआदि पशुओंका स्नेह और ख्याल नहींरहता, चाहे बच्चेको कहींलेजाओ चाहे बच्चा कहीं चलाजावे उस्सें बकरीआदिपशुको किंचित्भीदुःखनहींहोता ॥

बाल वा वृद्ध वा रोगी बकराऽऽदिकोंका खाना तो चिकित्साशास्त्रमें भी मनाकराहुआहै और नीरोग युवा बकराआदिकोंके कहीं लेजानेकर वा बीमार होनेकर वा मारदेनेकर उसकी माताबकरीआदिको कुछभी दुःख नहींहोता ॥

यद्यपि-एकपशुके सामनेही दूसरेपशुको लाठीमें पीटें वा मारें तो उसदूसरेको भय व दुःखहोताहै परंतु परोक्षमें बलिप्रदानसें होरबकराऽऽदि-कोंको कुछभी दुःखनहींहोता ॥

—==÷०÷==—

पूर्वपक्षी०— कभी कसाईके हाथसें छुरी छूटकर यदि अपनीही अंगुलीपर पड़े और रुधिरकी धारा बहनेलगे तब उसपीड़ाकी गवाई लेकर भी फिर वह गलेकाटनेसें यदि न हटें तो यह पापकी महिमा नहीं तो और क्याहै जोकि-अंधाकरदेतीहै ॥

आस्तिक०—ठीकहै खड्गप्रहारसें दोमिण्टतक बकराऽऽदिक पशुको पीड़ाहोतीहै परंतु रोगादिकोंसें मरणेकर भेडबकराआदिकोंको कितनेदिन पीड़ाहोगी, ऐसेविचारकर यदि तुम श्रुतिस्मृतिओंके सदाचारोंमें विमुखता रूप नास्तिकतासें नहीं हटोतो यिह अज्ञानका महिमा नहीं तो और क्या है जोकि—अधोअधःपतितकरदेताहै ॥

पूर्वपक्षी०—शूकर भैंसा गैंडा हाथी आदि शतशःपशु ऐसेहैं जो मांसका आहारनहीं करते और कैसे बलवानहैं यदि सिंह किसी मनुष्य

समुदायमें आजाए तो चार वा पांचको मारेगा किन्तु वनका भैंसा वा हाथी आदि अनेकको मारकर सिंहकी न्यांई शीघ्र नहीं मरेगा ॥

आस्तिक०—वनके हाथी आदिक तो सिंहका भोजन प्रसिद्धहीहैं ॥

सिंह चार वा पांचको मारेगा हाथीआदि अनेकको मारेंगे, यिह किसी ने नियम नहीं कररखा, यदि तुम ऐसानियमकर्तेहो तो मांसाहारीसिंहमें जाल्मता नहीं किंतु अपने आहारका सम्पादनहै और मांसके नहींखानेवाले भैंसाहाथीआदिकोंमें जाल्मता तुमारे नियममें सिद्ध हो सक्तीहै, मृगराजसिंहही बीसफिटसेंभी ऊंचीछाललगाकर मारकर्ताहै और भैंसाऽऽदिको मारके उठा लेजाताहै मृगपति मृगेन्द्र मृगराज, इत्यादिकनाम सिंहकेहीहैं सूर भैंसागैंडा हाथीआदिकोंके नहीं ॥

हेमित्र—मृगराजसिंहकीही गर्जनाको सुनकर हाथी आदि सबजंगल के पशु लीद कर्ते २ भागते ही दीखतेहैं, हो र किसीकीभी गर्जनासुनकर सिंहतो कभी नहीं भागजाता—

बहुत क्या कहूं—कविजन राजेमहाराजे पातशाहोंको बहादरीमें उपमा मृगराजसिंहकीही देतेहैं ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—इससमयमें तो इंगलैण्डमें बड़े २ वैज्ञानिक डाकटरोंनें सिद्ध करादियाहै कि, मांसकी अपेक्षा फलदुग्धादिमें विशेषबलहै ॥

आस्तिक०—बातोंकरही अर्थसिद्धि नहीं होसक्ती किंतु अर्थसिद्धिलिये आस्तिकजनोंको आर्षग्रन्थनकेप्रमाण दिखलाएजातेहैं देखो प्रमाणांक१८६ के व्याख्यानमें शंका-समाधानकर वेदान्तउपनिषत्प्रमाण दिखलायके सिद्ध करचुकाहूं कि-दुग्धादिकोंसे मांसमें पौष्टिकता बुद्धिबलवर्धनआदिगुण अधिकहीहैं ।

हेमित्र--घृतदुग्धआदिभी बलकारीहैं परन्तु मांसमें पौष्टिकताऽऽदिक गुणविशेषहै सो प्रमाणांक ६७ आदिकोंमें देखलीजिये ॥

और देखो प्रमाणांक १७८ को मांसमें अग्निदीपनगुणभी विशेषहै ॥

बडे २ वैज्ञानिक डाकटरभी दुर्बलबीमारों को मांसके रस काही प्रायः सेवन करवातेहैं ॥

मेडीकलकतावोंसें विरुद्ध यदि किसीतात्पर्य्यसें कोई कहे तो सोकथन माननीय नहीं होसकता ।

पूर्वपक्षी०--जो आपने मांसका असर मुखकी लालीसें दिखलायाहै वह आपका भ्रमहै, बानरने कभी मांस नहीं खाया परन्तु उसका मुख कैसा लालहोता है ॥

आस्तिक०—बानरभी जूओंको और वर्षाऋतुमें उडनेवाले मकोडों-कोभी खातेहीहैं परन्तु बानरजातिमें लाली तो जातिसें स्वाभाविकहै और मनुष्यनके मुखमें लाली तो रुधिरकी वीर्य्यकी आधिकतासें होतीहै ॥

पूर्वपक्षी०—यदि आप ऐसे कहें कि-यदि कोई मांस न खाए तो पशुपक्षी बहुत बढकर पृथिवी भरजाए इसलिए इनको मारकर इनका मांस काममें लानाचाहिए तो वाह अच्छाविचारकरा, मालूमहोताहै कि-परमात्मा नें संसारकी मर्यादा ठीकरखनेके लिए आपको काम दियाहै नहीं तो ऐसा-विचार न करते, अब हम आपसेंही पूछतेहैं कि-मनुष्योंको जब कि कोई नहींखाता तोभी मनुष्योंसें पृथिवी क्यों नहींभरजाती, ऐसे तोफिर सर्प मक्खी चींटीआदिकोंकोभी आप मार २ कर खानेमें क्यों भय मानोगे क्योंकि आपने तो वृद्धिकोही रोकनाहै ॥

आस्तिक०—ठीकहै—कि जगत्की मर्यादा ठीक रखनेलिये योग्यपुरुषोंके चित्तोंको परमात्मा प्रेरहैहै इसीसें गायत्रीमंत्रमें कहाहै कि—"धियोयो-नः प्रचोदयात,, जो परमात्मा हमारी बुद्धिओंको प्रेरेहै ॥

सुनिये—मनुष्योंमें पृथिवी इस्सें नहीं भरजाती कि जब मनुष्योंकीभी अतिबहुलता होतीहै तब प्लेग कालड़ाऽऽदि महामारी शुरु होजातीहैं उसमें लाखोंमनुष्य मरजातेहैं जैसे भारतखंडमें बहुतवर्षोंसें मररहेहैं । और राजे महाराजे पातशाहोंके संग्राममेंभी लाखों वा कोटिनमनुष्य स्वाहा हो-जाते हैं ॥

श्रुतिस्मृतिओंसे विहितकर्मकरनेमें आस्तिकजनोंको कुछभय नहींहोता और चींटीमच्छीआदिका खाना विहित नहीं है अतः उनके मारणेकर खाने-कर भय आवश्यकहै, सांपणीसें बहुतही अण्डे निकलतेहै फिर जब उनसें बच्चे पैदाहोतेहै तो आपही वो सांपणी उनवच्चोंको खाने लगजातीहै उस-सांपणीसें जो कोई २ बच्चा दूर निकलगयाहो तो वह जहांकहीं छिपकर बड़ा होताहै ऐसे मातासें बचेहुए सर्पोंमेंभी जब २ जहां २ कोईसर्प निकला दीखे तो उसउसको मुसलमान और बहुतसे हिन्दुभी मारडालतेहैं और मारखोरा नकुलआदिकभी सर्पोंको मारतेहैं, इत्यादिक बहुतकारणोंसें सर्पोंकी बहुलता होहीनहींसकती ॥

जब चैत्रवैशाखमें मक्खिओं की बहुलता होतीहै तो फिर ज्येष्ठमासमें अत्युष्णवायुसें उनकी बहुलता नहीं रहती फिर भाद्रमासमें मच्छीबहुतहोतीहैं तो शीतकालमें अतिशीत होनेकर उनका प्रलय होजाता है ॥

चींटीआदिकजीव तो झाड़ु फेरनेकर जलघटादिकोंसें और हाथी घोड़ा बैल गाडी बग्गी मनुष्यादिकोंके चलनेकर, सीरा शहतआदिकोंमें

चढ़नेकर होरअनेकनिमित्तोंसे असंख्यही मरते रहतेहैं अतः उनसेंभी पृथिवी नहींभरजाती ॥

और भेड़ बकराऽऽदिकोंकीभी वृद्धि बहुतही होतीहै उनको मनुष्य मारकर खाते रहतेहैं ॥इत्यादिकनिमित्तोंमें परमात्माही संसारकी मर्यादाको ठीक रखताहै ॥

हेमित्र—हम जीवोंकी वृद्धिको रोकना नहीं चाहते किंतु वेदसूत्रस्मृतिओंके विधिवाक्यनका सम्मान करना और अधिकारीजनोंमें उनके अर्थोंका प्रकट करना हमारा धर्महै क्योंकि हम आस्तिकहैं ॥

———:०:———

पूर्वपक्षी०—यदि तुम कहो कि—जबतक पशु कामके योग्यरहे तबतक दूसरा कामलें पर इनके वृद्धहोनेपर मारकर खानेमें क्या हानिहै तो शोकहै ऐसीबुद्धिपर और ऐसी चिन्तापर इत्यादि ॥

आस्तिक०—असत्यही पूर्वपक्षहै अतः उत्तरपक्षभी अयुक्तहीहै क्योंकि वृद्ध और रोगी बकराऽऽदिकोंके मांसखानेका तो चिकित्साशास्त्रमेंभी निषेधहीहै ॥

——०——

पूर्वपक्षी०—यदि तुम कहोकि—ब्राह्मणवैश्यादि न खावें परंतु हमारे विचारमें क्षत्रियोंको तो अवश्यखानाचाहिये और क्षत्रियोंकेलिए शास्त्रमें कहीं दोषभी नहींआया, तो वाह ठीक कहा—गीता मनुस्मृतिआदि जो वर्णोंके धर्मोंके बतानेवालेग्रन्थहैं उनमें क्षत्रियकेवास्ते मांसखाने की आज्ञा वा उसकेलिए मांसखानेमें दोषका अभाव हमने कहींभी नहींपाया ॥

और इतिहासमें यदि कहीं मांसका वर्णन पायाजावे तो इतिहासकी

सब बात धर्म नहींहोती, नहीं तो युधिष्ठिरजीका जूआ, द्रौपदीके ५ पति, और यादवोंका मद्यपान इत्यादिभी धर्महोनाचाहिये ॥

इसलियेही "चोदनालक्षणोऽर्थोधर्मः" पूर्वमीमांसा अ० १ सू० २ ॥ जिसकी वेदशास्त्रमें कर्तव्यताहो और अनर्थको उत्पन्न न करे उसको धर्म कहतेहैं जैमिनिजीने धर्मका लक्षण ऐसा कियाहै इसलिये मांस को खाना पाप जनकहोनेसे क्षत्रियोंके वास्तेभी अच्छा नहीं होगा ॥

आस्तिक०—हेमित्र—ऐसे २ असत्यपूर्वपक्ष और असत्यही उत्तरपक्ष बनाकर क्यों धोखादेतेहो ॥

यद्यपि भगवद्गीतामें मांसके खाने वा न खानेका कोई प्रसंगही नहींहै तथापि—देखो प्रमाणांक ३१ आदिक मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृतिआदिकों में विहितमांसखानेमें निर्दोषता स्पष्टकहीहै ब्राह्मणक्षत्रियादि सबवर्णोंकेलिये मांसखानेमेंभी बहुतप्रमाण दिखाचुकाहूं और देखो प्रमाणांक ८१ आदिक मनुस्मृति व्यासस्मृति वसिष्टस्मृतिआदिकोंमेंभी विहितमांसके नहीं खानेसे अनर्थकी प्राप्ति कहीहै इस्से सबवर्णोंके लिये विहितमांसका खाना अवश्य अपेक्षितहै ॥

इतिहासग्रन्थकी यदि सबबात माननीय नहीं होसकी तोभी उनमें जो रामकृष्णादिअवतारोंके और व्यासादिमहर्षियोंके वाक्य और आचार आवें वो वो आस्तिकपुरुषोंसे अमाननीयभी नहींहोसक्ते ॥

और तुम आप भी' अग्नीषोमीयं पशुमालभेत, यिह वेदप्रमाण लिखचुके हो तोफिर नास्तिकताको क्यों नहींछोड़ते ॥

जैमिनिजीने धर्मका लक्षण ठीककराहै कि—चोदनालक्षणोऽऽ

थोधर्मः ॥ अर्थ—क्रियाके प्रवर्त्तक वचनका नाम चोदनाहै उसीको प्रेरणा और विधिवचन कहतेहैं उससे जो लखनेमें आवे अर्थ सो धर्महै अर्थात् श्रुतिस्मृतियोंके विधिवचनकर विहितक्रियासे उत्पन्नहोनेवाला धर्महै ॥

अजशशहरिणआदिकोंके बलिदानमें और विहितमांसके खानेमें श्रुतिस्मृतिआदिकोंके बहुतही विधिवचन दिखलायचुकाहूं और उसही अर्थमें शिष्टाचाररूप दृष्टान्तभी लिखचुकाहूं अतः जैमिनि- कृत जो धर्मका लक्षणहै उसके अनुकूलही विहितमांसका भक्षणहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—जिसने मच्छीको खाया उसने सबकुछ खाया मच्छी नदीमें पड़े कुत्ते बिल्ले मनुष्य गौभैंस गधा सूकरआदिअनेकजीवोंके मांसको खातीहै फिर उसको तुम खाओगे तो बताओ कि- तुमने क्या नहींखाया और उसके खानेमें अनेकरोगोंका होनाभी सम्भवहै क्योंकि मच्छीने कोढ़ेड और मडेके शरीरको खाया तुम उसको खागए फिर फल क्याहोगा ॥

आस्तिक—जितने कुत्ते बिल्लिआदिकोंको मच्छी खालेतीहै उनसे बहुत गुणाअधिक सबको पृथिवी हजमकरलेतीहै अर्थात कुत्ते बिल्ले गौ भैंस गधा सूकर चूहे किरली वानरआदि सबजीवोंके करंग अस्थि टूटाफटा जूताऽऽदिक कोढेडमडेशरीर जो कुछ पृथिवीमें पड़ताहै उन सबको पृथिवी हजम करलेतीहै—

बहुत क्या—उनके और कुत्ते बिल्ले गौ भैंस मनुष्य गधा खच्चर घोड़ा भेडबकराऽऽदिकोंके ,मल, खात पृथिवीमें पडतेहैं उनके जोरसेही अन्नशाक फलआदि पैदा होतेहैं जिनको आपभी खाते हैं तो बताओ कि-अन्नशाकाऽऽदिक शुद्धहै भक्ष्यहै वा नहीं ।

हे भ्रातः—शुद्धाशुद्धके भक्ष्याभक्ष्यके विज्ञानमें शास्त्रही कारणहै अतः जब श्रुतिस्मृतिओंमें मांसको शुद्ध और पांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यकहेहैं तो वो भक्ष्यहीहैं ॥

जिसजातिकी मच्छीमें रोगहो उसको मतखाएं जिसमें हल्केगुणहों उसको खाएं जैसे रोहितमत्स्य ।

भावप्रकाश पृ० ३१३—रोहितः सर्वमत्स्यानां वरोवृष्योऽर्दितार्त्तिजित् ॥ कषायानुरसःस्वादु र्वातघ्नो- नातिपित्तकृत्॥ऊर्द्धजत्रुगतान्रोगान् हन्याद्रोहि- तमुण्डकम् ॥ मांसवर्ग १०० ॥

अर्थ—सब मत्स्यनमें रोहितमत्स्य श्रेष्ठहै, वीर्य्यवर्धकहै पीडितजनोंकी पीडाको दूरकरेहै इसका रस स्वादुहै वातनाशकहै अधिकपित्त को नहीं कर्ता, रोहितमत्स्यका शिर ग्रीवाके ऊर्ध्वहोनेवाले रोगोंको नाशकरेहै ॥

—o—

अथर्ववेदसंहिताके तृतीयकाण्डमें तृतीयअनुवाकका सायणभाष्य पृ० ३१४

मुञ्चामित्वा इतिप्रथमसूक्तेन बालग्रहरोगे नि- रन्तरस्त्रीसंगतिजनित यक्ष्मणिच पूतिगन्ध- मत्स्यसहितम् ओदन मभिमन्त्र्य भोजनकाले व्याधितम् आशयेत ॥

अर्थ—बालग्रहरोगमें और निरन्तर स्त्रीसंगतिसें उत्पन्नहुए, यक्ष्म- तपादिकमें पवित्र गन्धवाले मत्स्यसहित भातको ' मुञ्चामित्वा ' इस प्रथम सूक्तसें आभिमंत्रितकरके भोजनकालमें रोगी को खुलाए ॥

पूर्वपक्षी०—चिड़ी कबूतर बटेरा तोताऽऽदिपक्षी भी हमारी जैसी ज्ञान रखतेहैं हमारे प्राणोंमें और उनके प्राणोंमें कुछभी भेद नहींहै, सबही मरणेसे भय मानतेहैं विष्ठाके कीटसेलेकर इन्द्रतक सबको जीनेकी आशा और मरणे का भय समानहै ॥

आस्तिक०—ठीकहै परन्तु वर्षाऋतुमें गेहुंचनाऽऽदिकोंमें सुसरी घुण-आदिजीव पैदाहोनेसे धूपमें फैला यके उनहजारोंजीवोंको प्राणान्तकष्ट क्यों दियाजाताहै और औषधोंकर कृपकृमि मलकृमि व्रणकृमि दद्रुआदिरोगकृमि इत्यादिक लाखोंजीवोंका क्षय क्यों कराजाताहै ॥

पूर्वपक्षी०—सुसरीघुणआदिजीव नहींनिकालें तो गेहुंआदिअन्नोंके नष्टहोनेकर मनुष्यनका हरजाहोताहै औषधोंकर कृपकृमि मलकृमि रुधिरकृमि रोगकृमिओंका नाश नहींकरें तो बीमारीसे मनुष्य अतिदुःखपातेहैं फिर मरतेहैं।

फीनैलादि औषधोंकर व्रणकृमिओंका विनाश नहींकरें तो गौ भैंस घोडामनुष्यादिकोंका नाशहोताहै, इस्से उनक्षुद्रजीवोंका क्षयकरना अव-श्यंअपेक्षितहै ।

आस्तिक०—हेमित्र गौ भैंस मनुष्य एकएकजीवकेलिये हजारोंजीवोंका क्षयकरना क्यों आवश्यकहोसक्ताहै ॥

पूर्वपक्षी०—इसका येही उत्तर संभवेहै कि, श्रेष्ठजीवोंकी रक्षालिये निकृष्टजीवोंका विनाश अवश्यंअपेक्षित होसक्ताहै, जैसे आम्रआदिक श्रेष्ठ वृक्षोंकी रक्षालिये अर्थात् वाड़करनेकेवास्ते झाड़िओंका काटना अवश्यं अपेक्षितहै, ऐसेही गौ भैंस मनुष्यादिश्रेष्ठजीवोंमें एकएककीभी रक्षालिये औषधोंकर हजारों व्रणकृमिओंका कृपकृमि मलकृमि रुधिरकृमि रोगकृमिओं का विनाश अवश्यंअपेक्षितहै, वो धर्मनिष्ठ योग्यबुद्धिमान्पुरुषभी करतेहीहैं

—०—

आस्तिक०—तुम्हारे कथनमेंभी जैसे सर्वजीवसमान नहींहैं वैसे सर्व जीवोंका जीवन मरणभी समान नहीं है क्योंकि, अपनी बुद्धिकी वृद्धिसें और शुद्धिसें मनुष्य तो परमात्मापर्य्यन्त अतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्षकर्के मुक्तिपर्य्यन्त अतिमहाकार्य्योंकोभी सिद्धकरसक्ताहै, जिसमोक्षमार्ग में चक्रवर्तीराज्य दिव्यभोग और अणिमामहिमाऽऽदिक सिद्धिओंभी शास्त्रकारोंने विघ्नरूपकहींहैं, ऐसा परमलाभदायक मनुष्यका जीवन होसक्ताहै ॥

और भेडबकरातितिरआदिक पशुपक्षिओंका जीवन ऐसा लाभदायक नहीं होसक्ता, किन्तु उन पशुपक्षिओंका जीवन अतिनिकृष्टखानपानआदि मात्रका हेतुहै ॥

सर्वजीवोंका मरणभी समान नहींहै, क्योंकि, प्रथमतो जहां मनुष्योंमें कालडाऽऽदि बीमारी पडती है, वहां मनुष्योंके हृदय बीमारीमें भयकर कंपित रहतेहैं, और जहां पशुओंमे बीमारीपडतीहै वहां पशुओंको उसबीमारीमें भयनहींहोता, क्योंकि तमोगुणकी अधिकता से पशुओंको विशेष ज्ञान नहीं होसक्ता ॥

जब कोई मनुष्य मरताहै, तो उसके स्त्री पुत्र कन्या माता पिता माता मह पितामह सासु ससुर प्रिय भृत्य मित्र भ्राताऽऽदिक अनेक सम्बन्धीओं को दुःख होताहै, और केईसम्बन्धी बीमार होजातेहैं परन्तु पशुओं में ऐसे नहीं होता ॥

इसप्रकार जैसे सर्वजीव समाननहींहैं वैसेही सर्वजीवोंके जीवन मरण भी समान नहीं होसक्ते ॥

पूर्वपक्षी०—मरणदुःख तो सबजीवोंको बराबरही होताहै अतः पशु पक्षिओंको ऐसा कष्टदेना कैसे युक्त होसकेहै ॥

आस्तिक०— असिप्रहारसें दो मिनट दुःख होताहीहै, परन्तु बीमारीसें

मरणकर कईदिनदुःख,देखनेपड़ेहैं इस्से थोड़े मरणदुःखको देखकर विधि विहितकर्मसें संकोच करना युक्तनहींहोसक्ता क्योंकि, विधानकरनेवाले सर्वज्ञ पुरुषों के दीर्घविचारको तुम झटिति नहीं समझ सक्ते ॥

पूर्वपक्षी०—कहाहै कि, यदि मरते हुएजीवको कोई एक करोड़ अशर्फी दे, दूसरा जीवन दे तो वह अशर्फीओंको न लेकर जीनामांगेगा।

आस्तिक०—भेडबकराऽऽदिकोंके बलिदानमें यिह तुम्हारा अशर्फीओं का कथन अयुक्तहीहै क्योंकि, भेडबकरादिकोंके आगे एकतर्फलाखों अशर्फी धरें दूसरीतर्फ झाड़ीकेकांटेवालेपत्र धरें तो वो अशर्फीको नहीं देखेंगे किन्तु पत्र तृणोंकोही ग्रहण करेंगे ॥

यद्यपि सबजीव मरणमें भय और जीवनकी इच्छा रखतेहैं तथापि उनके भयको इच्छाको न देखकर, योग्यपुरुषोंको, यथायोग्यकार्य्य, करनेही योग्यहोतेहैं जैसे हलगाडीआदिकोंमें जोतेहुए बैलआदिकोंकी, खुलेरहने की इच्छाको, और दण्डप्रहारके भयको न देखकर बलात्कारसें जुतवाए वा जोतेहुए बैलआदिकोंको दण्डप्रहार कर चलवातेहैं चलातेहैं ॥

जैसे गहूंचनाऽऽदिकोंके सुसरीआदिजीवोंकी, वहां गहूंचनाऽऽदिकोंमेंही रहनेकी इच्छाको, मरणभयको न देखकर जैनीभाईजीभी तथा होरयोग्य पुरुषभी, गहूंचनाऽऽदिकोंको धूपमें फैलायके उनजीवोंको निकाल देतेहैं, उस्से उन हजारोंजीवोंका क्षय कर देतेहैं, ॥

जैसे—व्रणकृमि कूपकृमि मलकृमि रुधिरकृमि रोगकृमि इत्यादिक जीवोंकेभी, मरणभयको जीवनेकी इच्छाको न देखकर, योग्यधर्मात्मा पुरुषभी फीनैलआदि नानाऔषधोंकर उनजीवोंका क्षय करतेहीहैं ॥

—०—

यदि जैनीसाधुकहेंकि,–नांतो हम बैलआदिकोंको जोततेहैं नांहीजोतनेकी आज्ञादेतेहैं, और नां हम अन्नको पीसतेपकातेहैं, व नांही पीसनेपकानेकी आज्ञादेतेहैं, इस्सें हम दोषभागीनहींहोसक्ते, किन्तु हलचलानेवाले, पीसने पकानेवालोंको, पाप लगताहै तो—

हेमित्र—उनसाधुओंका, ऐसा कथन, हासगोचरहीहै, ऐसें कहनेवाले साधुओंको, लज्जा क्योंनहींआती क्योंकि, अतियत्नसें अन्नको पैदा करके, फिर पीसपकायकर देनेवाले, तो पापभागी, और पक्केपकाएको निर्यत्न मुफत सें खानेवाले हम दोषभागी नहीं होसक्ते, ऐसा कथन स्पष्टलज्जाका हेतुहै॥

—०—

पूर्वपक्षी०–भला आस्तिकजी, कभी पक्षिओं वा पशुओंने आपके पास ऐसी प्रार्थनाकीहै कि, आपलोग हमको मारकर हमारे शरीरका आहार करो क्योंकि, हम इसशरीरमें बहुतदुःखीहैं प्रत्युत यदिकोई उनको पकडे तो यथाशक्ति अपने प्राणोंकी रक्षाकेलिए यत्न कियाकरतेहैं इसलिये जहांतकहो तनमनधनसें अनाथदीनजीवोंकी रक्षाकियाकरो॥

आस्तिक०—भला नास्तिकजी–कटरी बर्छीआदिकोंनेभी कभी आपसें कहाहै कि–हमको बलात्कारसें खेंचकर बांधके तुम दुग्धको दोहलेवो और व्रणकृमि कूपकृमि रोगकृमि गेहुंचनाऽऽदिकोंके कृमि, इत्यादिकजीवोंनेभी कभी आपकेपास प्रार्थनाकीहै कि,–आप हमको निकालदें मारदें॥

बहुत क्या, कभी कहीं पशुपक्षीओंनेभी मनुष्योंसें बातचीत वा प्रार्थनाकीहै, जो तुम ऐसे २ प्रश्न उठातेहो॥

तोभीदेखो महाभारत अ० ३१५——उपातिष्ठन्तपशवः, स्वयंतंसंशितव्रतम्॥ ग्राम्यारण्यामहात्मानं, रन्तिदेवंयशस्विनम्॥ १२॥ २६॥ १२२॥

इसपर नीलकंठी टीका प्र० ३१६—पितृकार्य्येमांनियोज-य२ इति ॥

महाभारत प्र० ३१७—महानदीचर्मराशे, रुत्क्लेदात्ससृजेयतः ॥ ततश्चर्मण्वतीत्येवं, विख्याता-सामहानदी ॥ १२३ ॥

इसकी टीका प्र० ३१८—तेषांमारितानांपशूनां चर्म-राशेः उत्क्लेदात्सारद्रवात् ॥

अर्थ—सम्यकव्रतवाले उसयशस्वी रन्तिदेवमहाराजाके समीप, आपही ग्राम्य और जंगलीपशु "पितरोंके कार्य्यमें मुझे लगावो २,, इसअभिप्रायसें उपस्थितहोतेरहे ॥ १२२ ॥ मारेहुए उनपशुओंके चर्मनके पुंजसें, जो सार द्रवाथा उससें महानदीहुई, इस्सें वो महानदी 'चर्मण्वती, ऐसे-नामसें विख्यातहुई ॥ १२३ ॥

यद्यपि—तनमनधनसें खानपानऔषधादिकोंको देकर, एकजीवकी रक्षाकरें, तो अनेकहजारों क्षुद्रजीवोंकी, हिंसाहोतीहै तथापि क्षुद्रजीवोंकी उपेक्षाकरकेभी श्रेष्ठजीवोंकी रक्षाकरनीयोग्यहै धर्मात्मायोग्यपुरुष करतेहीहैं ॥

पूर्वपक्षी०—भूख प्यासलगाना प्राणवृत्तिहै इनप्राणोंकी आवश्यकता चने बनकेशाकफलआदिसेंभी पूरीहोसकतीहै, पर चने नहींचाहिये इसके स्थानमें लड्डूहो पेडाहो मांसहो, ऐसी २ इच्छाका होना मनका कामहै, और इसका रोकनाही हमारा कामहै, श्रीशंकराचार्य्यजी कहतेहैं कि यह

मनही, मुक्ति और बन्धका कारणहै इसलिये जहांतक होसके हमें मनका दास नहींहोनाचाहिये ॥

आस्तिक०—तुम क्या चने चनेके शाकादिकोंमें निर्वाहकर्तेहो, वा नौकरीआदिककेभी खीरआदिभोजन उडातेहो, हेमित्र चने चनेके शाका-दिकोंमें निर्वाह करना क्या गरीबोंका वानप्रस्थोंका संन्यासीओंका धर्महै, अथवा भाग्यवान् गृहस्थनका धर्महै, देखो प्रमाणांक ६५ और १८४ आदिकोंमें श्रीशंकराचार्य्योंने पशुयागका मांसखानेका गृहस्थोंकेलिये स्पष्टविधान कराहै ॥

हेभ्रातः—श्रुतिस्मृतिओंसे विरुद्ध चलनाही, मनका दासहोनाहै

पूर्वपक्षी०—यदि आप कहें कि—जब आप दूधपीते, हवामें श्वासलेते और जल पीतेहैं, तो इनमें शतशः जीव मरतेहैं, तो फिर आप अहिंसाका झंडा कैसे उठाए फिरतेहो, तो यह आपकी दलील तुच्छहै क्या हम थोडेदोषसे न बचसकें तो क्या सारादोष शिरपर उठालियाकरें ॥

क्या चूहोंसे अन्न नहीं बचासकें तो चोरोंसेभी अन्नकी रक्षा न करें, यदि चलते फिरते वस्त्र मैले होतेहैं तो क्या वस्त्रोंपर और कीचड लगा-लेना चाहिये ॥

जिनजीवोंकी हिंसा यत्नकरनेपरभी नहीं रुकसक्ती उसकेलिए प्रायश्चित्तरूप नित्यकर्मसन्ध्यादि, कियेजातेहैं, और अपरिहार्य्य नित्यकी-हिंसादोषके हटानेवास्ते मनुजीनें प्रायश्चित्तरूप पंचमहायज्ञोंका करनाभी गृहस्थीकेलिये नित्यका विधानकियाहै ॥

आस्तिक०—दूधवायु जलपानसे जो असंख्यजीवोंकी हिंसाहोतीहैं, वह अविहितहिंसाहै वृथाहिंसाहै, अतः उनका प्रायश्चित्तकरना ठीकहीहै, परन्तु जो अजशशहरिणादिकोंकी विहितहिंसाहै वह देखो प्रमाणांक ४६

आदिकोंमें अहिंसारूपही मानीहैं, अतः उनविहितहिंसामें दोष नहीं होसक्ता' प्रत्युत देखो प्रमाणांक ६९ आदिकोंमें विहितहिंसाका दोनोंको श्रेष्ठगतिकी प्राप्तिरूपश्रेष्ठफलही दिखलायाहै, तो तुम क्यों नास्तिकतामें श्रुतिस्मृतिओंके मतको बदलतेहो ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—यदि आप कहो कि-इनबकराऽऽदिपशुपक्षीओंने मरना तो अवश्यहीहै, तो फिर हमनें कुछ मारदिये तो क्या हानिहै सच पूछो तो हम ईश्वरका काम करतेहैं, तो यह कथनभी समीचीन नहीं क्योंकि-क्या आपने नहींमरना तो आपको पहिलेही यदि सिंहादि मारनेको उद्यत-होवे तो क्यों घबरातेहो ॥

आस्तिक--यिह पूर्वपक्ष तथा उत्तर पक्ष भी समीचीननहीं, क्योंकि-सर्वशक्तिमान्परमेश्वरका काम स्वल्पशक्तिमान्जीव करही नहींसक्ता, किंतु परमन्यायकारी सर्वकर्मफलप्रदाता परमेश्वरका काम परमेश्वरही करसक्ताहै।

आस्तिकपुरुष श्रुतिस्मृतिओंकी आज्ञाका पालनकरतेहैं इस्से उनकी कुछहानि नहींहोसक्ती, किंतु उनको लाभही होताहै ॥

और सिंहसर्पादिक मारणेको उद्यतहो तो घबराना युक्तहीहै, क्योंकि-ऐसामृत्यु अपमृत्युहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—तुम भलीभांत सोचलो कि-सारीसृष्टिही परमात्माकी लीलामात्रहै, जैसे बालकके लीलाकेवास्ते बनाएहुए मट्टीके घोडेऽऽदिकों-को, कोई तोडदे तो बालकके मनको अतिदुःखहोताहै, यदि बालक अपने आप तोडदे तो कुछभी खेद नहीं मानता इसीप्रकार परमात्माभी अपनी-लीलाकेलिये बनाएहुए पशुपक्षीआदिक शरीरके नाशकरनेमें अतिक्रोधही-

नहीं करता किंतु नाशकर्ताको नरकमेंभी डालताहै, एवं माली अपनेलगाए बागमें किसीभी वृक्षके उखाडनेवालेपर कभीभी प्रसन्ननहींहोता, इसीप्रकार अपनेलगाएहुए संसारवनके पशुआदिवृक्षके नाशकरनेवालेसे परमात्मास्वरूपमाली कदापि प्रसन्न नहीं होता ॥

आस्तिक०—हेमित्र–बालक तो अतिमूढ अज्ञानी होताहै, और ईश्वर नित्यतृप्तप्रसन्न सर्वज्ञहै, अतः ईश्वरमें बालकका दृष्टान्तदेना योग्य नहींहोसक्ता, फिर "इसको तोडदे" ऐसे बालकके कहनेसे, यदि कोई बालकके खिलोनेको तोडदे, तो बालकके मनको दुःख नहीं किंतु हर्षहोताहै, ऐसेही परमेश्वरकी पशुबलिदानविषयक और विहितमांसभक्षणविषयक श्रुतिस्मृतिरूप आज्ञाहै, इससे परमेश्वर क्रोध नहीं किंतु अपनीआज्ञाके पालनकरनेवालेको श्रेष्ठफलही देताहै

और मालीभी अपनेबागमें श्रेष्ठश्रेष्ठपेडोंके उखाडने वालेपर प्रसन्न नहींहोता परन्तु जिनजिन घासबूटीभंग पनवाडआदिक निकृष्टपेडोंके उखाडनेकर, वो आम्रलीचीआदिउत्तम २ पेड पलतेहैं पुष्टहोतेहैं उनउनके निकालनेलिये उखाडनेलिये तो अपनेकाम्योंको वो माली आप आज्ञादेताहै उनउनके उखाडनेसें प्रसन्नहोताहै, अधिकउखाडनेवाले काम्योंको इनाम देताहै ऐसेही श्रेष्ठजीवोंकेलिये जिनजिन अजशशहरिणादिकोंके बलिदानकी श्रुतिस्मृतिओंद्वारा ईश्वरने आज्ञादीहै, उनउनके बलिदानकर अर्थात् आज्ञाके पालनकर परमेश्वर प्रसन्नहोताहै, देखो प्रमाणाक ६८ और ५६ और ७५ को श्रेष्ठफल देताहै, ॥

परमेश्वरकी आज्ञाके न पालनकर परमेश्वर नरकमें डालताहै जैसे प्रमाणांक ८३ में वसिष्टजीने कहाहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—सच पूछो तो जिनपशुओंको तुम मारतेहो वह तुम्हारे से भी ईश्वरको अधिक प्यारेहैं क्योंकि—वह दुर्बल और अपनेहिताहितके सोचनेकी शक्तिसे रहितहैं ।

जैसे माता उसबालकसे विशेषप्रेमकरतीहै जो अपनेआप कुछ नहीं करसकता, यह बात पशुआदिमें पाईजातीहै ॥

और बडीबात यहहै कि—यह प्रभुकी आज्ञामें रहतेहैं अर्थात् सृष्टिके आरम्भसे लेकर परमात्माने जो २ नियम इनकेलिये बान्धदियाहै उस २ को यह कभी नहीं छोडते जैसे इनका स्त्रीभोग वर्षमें एकवार रुचि प्रायः सन्तानार्थहीहोतीहै मांसाहारी मांसपरही रखतेहैं एवं घासाहारीपशु घासपर प्रेमवाले देखनेमें आतेहैं इसलिये यह प्रभुके जैसे प्रीतिपात्रहैं, मनुष्य वैसे नहींहैं अर्थात् यहमनुष्य नियम तोडकर फलमांसादि सबवस्तु खानाचाहतेहैं, इसलिये प्रभुके भयसेभी इन पशुआदिकी रक्षाकरनीचाहिये ॥

आस्तिक०—वाह आपकी विद्वत्ता, जिससे आप मनुष्योंसे पशुओंको ईश्वरके अधिकप्यारे ईश्वरके अधिकप्रीतिपात्र कहतेहो ॥

हेमित्र – कहो तो, जिनपर ईश्वरकी अधिकप्रीति होतीहै, वो क्या अपने हिताहितके सोचनेकी शक्तिसे रहित मूढहोतेहैं, जिनपर ईश्वरकी अधिकप्रीतिहोतीहै, वो क्या मनुष्योंके बन्धनमें पडजातेहैं, वा वनमें दिन रात्रि भयसे व्याप्त रहतेहैं, जिनपर ईश्वरकी अधिकप्रीति होतीहै वो क्या खान पानमेंभी दीन होजातेहैं ॥

जिनपर ईश्वरकी अधिकप्रीतिहोतीहै, उनपर क्या चाबुक प्रहार लाठीप्रहार मनुष्य करसक्तेहैं ॥

जिनपर ईश्वरकी अधिकप्रीतिहोतीहै, उनकी क्या वर्षाऋतुमें माखे मच्छर डंगीआदिकोंसे दुर्दशाहोसक्तीहै ।

जिनपर परमात्माकी अधिकप्रीतिहोतीहै, उनका क्या पत्रघासआदिक अतिनिकृष्ट तामसआहार होसक्ताहै।

इत्यादिक अनेकदुर्दशा ईश्वरके कोपसे हो तीहैं हेवाल ईश्वरकी प्रीतिसें ऐसीदुर्दशा नहींहोसक्ती परमेश्वरकी अधिकप्रीतिसें तो, हिताहितका सम्यक्ज्ञान, निर्बन्धनता, निरंकुशता, निर्भयता, धर्मनिष्ठश्रीमानोंके घरमें जन्म, धर्ममें निष्ठा, सात्विकआहारमें रुचि, इत्यादिशुभलक्षणहोतेहैं, बालकों-की माता तो अज्ञानमें रागद्वेषादिकोंमें ग्रस्तहै अतः समदर्शी नहींहै तुच्छशक्तिवालीहै, और परमेश्वर तो अज्ञानरागद्वेषादिकोंमें रहितहै सर्व-शक्तिमान परमन्यायकारी समदर्शी सत्यसंकल्पहै, वह परमेश्वर जिस २ जीवपर प्रीतिकरे वोवोजीव उच्चपदको प्राप्त होताहै, वो २ जीव पशुओंकी न्याई दुर्दशाको नहींप्राप्तहोसक्ता ॥

होरजो तुमने कहा कि—परमात्माने जो २ नियम इनपशुओंके लिये बांधदियाहै, उस २ को यह कभी नहींछोडते और मनुष्य नियम तोडकर फलमांसादि सबवस्तु खाना चाहतेहैं, यिह तुमारा कथनभी ईश्वरके लक्षणके अज्ञानसेंहै अतः असत्यहीहै, क्योंकि परमेश्वर तो सर्वशक्तिमान् सत्यसंकल्पहीहोताहै इस्से ईश्वरके नियमको ब्रह्मा बृहस्पतिइन्द्रादिक देव-ताभी, तोड नहींसक्ते तो मनुष्यनकी क्या शक्तिहै ॥

हेमित्र—ईश्वरने अपने नियम तुम्हारे कानोंमें तो सुनाएहीनहीं, किंतु ईश्वरके नियम कार्योंसें जानेजासक्तेहैं ॥

और इनपशुओंका स्त्रीभोग वर्षमें एकवार रुचि प्रायः सन्तानार्थ ही-होतीहै" यिहतुमाराकथनभी असत्यहीहै क्योंकि नरपशु तो स्त्रीपशुओंके पीछेपीछे हररोज फिरते, दोलत्तोंकाप्रहार खातेर नित्य हररोज केईवार टपोसीलगाते देखनेमें आतेहैं, नरपशुओंकी संतानमें कुछप्रीतिभी देखनेमें

नहींआती, प्रत्युत मार्जारआदिकपशु बच्चेओंके विरोधी होतेहैं, स्त्रीपशुओं-कीभी सन्तानोंमें जबतक दूध पीताहै तबतकही प्रीतिहोतीहै और सर्पिणी-आदि अपने बच्चेओंको आपही खालेतीहै ॥

ईश्वरातः-सिंहादिपशु मांसाहारीहीहैं, और मार्जार श्वानआदिपशु मांसकोभी अन्नदधिदुग्धकोभी खातेहैं, शृगाल गीदडआदिपशु मांसकोभी घासकोभी खातेहैं, काकचिडीआदिपक्षी मांसकोभी अन्नदधिदुग्धकोभी खातेहैं, और गरुडभगवानआदिपक्षी केवलमांसकोही खातेहैं, और मनुष्य मांसकोभी अन्नदुग्धघृतादिकोंभी पहिलेसेही खातेआएहैं, एवं जिन-जिनजीवोंलिये जिसजिसआहारका परमेश्वरने नियम बांधाहै उसउसनि-यमको देवताअसुरमनुष्योंमें कोईभी तोड नहींसक्ता ॥

शंका-यद्यपि-भूतलमें मांसाहारी मनुष्य बहुतहींहैं तथापि बहुतमनुष्य मांसको नहींभीखाते तो ईश्वरका नियम कैसेरहा समाधान=ईश्वरका नियम टूटनहींसक्ता क्योंकि-परमेश्वरने मनुष्योंकेलिये अधिकारभेदसें और अदृष्टोंकेभेदसे अन्नादि और मांस दोनोंआहार बनाएहै देखो प्रमाणांक ३१२ में विदुर जीनेभी कहाहै ॥

और मनुष्यनोलिये तो विहितमांसके खानेकी ईश्वरने श्रुतिस्मृतिरूप आज्ञादीहुईहै, अतः ईश्वरकी आज्ञाभंगके भयसेंभी गृहस्थजनोंनें विहितमांस-को अवश्य खानाचाहिये ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—जो तुमने कहा कि हम ईश्वरका काम करतेहैं तो क्या तुमको ईश्वरने इसकाममें लगायाहै, जब कि यह जन्ममरणका चक्र अपने अपने कर्मोंका फलहै अर्थात् परमात्माकी इच्छासें अपने अपने कर्मोंके वशही जीव शुभ वा अशुभशरीरको प्राप्तहोताहै, और त्याग-

ताहै तोफिर तुम्हारी क्या शक्तिहै कि-तुम परमात्माके नियममें हस्तक्षेप, दखलदो, क्या ईश्वरसें यह काम नहींहोसक्ता कि-जिसमें परमात्मानें तुमको अपना सहायक बनाया ॥

आस्तिक०—कह चुकाहुं कि—सर्वशक्तिमान्परमेश्वरका काम स्वल्पशक्तिमान्जीव नहींकरसक्ता ॥

हेमित्र—यद्यपि-विशेषकाममें अधिकारीजनको ईश्वरही लगाताहै तथापि तुम्हने आपही कहाहै कि-परमात्माकी इच्छासें अपने २ कर्मोंके वशहीजीव शुभ वा अशुभशरीरको प्राप्तहोताहै और त्यागताहै,, तोफिर तुमको यिहविचार नहींहोसका कि-श्रुतिस्मृतिरूप परमेश्वरकी आज्ञासें पशुबलिदानकरनेवालेका क्या दोषहै प्रत्युत, ईश्वरकी आज्ञा का पालनहै—ईश्वरके संकल्पमात्रमें सर्वकार्य्य होतेहैं परमात्माको किसीसहायककी अपेक्षानहीं और परमात्माका कोईसहायक हैभीनहीं, और होभीनहींसकता

—०—

पूर्वपक्षी०-यदि कहो कि, हम इनको इस दुःखमय योनिसें छुड़ातेहैं तो यह क्यों जिह्वाकेस्वादके वशमें होकर झूठीबातें बनातेहो यदि यही प्रयोजनहोतातो इनके मांसको हड़प न करजाते फिरतो चीनियोंकी तरह कुत्ताबिल्ली मेंडक छिपकलीआदिकोंभी मार २ कर क्यों नीचयोनि सें न छुड़ाते ॥

आस्तिक०—कुत्ताबिल्लीमेंडक छिपकलीआदिक जीवतो श्रुतिस्मृतिओं में भक्ष्यनहीं कहेहैं किन्तु पंचनखवालोंमें 'सेह गोह गेंडा कूर्म शश' यिह पांचही भक्ष्यकहेहैं इस्सें आस्तिकपुरुष बिल्लीकुत्ताऽऽदिकोंका बलिदान नहीं करते, नांही इनके मांसको खातेहैं ॥

हेमित्र—दुःखमययोनिसें छुड़ानेवाला तो परमात्माहै, हम आस्तिकता सें श्रुतिस्मृतिश्रोंके अर्थको प्रकटकर्तेहैं और तुम श्रुतिस्मृतिश्रोंका निरादर कर्तेहो जो इनके अर्थको छिपातेहो—

——:o:——

पूर्वपक्षी०—यह तुमारी भूलहै कि, मनुष्योंके दांत मांसभक्षकजीवोंकी तरहहैं क्योंकि, मनुष्यके दांत न तो मांसभक्षीपशुओंसेंही मिलतेहैं और नांहीं घासभक्षीपशुओंसेंही मिलतेहैं किन्तु इनकी दांतोंकी बनावट ठीक बानरआदि फलाहारीजीवोंके दांतोंमें मिलतीहै और बानर भूखा मरणा स्वीकारकरेगा परन्तु पासपड़ेहुए मांसकीओर ध्यानतक न देगा, और ठीक विचारें तो मांसाहारी सिंहव्याघ्रआदिजीवोंके दांत और नख मनुष्यों सें अत्यन्तभिन्नप्रकारकेहोते हैं उनके दांत ऊंचे तेजछुरीओंकी तरहहोतेहैं और नख लोहेकी तेजमेखोंकी तरह होतेहैं जिसजीवको वह पंजामारतेहैं एकही पंजेमें उसका मांस उखाड़ लेतेहैं और दांतोंसें हड्डीसमेत कच्चेमांसको पीस डालतेहैं और इनकी पाचनशक्ति हड्डीसमेत भस्मकरदेतीहै परन्तु मनुष्योंके दांतोंमें यह सब उपरकही सिंहकेदांतोंकी बातें नहींदेखीजाती फिरभीमनुष्य उनसें मांसमच्छी चबातेहैं इस्सें बढ़कर और क्या मूर्खता होसक्तीहै इससें सिद्धहुआ कि, मनुष्य मांसाहारीजीव नहीं होसक्ता ॥

आस्तिक०—यिह तुम्हारी दांतोंकी कल्पनाभी समीचीननहीं तथाहि कहताहुं सुनिये—

१—मनुष्योंके दांत मांसभक्षीघासभक्षी पशुओंसें मत मिलें क्योंकि मनुष्य पक्कामांसखानेवाले, पशु कच्चामांसखानेवाले परमात्माने बनाएहैं ॥

२—तुमने देखनहीं,—बानरकी दाढ़ें तेजलंबीऊंची कच्चेमांसकेउखाड़ लेनेवालीहोतीहैं और नख भीइनके तेजसीखोंकीतरह होतेहैं, इसीसें जब

आश्विनकार्तिकमासमें यिह मस्तीमेंआयकर आपसमें लड़तेहैं तब बहुत जखमीहोजातेहैं इसीसे रामायणमें वानरोंके दाड़ों और नखरूपशस्त्रवाले विशेषण कहेहैं ॥

तथापि इनकी प्रकृति अधिकमांसखानेकी नहींहै यिहवानर वर्षाऋतुमें पंखोंवाले मकोड़े जूंओंआदिकोंको तो खातेहींहैं ॥

३— सिंहव्याघ्रादिकोंके दांतोंसे नखोंसे और पचानेकी शक्तिसे जो मनुष्योंके दांतोंको नखोंकी असदृशता और पचानेकी शक्ति न्यून तुमने कही सोठीकहै क्योंकि, परमात्माने सिंहादिपशु कच्चामांसखानेवाले रचेहैं इस्से उसके अनुकूलही सिंहादिकोंको दांत व पाचनशक्ति परमेश्वरने दीहै और मनुष्य तो अग्निसे पकाएमांसके खानेवाले बनाएहै अतः पकामांसखाने के अनुकूलही दांत और पाचनशक्ति मनुष्योंको परमेश्वरने दीहै ॥

सिंहव्याघ्रादिक पशुओंके पास छुरीआदिसाधनतो होतेनहीं इससेभी ईश्वरने उनको वैसेही योग्यदांतनख दियेहैं ॥

हेमित्र—तुमने आपही कहाहै कि, मनुष्य मांसमच्छीचबातेहैं, तो मनुष्यनके दांत उनके चबानेयोग्यहै तबीतो मनुष्य चबासक्तेहैं चबातेहैं पचातेहैं, यदि मनुष्यनके मांसमच्छीखानेयोग्य दांत न होतेतो वो कैसे खायसक्ते ॥

जैसे गोत के घासके भुसकेखानेकी पचानेकीशक्ति परमेश्वरनें गौ भैंस आदिकोंको दीहै अतः उनकोतो खासक्तेहै पचासक्तेहैं, और मनुष्यतो गोत घास भुसआदिको न खाएसक्तेहैं, नाहीं पचायसक्तेहैं, ऐसेही यदि पकेमांसके खानेयोग्यदांत और पाचनशक्तिपरमेश्वरनें न दीहोती तो मनुष्य पकेमांसको कैसे खायसक्ते कैसे पचाय सक्ते ॥

४-यदि पकेमांसकेखानेयोग्य दांत मनुष्यनके न बनाएहोते तो वेदसूत्र स्मृतिओंमें मांसखानेका सर्वज्ञपुरुष विधानही कैसे कर सक्तेथे ॥

५--हेभ्रातृजन-जिनजीवों के सिंहादिकोंकी न्यांई दांतहोंवें वो मांसाहारी परमेश्वरने बनाएहैं, और जिनके दांत वैसे नहींहैं वो मांसाहारी नहींबनाए" ऐसा कल्पनाकरा तुमारानियम असत्यहीहै क्योंकि--गीदड़ आदिक मांसको खातेहैं उनके दांत सिंहजैसेतो नहींहै, गरुड़गीधआदिपक्षी केवलमांसाहारी ईश्वरने बनाएहैं उनके दांत हैहीनहीं ॥

और घरोंकेभीतर छत्तोंमें दीवालोंमें जो छिपकली फिरती रहतीहैं उनके दांत सिंह जैसेतो कहां, मनुष्योंजैसेभी नहींहोते, तो भी वो केवल मांसाहारीही ईश्वरने बनाएहैं और छत्तोंमें दीवालोंमें ताकोंमें आलयों में झरोखेरोशनदानोंमें वृक्षादिकोंमें जो लम्बी २ जंघेवाले मकरीनामाजीव मच्छर मक्खीआदिकोंके फंसानेलिये जाल फैलायरखतेहैं वो मांसाहारीही परमेश्वरने बनाएहैं उनके सिंह जैसे दांत कहांहैं नखकहांहैं ॥

और चारपादवालेभी छिपकली, चींटी, मकोड़े, मेंडक आदिजीव, मांसाहारी ईश्वरने बनाएहैं उनकेभी दांत सिंहजैसे कहां मनुष्यजैसेभी नहींहैं ॥

इसमें जिनके दांत, सिंहादिकोंजैसे होवें वोही मांसाहारीजीव परमेश्वरने बनाएहैं" ऐसा तुम्हारा कल्पनाकरानियम असत्य हीहै, श्रुतिस्मृतिओंके अर्थको छिपाकर दुराग्रहसें अन्यथाअर्थ प्रकटकरना इससेंपरे होर क्या मूर्खता होसकतीहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०--यदि आप कहो कि-जीवोंका भोजन जीवही सिद्धहोताहै क्योंकि-सिंहव्याघ्रादिक सबजीवोंको मार २ कर खातेहैं और समुद्रमेंभी बड़ी २ मछलियें छोटी २ मछलियोंको खाकरजीतीहैं, इसीसें जानाजाताहै

कि-प्रकृतिका यहनियमहीहै कि-जीवोंद्वाराही जीव जीवनमेंलाभकरतेहैं तोफिर मनुष्योंको मांसखानेमें क्या दोषहै, तो यह आपका नियम मनुष्यों-पर नहींघटसक्ता क्योंकि-मनुष्य और पशुओंमें बडाभेदहै ॥

आस्तिक०—अपना मनोघड्वित पूर्वपक्ष लिखकर तुम चित्तचाहा उत्तर लिखडालतेहो, देखो नारदप्रभृतिमुनिओंने जीवोंकी जीवही जीविका ऐसेकहीहै

भगवद्भागवत प्र० ३१६—अहस्तानिसहस्तानां, म-पदानिचतुष्पदाम् ॥ फल्गूनितत्रमहतां, जीवो-जीवस्यजीवनम् ॥स्क-१॥अ.१३ ॥४६॥

इसपर श्रीधरस्वामीकी टीका प्र० ३२०—ईश्वरेणविहिता-वृत्तिश्च सर्वतः सुलभेवेत्याह ॥ अहस्तानि पश्वादीनि अपदानि तृणादीनि तत्रतेष्वहस्ता-दिष्वपि फल्गून्यल्पानि जीवनं जीविका ॥

अर्थ जब धृतराष्ट्र गान्धारी विदुरजी हस्तिनापुरसे युधिष्ठिरजीसे चोरीही चलेगये तब, युधिष्ठिरजी अतिशोककर व्याकुल हुए तब नारदजीने आयके कहाकि, सप्तस्रोतः गंगातटपर धृतराष्ट्रजीहैं तू शोकको त्यागदे उनकी जीविकाके निमित्तभी शोकमतकर क्योंकि, ईश्वरने सर्वतरहै सुलभही जीविका कीहुईहै—जैसे ‘हाथवालोंकी मनुष्योंकी हाथरहितहरिणादिपशु जीविकाहै ॥

और चतुष्पाद गौभैसहरिणादिकोंकी घासआदिजीविकाहै उन हस्त रहितजीवोंमें सर्पमेंडकगरुड मत्स्यादि बडेजीवोंकी छोटेजीव जीविकाहै, एवं

जीवकी जीव जीविकाहै यिह नारदजीने कहाहै और प्रमाणांक ३२ में मनुजीनेंभी ऐसेही कहाहै ॥

महाभारत अ०३२१ सत्त्वैःसत्त्वानिजीवन्ति बहुधाद्विजसत्तम । ३॥ २०८ ॥ २८ ॥ अर्थ- हेब्राह्मण बहुधा जीवोंमें जीव जीवतेहैं ॥

यदि आप कहो कि-जो मनुष्य मांसको नहींखाते उनका तो जीवना जीवोंमेंविना होसक्ताहै, तो यिहकथनभी अयुक्तहीहै, क्योंकि- मनुष्य जो कूपआदिकोंका शुद्धजल पीतेहैं उसमेंभी अतिसूक्ष्मजीव असंख्यहोतेहैं वो वस्त्रमेंभी छनजातेहैं सो खुरदबीनसे देखेजासक्तेहैं, और श्वासलेनेंमेंभी अनेक सूक्ष्मजीव भीतरजाकर मरतेहैं, यदि मनुष्य जलको न पीवे नांही श्वासलेवे तो मनुष्योंका जीवन रहसकेनहीं, यदि जलको पीवे श्वासलेवे तो असंख्यजीव मरतेहैं, इस्से भी कहाहै कि— बहुधा जीवोंमें जीव जीवतेहैं ॥

—०—

पूर्वपक्षी० -- मनुष्योंका मांसाहारीजीवोंसें आकृति, शकलमें कितनाभेदहै शेरआदिको देखतेही प्राण सूखतेहैं बुद्धि वाणी और स्वभावआदिमेंभी कितनाभेदहै, इसलिये सर्वथा बराबरी न होनेसें मनुष्यकेलिये मांसका आहार हानिकारकहै ॥

आस्तिक०—आकृतिके भेदहोनेसें मांसका निषेध नहींहोसक्ता क्योंकि सिंह व्याघ्र गरुड गीध छिपकलि मकरिआदिजीवोंकी आकृतिका तो भेदहीहै परंतु यिहसब मांसाहारीहैं, ईश्वरनें बनाएहैं ॥ और काक कुत्ता बिल्ला गीदड सर्प मकर मत्स्यादिजीवोंकीभी शकलका तो अतिभेदहीहै, परंतु

यिहसब मांसाहारी परमेश्वरने बनाएहैं, अतः मनुष्योंकीभी आकृतिका भेदहोनेकर मांसाहारका निषेधकहना तो अपनादुराग्रह प्रकटकरनाहै ॥

हार जो तुमनें कहा कि—शेरआदिकोंको देखतेही प्राण सूखतेहैं, तोहेमित्र—मांसाहारसें रहित, बनके भालूको हाथीको देखकरभी तो प्राण सूखतेहैं ॥

और छिपकलि बिल्ली काकआदि मांसाहारीजीवोंके देखनेकर तो प्राण नहींसूखते, बहुत क्या गरुडजीभी केवलमांसाहारीहीहैं उनके दर्शनसें तो पुण्यभी आस्तिकपुरुष मानतेहैं चित्तभी प्रसन्नहोताहै नेत्र भी प्रफुल्लितहोजातेहैं इस्सें सिद्धहोसक्ताहैकि—मांसाहारीजीवोंके देखनेमें प्राण नहींसूखते किंतु अपने प्राणनाशकजीवके देखनेकर प्राण सूखतेहैं वो शेरहो वा भालूहो हाथीहो वा कोईहोरहो ॥

सिंहादिकोंको देखकरभी अधीरपुरुषके प्राण सूखतेहैं, शूरजनोंके प्राण नहींसूखते, प्रत्युत शेरको देखकर अपना शिकार जानतेहुए शूरजनोंको तो हर्षहीहोताहै ॥

पशु और मनुष्योंके बुद्धिवाणीस्वभावादिमेंभी यदि भेद नहींहो तो हेबाल फिर मनुष्योंकोभी पशुही कहनाहोगा आदिगरुडजी जो महर्षिकश्यपके पुत्र विष्णुनारायणके अतिप्रियसदस्यहैं वो मांसाहारीहैं महाबुद्धिमान् मनोहरवाणी अतिसात्त्विकस्वभाववालेभीहैं हेमित्र राजसतामसस्वभाववाला तो विष्णुके समीप पहुंचही नहींसक्ता ॥

यदि मनुष्योंकेलिये मांसका आहार हानिकारकहोता, तो सात्त्विकस्वभाव ब्रह्मर्षि राजर्षि और रामादिअवतार मांसका आहार कभी न करसक्ते ॥

इससे विहितमांसका आहार हानिकारक नहीं, किंतु श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्ध-कथन और आचरण अतिहानिकारकहै ॥

पूर्वपक्षी०—भेदके अनुसारही पशुओंके सदृशव्यवहार मनुष्यके साथ, वा मनुष्य के सदृश सिंहादिपशुके साथ नहींकियाजाता, जैसे सिंहादि दूसरेजीवोंके भोजनको लूट छीन और चुराकर खातेहैं पर वह डाकू और चोर नहींसमझेजाते और नांही किसीदंडके योग्यही गिनेजातेहैं परंतु यदि मनुष्य ऐसाकरे तो दंड पाताहै अतः मनुष्योंकी तुल्यता सिंहादिकोंसें किसीअंशमेंभी नहीं-होती ॥

आस्तिक०—पशुओंके साथ मनुष्यके सदृशव्यवहार न कराजाताहै नांही करनायोग्य होसक्ताहै ॥

सिंह तो किसीके भोजनको लूट छीन वा चुराकर नहींखाता, और जो कुत्ताबिल्लाऽऽदिक लूट छीन चुराकर खातेहैं उनको चोर बिल्ला लुटेरा-बानर, ऐसेकहतेहीहैं ॥ अपराध करनेकर यिह दण्डयोग्यहोतेहीहैं, इसीसे इनको लाठीआदिक प्रहारकर दंड दियाहीजाताहै, सिंहादिकोंकोभी राजे महाराजआदि मारडालतेहैं ॥

जाति आकृति व्यवहारआदिकोंका भेद मांसाहारका बाधक नहींहै, जैसे सिंह गरुड श्वान बिल्ला छिपकली काकआदिकोंका जातिसें आकृतिसें भेदहीहै, और इनसबके साथ व्यवहारभी भिन्नभिन्नही कराजाताहै, तो भी यिहसब मांसाहारीहीहैं,

ऐसेही—सिंहादिकोंका और मनुष्योंका जातिआकृतिव्यवहारादिकों-से भेदहै, उनमें सिंहादिपशु कच्चामांसको और मनुष्य पक्कमांसको खाने-वालेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—देखो मांसाहारीपशु कुत्ताऽऽदिसब पानीको चप २ शब्द्-कर पीतेहैं मनुष्य ऐसा नहींकर्ता ॥

आस्तिक०—जोजो चपचप शब्दकर जिह्वासे जलको पीताहै, वोवो मांसाहारीहोताहै,, ऐसानियम नहीहै क्योंकि भालू, रीछभी चप २ शब्दकर जलको पीताहै वो मांसाहारी नहीहै, और काक गरुड सर्प तथा चारपाद-वाले चींटी छिपकलिआदिक असंख्यजीव मांसाहारीहै वो चप२ शब्दकर जलको नहींपीते, ऐसे बहुत दृष्टान्तोंसे तुम्हारा कल्पनाकरा नियम व्यभि-चारीहै ॥

—— ——

पूर्वपक्षी०——जोजोजीव मांसाहारीहोताहै उनर को पसीना नहीं आता ॥

————

आस्तिक०—यिह नियम नहीहै क्योंकि-सिंहादिकोंमें तुमने परीक्षा नहींकी और यहांभी कुत्ता मांसाहारीहै उसको पसीनाभी आता है ॥

————

पूर्वपक्षी०—बिडालादिमांसाहारी अपने बच्चोंकोभी खाजातेहैं परंतु मनुष्य ऐसाकरनेपर पातकी समझेजातेहैं और दंड पातेहैं क्योंकि-विधि और निषेधके योग्य केवल मनुष्ययोनिहै और नहींहै इस्से सिद्धहुआकि सिंहादिकीन्यांई मनुष्य मांसाहारी नहींहोसक्ता ॥

आस्तिक०—बिडालआदि—ऐसेहीहै तबी तो उनको पशु कहतेहैं, हेमित्र—जब विधिनिषेधके योग्य केवलमनुष्यहैं तो पशुबलिदानमें और विहितमांस-के खानेमें बहुतही विधिवाक्यनको मै दिखलाचुकाहूं, और तुम आपभी "अग्नीषोमीयं पशुमालभेत,, इस वेदके विधिवाक्यको

दिखलाय चुकेहो, तो सिद्धहुआ कि-विधिविहितमांसके खानेवाले मनुष्यहैं, सिंहादिपशुओंकीन्याई अविहितमांसकेखानेवाले मनुष्य नहींहैं ॥

पूर्वपक्षी०—मांसमें स्वादका मानना यह आपकी सर्वथा भूलहै यदि वस्तुतः इसमें स्वादहोता तो कच्चेमांसमें अथवा विनाघीमसालेके पकाकर खानेमेंभी प्रतीतहोता किंतु इसमें स्वाद तुम्हारे डालेहुए घी और मसालाऽऽदिकाहीहै जिसको तुम भूलकर मांसका मानरहेहो, जैसे कोइपुरुष कहे कि — लड्डू मीठाहै, यह उसकी भूलहै लड्डूमें बडाहिस्सा चनेकाहै और चने मीठे नहींहोते अतः मिठास उसमें डालेहुए खंडमेवाऽऽदिकाहै चनेका नहींहै, ऐसाही मांसमेंभी जानो, क्या कभी मांसाहारीसिंहादिजीवोंने मांसके वास्ते आपकी तरह उसकेलिए मसाले घी और पकानेकेवास्ते अग्निकीइच्छाकीहै ॥

आस्तिक०—सिंहादिजीव मांसकेवास्ते घीमसालाअग्निकी इच्छा नहींकरते तो इससे जानाजासक्ताहै कि-कच्चेमांसमेंभी बहुतस्वादहै ॥

और जो तुमने कहाकि-'इसमें, मांसमें स्वाद तुम्हारेडालेहुए घीमसालाऽऽदिकाहीहै, जिसको तुम भूलकर मांसका मानरहेहो, सोयिह तुम्हारा कथनभी दुराग्रह करहीहै अतः अनन्यहीहै' क्योंकि-यदि घीमसालेकाही स्वादहोता, तो मांससेबिना केवल घृतमसालेके खानेकरभी वैसास्वाद प्रतीतहोता, केवल घृतमसालेके खानेसे मांसके स्वादजैसा स्वाद नहींआता अतः घृतमसालेकाही स्वाद नहींहै, किंतु रसज्ञजनोंके मनोंको हरणवाला मांसकाहीस्वादहै, यिह प्रमाणांक ६५ में भीष्मपितामहजीनेंभी स्पष्टकहाहै ॥

हेमित्र—मूली गाजर शलगम दाल गोभी आलू मेथी पालकआदिभी, घी मसाला डालकर पकाए जातेहैं, तो उनका स्वाद पक्कमांसजैसा तो

नहींहोता किंतु घीमसाला डालनेसेंभी उनसबका विलक्षण २ जुदा २ ही स्वादहोताहै, भावयिह मूली गाजर आलू गोभीआदिकोंका जोजोविलक्षण२ स्वादहै उसउसस्वादकी अधिकताका हेतु घृतमसालाऽऽदिकहैं ऐसेही मांसका स्वाद घृतमसालाऽऽदिकोंसें अधिक होजाता है और गुणभी अधिक होजाताहै, सो देखो प्रमाणांक १७७ आदिकों में कहाहीहै ॥

केवलखण्डके खानेकर लड्डुओं का स्वाद नहींआता ऐसेही मांसकाभी अपना स्वाद रसज्ञजनोंको विशेष भास्ता हीहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—जबकि—उत्तम सें उत्तमपदार्थ अनेकप्रकारके आंब अंगूर खण्ड दूध मिलाई रबड़ी दधि माखन घी लड्डू पेड़ाऽऽदिक परमात्मा की कृपासें मिलसकेहैं तो फिर मलमूत्रकेमांडे लहूवीर्य्यके परिणाम कसाई के जलसें दूषित जीवहिंसा और बन्धनसेंउत्पन्न होनेंवाले मांसमें घृणा क्यों नहीं करते ॥

आस्तिक०—मांस आंब अंगूर घृतआदिपदार्थोंकी उत्तमतानिकृष्टता को शुद्धताअशुद्धताको, तुम क्या प्रमाणोंसें सिद्धकरी चाहते हो वा युक्तिओंसें ।

इनमें प्रथमपक्ष तो असत्यहीहै क्योंकि, अजशशहरिणादिकोंके मांसकी अशुद्धतामें अबतक तुमने कोई प्रमाणनहींकहा—हेमित्र-मैं प्रमाणांक १ आदि बहुतहैं प्रमाणादिखलायचुकाहुं उनमें घृत तेल शाककी न्याई मांस को शुद्ध पवित्र कहाहै ॥

और प्रमाणांक ६५ आदिकोंमें १७६ आदिकोंमें मांसके अतिउत्तम गुण वर्णनकरेहैं, और प्रमाणांक १८६ आदिकोंमें और २४२ आदिकोंमें उपनिषद्आदिकोंसें मांसके अतिउत्तमगुण वर्णन होचुकेहैं ॥

यदि द्वितीयपक्षहोतो, वोभीअयुक्तहै क्योंकि, इसकाउत्तर विस्तारसे मैं लिखचुकाहूं संक्षेपसे यिहहै कि—

मलमूत्रके मांडे रक्तवीर्य्यके परिणाम तो तुमभीहो और गुजरांवाला चनोट अमृतसर लाहोर देहली आदि शहरोंमे कुत्तेबिल्लीमनुष्यघोड़ेगधे आदिकोंकाभी जो मैला म्युनिसपलकमेटीद्वारा हजारों रुपयोंका वेचाजाताहै वो सब मैला खेतोंमे बागों मे गेरनेसे बाग और खेत पुष्टतियार होतेहैं उनके फलोंको अन्नशाकादिकोंको तुमभीतो खातेहीहो, रक्तवीर्य्यसे मांसनहीं बनता, रक्तवीर्य्यसेतो बुदबुदामात्र होताहै फिर अन्नके परिपाकसे रसधातु रससे रक्तमांसादि बनतेहैं रसमें ही दुग्ध पैदा होताहै, तो तुम ऐसे अन्नसे फलों से दुग्ध से घृणा क्यों नहीं करते ॥

इत्यादिप्रबलप्रमाणोंसे और युक्तियोंसे मांसकी शुद्धता और गुणोंसे उत्तमता सिद्धहै ॥

पूर्वपक्षी०— शोकहै तुम्हारे इस जिह्वाके रसपर जो आपको विचारसे कोसोंदूर लेगयाहै तुम क्या जानतेहो कि" बकरेके मांसकेपलटेमें कसाई लोग तुमको किस २ जीवका मांसखिलादेतेहैं सुनागयाहै कि कई नगरोंमें कसाईमहेरआदि कुत्तेमनुष्य और गौके मांसकोभी वेचतेहुए पकड़ेगएहैं इसपरभी तुम ऐसे खोटे कर्ममें ग्लानिनहीं करते, भला तुम यदि मांस न लो तो इतने जीव क्यों मारेजावें ॥

आस्तिक०—हेमित्र-श्रुतिस्मृतिओंमें अश्रद्धाकर दुराग्रहके वशीभूत हुए तुम श्रुतिस्मृतिओंके अनुकूल सद्विचारसे शून्य होगएहो ॥

मनुष्यका मांस तो कौन न्यायके वेचसक्ताहै तुमको किसीने झूठही कहदियाहोगा, यदि ऐसे कहीहोतो, उसको अतिदण्ड देकर हाकिम मर्यादा को स्थिर करदेतेहैं ।

हो। और कहीं किसीअभक्ष्यजीवके मांसका संदेहहो तो छोटा २ कटा हुआ मांस मत खरीदो जिस्में संशय नहींहै ॥

हेमित्र- यिह योग्य नहींहोसक्ता कि, ऐसा कहीं कोई संशय होवेतो योग्यभोजनका विहितकर्मोंकाही त्याग करदियाजावे, जैसे प्रसिद्धहीहै इस समय बड़े २ शहरोंमें प्रायः चरबीकाघृत बनाकर बेचाजाताहैतो इतनेसे घृतकेखानेका हवनका अतिथियज्ञका त्यागकरना तो योग्यनहीं होसक्ता किन्तु सम्यक परीक्षा करके चर्बीके घृतको छोड़कर शुद्धघृतका ग्रहण योग्यहै ॥

जिस विधिविहितमांसको रामादिअवतार तथा ब्रह्मर्षिराजर्षि खाते खुलातेरहेहैं उसको खोटा कर्म कौन आस्तिक पुरुष कहसक्ताहै ॥

यदि आप वैदिकमतवाले मांसको नहीं लेंगे तो इतरजनोंकेलिये भेडबकरादि मारेजायेंगे ॥

शंका—तो भी फिर थोड़े मारेजाएंगे ।

समाधान—ऐसे नहीं कहो क्योंकि, जब वैदिकमतवाले नहीं लेंगे तब सस्ताहोनेकर वो गरीबभी मांसको तृप्तिकर खाएंगे जिनको पहिले बहुमूल्यरूपहेतुसे मिल नहीं सक्ताथा परंतु भेडदुम्बाबकराऽऽदिजीव तो इसीकाममें आतेहै व आएंगे ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—जिस स्थानपर दो, एक महात्माओंने उपदेश कराहै वहांपर सहस्रोंमनुष्योंने मांसका खाना त्यागदियाहै अतः नरकमें डालने वाले इसपापकर्मसे आपभी मनको रोको ॥

आस्तिक०—अशास्त्रीयपुरुषोंवा अशास्त्रीय दो साधुओंने अयुक्त

उपदेश करादिया तो, वो माननीय नहीं होसक्ता इसीसें उनमेंभी बहुत पुरुषोंने शास्त्रीयपुरुषोंसें निर्णयकर्के फिर विहितमांसको खानेलगपड़ेहैं॥

यदि तुम कहो कि-शास्त्रीयपुरुषोंकोभी उनोने उपदेश कराहै तो हेमित्र -अशास्त्रीयपुरुषोंकाभी कवी शास्त्रीयपुरुषोंको उपदेश देनेका अधिकार होसक्ताहै॥

जो अशास्त्रीयपुरुषसें उपदेश सुने उसको शास्त्रवेता कौन कहसक्ताहै॥ एकतृतीयसाधु तो यद्यपि शास्त्रीयहै तथापि प्रबलप्रमाणोंको दृष्टान्तोंको युक्तिओंको देखकरभी सुनकरभी वो यदि दुराग्रहको नहींछोडें तो सो सद्धर्मनिष्ठपुरुषोंमें माननीय नहींहोसक्ता॥

विधिविहितअर्थका अधिकारीजनोंमें प्रकटकरना तो पापकर्म नहीं, किंतु श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्ध असत्यभाषण नरकमें डालनेवाला अतिपापकर्महै इआतः ऐसेअतिपापकर्मसें आपभी मनको रोकें॥

पूर्वपक्षी०—यदि तुम कहो कि—जब चिकित्साशास्त्रके चरक सुश्रुत आदिग्रन्थोंमें बहुतसा मांसके गुणोंका जिकर आताहै तो फिर हम कैसे निश्चय करसक्तेहैं कि—मनुष्य मांसखानेवाला नहींहै, ऐसे यदि तुमकहो, तो तुम अपनी विचारशक्तिसें सर्वथाकाम नहींलेते, सबशास्त्र भिन्न २ मार्गका अधिकारीके भेदसे उपदेश देताहै जैसे धर्मशास्त्र धर्मके निर्णयमेंही अधिकार रखताहै, ऐसे ही नीतिशास्त्र पापपुण्यकी अपेक्षा न रखताहुआ केवल अपनी ऐहिकउन्नतिकाही उपदेशकर्ताहै इसीप्रकार वैद्यकशास्त्रभी, रोग रोगका कारण रोगका दूरहोना, और रोगके दूरहोनेका उपाय इनचारबातोंके उपदेशकरनेमें हीसफलहै इसपदार्थके खानेमें धर्म और इसके खाने पापहोताहै इसबातके

निरूपणमें चिकित्साशास्त्र कुछप्रयोजन नहीं रखता क्योंकि-शब्द जिस-बातके निरूपणमें प्रवृत्तहोताहै शब्दका अर्थ वहीहोताहै अतः चिकित्सा-शास्त्र पापपुण्यके निरूपणमें सर्वथा उदासीनहै ॥

आस्तिक• महर्षिओंके साधारणकथनभी, ममूलीबातेंभी और शरीर-इन्द्रियोंकी चेष्टाभी धर्मविषयक प्रयोजनवालीहोतीहैं, तो महर्षिओंके रचित नीतिशास्त्रआदिकोंका क्या कहनाहै ॥

हेनादान—नीतिशास्त्र और चिकित्साशास्त्र तो सर्वधर्मोंके मूलहैं जिनको तुम सद्विचारसें शून्यहोकर धर्मविषयकप्रयोजनसें रहितकहतेहो ।

महाभारत—यथाराजन्हस्तिपदेपदानि, संलीयन्ते सर्वसत्त्वोद्भवानि ॥ एवंधर्मान्राजधर्मेषुसर्वान् सर्वावस्थंसंप्रलीनान्निबोध ॥ १२ ॥ ६३॥ २५॥ सर्वे-त्यागाराजधर्मेषुदृष्टाः सर्वादीक्षाराजधर्मेषुचो-क्ताः ॥ सर्वाविद्याराजधर्मप्रविष्टाः सर्वेलोका-राजधर्मेनिविष्टाः ॥ २९ ॥ यंहिधर्मंचरन्तीह, प्रजाराज्ञासुरक्षिताः ॥ चतुर्थंतस्यधर्मस्य, राजा-भारतविन्दति ॥१२॥ ७४ ॥ ६॥ यदधीतेयद्ददाति, यज्जुहोतियदर्चति । राजाचतुर्थभाक्तस्य, प्रजा धर्मेणपालयन् ॥ ७ ॥

अर्थ--हेराजन् जैसे हाथीके पैरमें सब जीवोंके पैर समाजातेहैं ऐसेही होर सर्वधर्मोंको राजधर्मोंमें संलीन जानों अर्थात् राजधर्ममें और सर्वधर्म आजातेहैं ॥ २५ ॥ सर्वत्याग सर्वयज्ञ सर्वविद्या सर्वलोक राजधर्ममें आ जातेहैं क्योंकि राजाकर सुरक्षितहुई प्रजा जिस त्यागयज्ञआदिधर्मको करेहै, उसधर्मके चतुर्थभागको राजा प्राप्त होताहै। प्रजा जिसशास्त्रका अध्ययन करेहै, जो दान कर्ताहै, जो होम करेहै, जो पूजन करेहै, उसधर्मके चतुर्थ अंशकाभागी राजा होताहै जो राजा धर्मसे प्रजा पालिताहै ॥

और प्रसिद्धहीहै कि, बिमारीके होते विशेषधर्मकार्य्य होहीनहींसक्ता, और नाहीं सुख विशेष रहताहै-

ऐसे प्रतिबन्धकोंके निवारणद्वारा राजनीतिशास्त्र और चिकित्साशास्त्र सर्वधर्मकर्मोंके सहकारी कारणहैं ॥

और देखो प्रमाणांक ४१ में ६१ में १०३ में २३७ में २३८ आदि धर्मशास्त्रोंमेंभी प्राणांतसमयतक अशक्तपुरुषको औषधलिये मांसखानेकी आज्ञादीहै इस्से चिकित्साशास्त्र और नीतिशास्त्रभी धर्मशास्त्रके अन्तर्गतहैं ॥

यदि मनुष्यका वास्तवसे मांसआहार न होतातो चिकित्सा शास्त्रमें परमपूज्यमहर्षिजन; व हकीमोंकी कताबोंमें और मेडिकलकताबोंमें अतिलायक मान्यवरपुरुष मांसके गुणोंकाप्रतिपादन, मांसखानेका विधान कैसे करसक्ते थे अतः उनपरमपूज्य पुरुषोंके लेखसेभी सिद्धहीहै कि, विहित मांस मनुष्यका आहारहै ॥

पूर्वपक्षी०—मनुस्मृतिआदिधर्मग्रन्थोंमें मांससे श्राद्धकरना लिखाहै तो फिर मांसमें घृणा क्यों, ऐसे यदिकहोतो, वैदिकधर्म सबस्थानमें कर्तव्यहै सबप्रकारकेमनुष्योंकी प्रकृतिकेअनुसार हुआकरताहै इसलिये जहांपर और कोईपदार्थ श्राद्धकरनेकोलिये प्राप्त न हो और वहांकेपुरुष प्रायः मांसाहारी हों वहांपर श्राद्धकरनका मांसप्रकरणहैपरन्तु हमारादेश ऐसा नहींहै ॥

आस्तिक०—शुभहुआ कि, धर्मशास्त्रोंमें मांससें श्राद्धकरनालिखाहै, वो तुमनेभी मानालिया परन्तु वैदिकधर्म सबस्थानमें कर्तव्यहै, इत्यादिक गोलमोल लेख तुमने धोखादेनेकेलिये लिखदियाहै, तथाहि कहता हुं सुनिये—

जिसदेशमें ब्राह्मणादिचारवर्णोंका व आश्रमोंका विभागहै उसदेशके सबस्थानमें वैदिकधर्म कर्तव्यहै, अथवा जिसदेशमें चारवर्ण चारआश्रमोंका विभाग नहींहै उसदेशकेभी सबस्थानमें वैदिकधर्म कर्तव्यहै ॥

इनमें द्वितीयपक्ष तो असंभवहीहै क्योंकि जहां ब्राह्मणादिवर्णोंका व आश्रमोंका विभागहीनहींहै, तो उसदेशमें वर्णआश्रमके अधिकारसें होने वाले श्राद्धप्रभृतिवैदिककर्म कैसे होसक्तेहैं ॥

यदि प्रथमपक्षकहोतो ऐसा होरकोइदेश नहींहै किन्तु ऐसाायिह वर्ण आश्रमोंके विभागवाला भारतखण्डहीहै इसी देशमें मांससें श्राद्धकरनेकी धर्मशास्त्रोंमें आज्ञा कीहुइ सिद्धहोतीहै ॥

होरजो कहाकि जहांपर और कोइपदार्थ श्राद्धकरनेकेलिये प्राप्त न हो, और वहांकेपुरुषभी प्रायः मांसाहारीहों वहांपर श्राद्धकरनेका मांस प्रकरणहैतो, ऐसाकहना धोखादेनाहीहै; क्योंकि, जिसदेशमें मांस मिलताहै श्राद्ध करनेकेलिये और कोइपदार्थ नहीं मिलता वहांकेमनुष्यभी मांसाहारीहैं और श्राद्धकेयोग्य ब्राह्मणादिवर्णोंका विभागभीहै ऐसा कोईभी देश नहींहै व नांहीं ऐसादेश होसक्ताहै क्योंकि, जहांपर गेहुं चावलादिअन्नभी और दुग्धघृतआलुशाकादिकभी नहीं मिलसक्तातो, केवलमांससेंही वोदेश आवाद कैसे होसक्ताहै ॥

यदि तुम कहोकि, जांगलीमनुष्यनका जंगलदेशतो ऐसाहै तो यिह तुम्हाराकथनभी अयुक्तहीहै जंगलदेशमेंभी कन्दमूलशाकआदि मिलसक्तेहैं

परन्तु उनमें ब्राह्मणादिवर्णोंका विभागही नहीं है बहुत क्या जांगलीमनुष्य तो पशुओंकीन्याई वस्त्रोंसेंभी रहितहोतेहैं तो उनकेलिये वर्णाश्रमकेअधिकार सें करणेयोग्य श्राद्धका विधान शास्त्रकार कैसे कर सक्तेहैं ॥

हेमित्र—जहांपर मांससेंविना और कोईपदार्थ श्राद्धकरनेके लिये प्राप्त न हो और वहां श्राद्ध करणेकराणेयोग्य ब्राह्मणादिवर्णोंका विभागभी हो ऐसा कोईदेश नहींहै इस्सें सिद्धहुआ कि, गोलमोललिखकर तुम धोखा देतेहो ॥

हेपाठक–श्राद्धकेयोग्यब्राह्मणादिवर्णों के विभागवाले इसभारतखण्डमें ही मांससें श्राद्धकरनेकी आज्ञा धर्मपुस्तकोंमें की हुईहै यिह सिद्धहुआ ॥

और कर्मभूमिभी यिह भारतखण्डहीहै इस्सेंभी इसभारतवर्षमेंही मांस सें श्राद्धकरनेकी आज्ञाहै ॥

—*०*—

पूर्वपक्षी०—इसदेशमें सर्वप्रकारके उत्तम २ पदार्थ मिलसक्तेहैं तो फिर मांसकी क्या आवश्यकता, जिसपदार्थको विद्वान्महात्मा श्राद्धमें खाने की इच्छा करें उसीपवित्र पदार्थद्वारा उनकी प्रसन्नता लेनी चाहिये ॥

आस्तिक०–प्रबलप्रमाणोंसें युक्तिओंसें मांसकी अतिस्वादुता शुद्धता और गुणोंमें उत्तमता पूर्वसिद्ध होचुकीहै ॥

और देखो प्रमाणांक १५१ आदिकोंमें पितरों का जो मासिकश्राद्धहै वो मांससेंही करनाकहाहै ॥

—*३*—

पूर्वपक्षी०–भला आस्तिकजी आपजो नित्य भेडमुरगादिके मांसको हडप्प कियाकरतेहो, यह क्या नित्य आपकेघरमें श्राद्धहीहोता रहताहै ॥

आस्तिक०—केवल श्राद्धकर्ममेंही मांसखाने की आज्ञा नहीं किंतु

नित्यकरणीय देवयज्ञ मनुष्ययज्ञआदिकोंमेंभी मांसकी आज्ञा धर्मग्रन्थनमें कीहुईहै, वो पहिले दिखाचुकाहुं ॥

यदि भाग्यवान्गृहस्थपुरुष नित्यहीश्राद्धकरें तो अत्युत्तमहै भाग्यवान् कर्तेही रहैहैं-देखो प्रमाणांक ७५ में पराशरजीने नित्यपंचयज्ञोंमें मांसका विधान कराहीहै इस्सें नित्यविहितमांसका हडप्पकरना तो शुभफलका हेतुहै क्योंकि धर्मपुस्तकोंके ,विधिका, हुकमका पालनहै ॥

पूर्वपक्षी०—थोडा विचार तो करो कि-जिनके तुम मांसको खातेहैं यह भेडकुकडआदि क्या २ खातेहैं जिनसें कि उनका शरीर बनताहै ॥

आस्तिक० ऐसा पूर्वपक्ष तुमने केइवार कराहै उसउसका उत्तर भी मैंने केईवार लिखदियाहै इस्सें पुनरुक्तिदोष तुम्हारे कथनमेंही समझनाचाहिये इसग्रन्थमें पुनरुक्तिदोष नहीं ॥

मैंने विचाराहै कि-जैसे रक्तवीर्य्यसें पहिले बुदबुदासा होताहै फिर अन्नके रससें रक्तमांसआदि बनतेहैं उनका समुदायही शरीरहै वो जैसे मेरा तेरा शरीरबनाहै वैसेही भेडबकराऽऽदिकोंका बनाहै।

अब तुमभी विचारो कि-जो आप अन्नशाकादि खातेहो वो कहां कैसे पैदा होतेहैं अर्थात् जहां म्युन्सिपलकमेटीसें हजारोंरुपय्योंका खरीदके मनुष्य गधा श्वान घोडा बिल्लाऽऽदिकोंका मैला पडताहै वहां अन्नफल-शाकादि तियार होतेहैं और ग्रामोंकेसमीप जो भेडें गौएं चरतीहैं वो घास को चरती २ मनुष्योंके मैलेकोभी खाजतीहैं ॥

पूर्वपक्षी०—जिनग्रन्थोंमें जिनकी मांसखानेकी कथाहैं उनको ज्ञानी मानते हो वा अज्ञानी॥ यदि अज्ञानी मानतेहो तो क्या अज्ञानी का आचार

भी धर्ममें प्रवेश करसक्ताहै, यदि उसका आचारभी धर्महो तो अज्ञान दूरकरनेकेलिये शास्त्रोपदेश और शिष्टोंका प्रयत्न व्यर्थहोनाचाहिये ॥

आस्तिक०--आर्षग्रन्थनमें जिन ब्राह्मणोंकी और राजोंकी तथा होरकेईपुरुषोंकी, मांसखानेकी कथाहैं वो ब्राह्मण राजे महाराजे तो वेदस्मृतिआदिधर्मशास्त्रोंके ज्ञानीथे अतः वर्णआश्रमोंके धर्मोकेमर्म सम्यक्ज्ञानीथे, इसीसें वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थोंमें श्रद्धाकर विधिवाक्यनसें प्रेरेहुए वह विहितमांसको खाते रहेहैं ॥

श्रुतिस्मृतिओंके रहस्यअर्थकेज्ञानी, धर्मनिष्ठ ब्रह्मर्षिराजर्षिओंके आचारको, नास्तिकोंसेंबिना अधर्मरूप कौन कहसक्ताहै, अर्थात् उनका आचार परमप्रमाणहै धर्मरूपहै, उनोंसेंभिन्नजो श्रौतस्मार्तधर्मोंको नहींजानते, अतः वृथामांसको खानेवालेहैं, वोअज्ञानीहैं उनका आचार धर्ममें प्रवेश नहींकरसक्ता, उनको धर्मज्ञानलिये शास्त्रोपदेश और श्रेष्ठजनोंका प्रयत्न सफलहै ॥

पूर्वपक्षी०--यदि शास्त्रके भयसें तुम अज्ञानीके कर्मको धर्म नहींसमझते तो शास्त्र मांसभक्षणका महानिषेध कर्ताहै अतः शास्त्रसिद्ध मांसकानिषेधहोनेसें फिर मांसमें क्यों प्रवृत्तहोतेहो ॥

आस्तिक०--स्मृतिआदिकोंमें वृथामांसके खानेका निषेधहै और विहितमांसखानेमें वेदसूत्रस्मृतिआदिकोंके बहुतही विधान, हुक्म दिखलायचुकाहुं और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिकहीहै, तो तुम दुराग्रहकर श्रुतिस्मृतिओंके निर्णीतअर्थको क्यों छिपातेहो ऐसेकरनेसें तुम क्या आस्तिक कहलायसक्तेहो ॥

पूर्वपक्षी०—जिन पुरुषनकी मांसखानेकी कथाहैं वह तुम्हारे बराबरही

ज्ञानीथे वा अधिक, यदि तुल्यथे तो जोर उनकी इतिहासोंमें शक्ति सुननेमें आतीहैं आपमेंभी कोईवैसी होनीचाहिये जैसे महाभारतमें धर्मव्याध श्रीकृष्ण युधिष्ठिर वासिष्ट विश्वामित्रादिमें अनेकशक्तिऐं सुननेमें आतीहैं परंतु आपमें तो उनशक्तिओंका नामभी नहीं पायाजाता तो फिर आप उनकेसाथ बराबरी कैसे करना चाहतेहो ॥

आस्तिक०—जिन ब्राह्मणक्षत्रियादिकोंकी मांसखानेकी कथाहैं, उनमें केईक मेरेबराबर ज्ञानीथे, और बहुत मेरेसे अधिकही ज्ञानीथे, और केई वर्णाश्रमधर्मोंके ज्ञानीभीथे अर वो योगीभीथे, और अगस्त्यव्यासवसिष्टादिक तो परमयोगीन्द्रथे, और श्रीरामलक्ष्मणकृष्णादि अवतारथे ॥

उनमें जो ब्राह्मणक्षत्रियादिक वर्णाश्रमधर्मोंके ज्ञानीथे विहितमांसको खातेथे योगारूढ नहींथे उनमें तो कोईशक्ति नहींथी, अतः सुननेमेंभी नहींआई ॥

होर जो योगीथे और अगस्त्यादिक योगीन्द्रथे उनमें योगजन्य अनेकशक्तिएंहुईहैं ॥

भावयिह—सत्यसंकल्पप्रभृति शक्तिआं तो योगतपआदिकोंका फलहैं, जिनके तपयोगादि अधिकासिद्धहुएहैं उनमें अधिकशक्तिएंहुईहैं, जिनमें न्यून सिद्धहुएहैं उनमें न्यूनशक्तिएं हुईहैं ॥

परंतु जिनमें सिद्धिआंहो वोसिद्धपुरुषही मांसको खाएं, ऐसा किसीश्रुतिस्मृतिमें नियम तो नहींकररखा वा नांहीऐसानियम युक्तियुक्तहै प्रत्युत ऐसानियम हासिकेहीयोग्यहै क्योंकि—अतिपुष्टिका बलआदिकोंका हेतु होनेकर विहितमांसका खाना तो गृहस्थजनोंके लिये आवश्यकहै ॥

प्रश्न—तोसिद्धिसम्पन्न महर्षि अगस्त्यआदिक विहितमांसके खानेमें खुवानेमें क्यों प्रवृत्तहुएहैं ॥

उत्तर— सो योगीन्द्रअगस्त्यआदिक महर्षि गृहस्थथे आचार्य थे अतः वैदिककर्मोंके प्रवर्त्तकथे, इस्से परोहित होकर कहीं यजमानहोकर अतिथि होकर विहितमांस को खाते रहे हैं ॥

विहितमांसका खाना कोई सिद्धमहर्षिओंकी बराबरीकरनी नहींहै प्रत्युत धर्मशास्त्रोंके कर्तामहर्षिओंकी आज्ञाका पालन है ॥

पूर्वपक्षी०—शास्त्रमें कहाहैकि—नदेवचरितंचरेत्, देवताओं वा महानुभावोंकी बराबरी न करे ॥

आस्तिक०—किसशास्त्रमें कहाहै और इसकाअर्थ क्याहै हेमित्र—मांसभक्षणके प्रकरणमें ऐसेही गोलमोल मनोघड़ितअर्थलिखनेसे क्या आपको लज्जाभी नहींआती, मांसभक्षणके निर्णयमें इसतुम्हारेलेखसे यिहसिद्धहोताहै कि-देवता और महानुभावमहर्षि तो मांसको खातेहैं तुम मतखाओ, इसमें मैं तुम्हारेसे पूछताहुं कि-जब श्रुतिस्मृतिएं गृहस्थजनोंको प्रेरणा कर्तीहैं कि-विहितमांसको खाओ, तोफिर गृहस्थजन क्योंन खावें ॥

हेभ्रातः—बलबुद्धि गुणआदिकोंकर अपनी उनसें तुल्यता बोधनकरनी, बराबरीकरनी कहीजातीहै ॥

और जैसे धर्मशास्त्रमें विहित दुग्धघृतअन्नको ब्रह्मर्षिभी राजर्षिभी खातेहैं, वैसेही इतरगृहस्थजनभी खावें तो यिह बराबरीकरनी नहींकहलाती, ऐसेही विहितमांसको देवता ब्रह्मर्षिराजर्षिभी खातेहैं वैसेही इतरगृहस्थ जनभी खावें तो वो उनकी बराबरीकरनी नहींकहलायमकी किंतु श्रुति-स्मृतिओंकी आज्ञाका पालनहै आस्तिकताहै ॥

पूर्वपक्षी०—यान्यस्माक ँ सुचरितानि तानि-त्वयोपास्यानि नोइतराणि ॥ तै०उ० ॥ शिक्षापाकर घरजाते हुए शिष्यको गुरु कहताहै कि- हेशिष्य जो हमारे शुभकामहैं उनेकअनुसार वर्ताउकरो बुरेकर्मोके अनुसार नहीं ॥

आस्तिक०—इसउपनिषद्वाक्यपर शांकरभाष्यदेखो ॥

यान्यस्माक माचार्य्याणां सुचरितानि शोभ-नचरिता न्याम्नायाद्यविरुद्धानि तान्येव त्वयो-पास्यान्यनुष्ठेयानि नियमेनकर्त्तव्यानीतियाव-त् ॥ नोइतराणि विपरीतान्याचार्य्यकृतान्यपि ॥

अर्थ जो हमारेआचार्य्योंके शुभकर्महैं, वेदादिकोंके अनुसारीहैं, वो तुमनें नियमसें करनेचाहियें, औरजो उनसें विपरीतहैं, अर्थात् श्रुतिस्मृति-ओंसें विरुद्धहैं, वो आचार्य्यनें करेभीहैं सो तुमनें नहींकरनेचाहियें ॥

हेमित्र—यहां तैत्तिरयउपनिषद्में मांसका कोईप्रसंगही नहींहै, मांस-का नामभी नहींहै, किंतु इसउपनिषद्वाक्यमें येही कहाहै कि-वेदादिकोंसें विरुद्धकर्मोंको मत करो, और विहितकर्मोंको करो, इससेंभी येहीअर्थ सिद्धहोताहै कि-अविहित मांसको मत खाओ, और श्रुतिस्मृतिओंसें विहितमांस को खाओ ॥

पूर्वपक्षी०—वेदादिशास्त्रोंका यहभी सिद्धान्तहै कि ज्ञानीके कियेहुएकर्म बन्धके कारण नहींहोते ॥

आस्तिक०—आत्मेक्षणप्रमाणांकग्रन्थमें प्रबलप्रमाणोंसे तथा युक्तिओंसें सिद्धहोचुकाहै कि–ध्यानकी परिपक्कताहुए समाधिरूपही अतीन्द्रियपरमात्माका प्रत्यक्षज्ञानहोताहै, ऐसे ब्रह्मसाक्षात्कारवाले जो ज्ञानीहैं, सो कर्मबन्धनोंसें मुक्त होजातेहैं अतः ऐसेज्ञानीविषयक जो तुम्हारा लंबालेखहै सो इसप्रसंगमें अनुपयोगीहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—यदि आपत्कालमें किसीने मांसभक्षण कियाभीहो तो वहसदाका धर्म नहींहोसक्ता ॥

आस्तिक०—देखोप्रमाणांक २८८ में जब 'इन्द्रप्रस्थ, देहलीमें युधिष्ठिरजीने सभास्थानकी प्रतिष्ठामें दसहजारब्राह्मणोंको हरिणवराहआदिकोंके मांससें भोजन खुलायाथा, तब युधिष्ठिरका आपत्काल नहींथा और नांही उनब्राह्मणोंका आपत्कालथा ॥

प्रमाणांक १४१ में जब कौसल्यामहारानीने अयोध्यापुरीमें सरयुके तटपर कृपाणके तीनप्रहारकर अश्वको कटादिया तब दशरथका वा कौसल्याका आपत्काल तो नहींथा ॥

प्रमाणांक ४२ आदिमें श्रीकृष्णजी की प्रेरणासें, गिरियज्ञमें नन्दआदि गोपोंनें मांससेंबलिदान कराथा, और बहुतही ब्राह्मणोंको भोजनभी करवायाथा, तब नन्दादि गोपोंका व ब्राह्मणोंका आपत्काल तो नहींथा ॥

ऐसे२ बहुतदृष्टान्त दिखाचुकाहुं अतः आपत्कालमेंही नहीं किंतु सर्वदा विधि सें प्रेरेहुए ब्राह्मणक्षत्रियादि विहितमांसको खातेरहेहैं ॥ अनेक दृष्टान्तोंको देखतेहुएभी जानतेहुएभी तुम नास्तिकताकर दुराग्रहको यदि नहीं छोडो तो इसका क्या उपायहै ॥

पूर्वपक्षी०—मनुष्यका आहार मांस नहींहै इसमें प्रधानयुक्ति यहहै कि–जिसवस्तुको उसकी स्वाभाविकदशामें देखकर मन चाहे वही मनुष्यके

खानेयोग्यवस्तु होतीहै दूसरीनहीं, जैसे छोटेबालकके सामने एकतर्फ सुन्दर फल पड़ाहो दूसरेओर मांसका टुकड़ा पड़ाहो तब वह बालक दोनोंमेंसे फलकोही पकड़ेगा, मांसकीओर ध्यानतकभी नहींदेगा, बल्कि उसको देखतेही भय मानेगा, नहीं २ केवलयहकाम बालककाही नहीं प्रत्युत सूक्ष्म विचारसें देखाजाए तो मनुष्यमात्रही इसनीचपदार्थसें घृणा करताहै, देखो जब २ मनुष्य मन प्रसन्नकरनेकोलिये कहीं जाताहै, तो उसीतर्फजाताहै जिसतर्फ सुन्दरफूल और फल होतेहैं, और जहांकहीं मांस पड़ारहताहै वहांपर तो कौए गीध और कुत्तेही फिरते देखनेमें आतेहैं, क्योंकि–वह उनकाही आहारहै इस्सें विदित होताहै कि–मनुष्यकी रुचि मुख्य फलफूल आदिकी ओरहै ॥ देखो सब नगरोंमें पशुमारणेकोलिये स्थान शहरसें बाहर हुआकरताहै । मांसपर ढांपनेकोलिये कपड़ा रखनेका हुकम हुआ करताहै॥

यदि मांस मनुष्योंका वस्तुतः आहारहोतातो इस्सें इतनी घृणा न होती ॥

आस्तिक०—हेबाल–यदि बाल्यावस्था मनुष्यकी स्वाभाविकदशाहैतो सिद्धहुआ कि, अब बालक न होनेसें तुम असली मनुष्यदशामें नहींहो इसीसें अपनेगोत्रप्रवर्तक महर्षिओंसें विरुद्ध वर्ताव कररहेहो ॥

हेभ्रातः–बाल्यावस्था अतितामसी मूढावस्थाहै, यिह मनुष्य की स्वाभाविकदशा नहींहै, इसीसें वासिष्ठादिग्रन्थोंमें बाल्यावस्थाकी अति निन्दाकीहै "बालक फलको पकड़ेगा मांसको नहीं" यिह नियम नहींहै क्योंकि, बालकतो जिसकिसी वस्तुको पकड़लेतेहैं ॥

यदि भयकरेतो, बालक अपनी छायासेंभी भयकर्ताहै, फिर कभी अग्निआदिसेंभी भय न मानकर पकड़नेलगताहै, अतः कभी अग्निसें हाथ जलाभीलेताहै, बालकोंकी तो पशुओंकी पागलोंकीन्याईं चेष्टा होतीहै ॥

जिसवस्तुको छोटाबालक पकड़ले, वो मनुष्यकेखानेयोग्य वस्तुहोतीहै यिह तुम्हारातात्पर्य्य तुम्हारेपासहीरहे क्योंकि, बालकतो अपनेमैले में हाथ भरके मुखमें डालनेलगताहै डाल लेताहै–

देखो प्रमाणांक १ आदिकोंमें परमपूज्यमहर्षिओंनें घृततेलकी न्याई मांसको शुद्धपवित्रकहाहै उनकी सन्तान तुम मांसको नीचपदार्थ कहतेहुए लज्जाभी नहींकर्ते ॥

पहिलेभी राममलच्मणादिअवतार वेदवेताब्राह्मण राजेमहाराजे मांसको खातेखुलातेरहेहैं, और इससमयमेंभी योग्यपुरुष कोटिनही मांसकोखाने वालेहैं अतः मनुष्यमात्र इस्से घृणाकरताहै, यिह तुम्हाराकथनअसत्यहीहै जब मनुष्य मन प्रसन्नकरनेके लियेजातेहैं तो नगरोंमें रहनेवाले बागों में नदीनहरके तटमें जातेहैं, और जो नदीतटमें वा बागोंमें रहनेवालेहैं वो नगरोंमें बाजारोंमें जातेहैं, ऐसे नहीं कि, बागोंमें रहनेवाले फूलोंको फलोंको ही देखतेरहतेहैं, किन्तु वो शहरोंमें जाकर हलवाईकी पसारीकी फलोंकी फूलोंकी कपड़ेकी मांसकी पानकी इत्यादिकदुकानोंको देखतेहुए चलेजातेहैं ऐसे नहीं कि, फलफूलोंकी दुकानोंपरही खड़े २ देखतेरहतेहैं ॥

कौए गीध कुत्तेआदिक कच्चा मांसखानेवालेहैं अतः वो कच्चे मांस पर जातेहैं और मनुष्य पक्कमांसको खातेहैं, इस्से पक्कमांसकीदुकानपर व जहां सीखोंपर मांसको भुनतेहैं वहांपर जातेहैं खातेहैं ॥

यदि विचारकरदेखेंतो सबवलायतोंके मनुष्य मांसखानेवालेहैं, हिन्दुस्तानमेंभी कश्मीर नयपाल बंग मैथिल कांगड़ाआदिपर्वत सिन्धुआदिदेशोंके भी मनुष्य प्रायः मांसाहारीहीहैं अर्थात् बहुतथोड़ेही मनुष्य मांसनहींखाते तो हैंअतः यदि मनुष्यकी रुचिमुख्य फलफूलकीओर होतो वो कोटिन मनुष्य मांसको क्योंखावें, क्या उनपर कोई पातशाहीहुकम तो जारी

नहींहै कि तुम जरूरी खाओ किंतु बहुतही कोटिनमनुष्य मांसको मुख्य रुचीसेंही खातेहैं ॥

गेहूं जौआदिकोंके गाह शहरसें बाहिरही गाहेजातेहैं, वैसेही बकराऽऽदिकोंकोभी शहरसें बाहिरही मारतेहैं, तथापि श्रीकाशीपुरीमें दुर्गाकुंडमहल्ला दुर्गाके मन्दिर शरहमेंही बकरादिकोंका बलिदान कराजाताहै ॥

तथा कालीके मन्दिर कलकत्ता शहरमेंही भैंसेतक अनेक पशु मारे जाते हैं, विन्ध्यवासिनीदेवीके मन्दिर शहरमेंही अनेकबकराऽऽदिकोंका बलिदान होताहै, श्रीगुरुगोविन्द सिंहजीके जन्मस्थान पटना शहर में ही अनेक बकरोंका बलिप्रदान कराजाताहै, तथा ज्वलादेवीके मान्दिर शहरमेंही बकाराऽऽदिक मारेजातेहैं ॥

इत्यादिशहरोंमेंभी बकराऽऽदिकपशुओंका बलिप्रदान होताहीहै, और जहांपर शहरोंमें अतिआग्रहवाले जैनीभाई वा अशास्त्रीय बनीएं बहुत होतेहैं उनकी प्रसन्नताकेलिये कपड़ेसें ढापनेका हुकमहोताहै जैसे अजमेर-शहरमेंहै, होरसबशहरोंमें हुकम नहींहै जैसे लाहौरआदिकोंमें नहींहै ॥

जैसे खलका गोत मनुष्योंका वस्तुतः आहार नहींहै वैसेही यदि मनुष्योंका वस्तुतः मांसआहार न होता तो धर्मशास्त्रोंके ज्ञाताब्राह्मणक्षत्रि-यादिक पहिले तथा इससमयके अतियोग्यपुरुषभी मांसको खायही कैसेसक्ते ॥

पूर्वपक्षी०—यवन और शूद्रोंकेसाथ इसीलिये व्यवहारका प्रचार द्विजातिलोगोंमें कमहै क्योंकि वह मांसाहारीहैं, ।

आस्तिक०—हेमित्र—क्योंअसत्यपरायणहुआहैं कश्मीर बंगाल मिथि-लाऽऽदिदेशोंके विद्वान्ब्राह्मणक्षत्रिय राजेमहाराजेआदिक तो आपही मांस

को खातेहैं अतः व्यवहारका अधिकप्रचार तो भिन्नमतवालोंसे मतके भेदसे नहींकराजाता ॥

पूर्वपक्षी०-मांसाहारकरनेसेंही रावणआदि दुष्टस्वभावथे ।

आस्तिक०-मांसको तो रामलक्ष्मणआदिभी वेदवेत्ताब्राह्मणक्षत्रियादिक भी खातेखुलातेरहेहैं वो तो दुष्टस्वभाव नहींहुए अतः विहितमांसके खानेकर दुष्टस्वभाव नहींहोसक्ता किंतु सर्वधर्मोंकेमूल सत्यके त्याग करनेसे पढेलिखेभी दुष्टस्वभाव होजातेहैं जैसे श्रुतिस्मृतिओंके अर्थको और परमपूज्यवृद्धोंके आचारको जानतेहुएभी तुम सत्यके त्यागकर उनके विरोधी होरहेहो ॥

पूर्वपक्षी०-मांसखाना पूर्वसमयमेंभी अतिबुरा समझाजाताथा देखो

महाभारत—**मांसमूत्रंपुरीषंवा, प्राश्यसंस्कारमर्हति**

॥शान्तिपर्व १६५ ॥ ७४ ॥ मांसमूत्र और विष्टाको खाकर फिर संस्कार अर्थात् यज्ञोपवीतादिहोनेसे शुद्धहोसक्ताहै अन्यथा नहीं इसवचनमें मांसका खाना मैलाखानेके बराबरबतलायाहै ॥

आस्तिक०—हेपाटको एक वो समयथा कि, जिसमें महर्षिदध्यङ्की महाराजादशरथकीन्याईं प्राणोंके त्यागको स्वीकारकरलेतेथे परन्तु सत्यका त्याग नहीं करतेथे ॥

अब ऐसासमयहै कि, धर्माधर्मके निर्णयालिये सत्यको तिलांजलिदेकर छलके शरणागत होतेहैं ॥

विचारो कि, छल कहां और धर्माधर्मका यथार्थनिर्णय कहां अर्थात् छलके होते यथार्थनिर्णयतो अत्यन्त दूरचलाजाताहै प्रत्युत छलकर्त्तोको आपभी पापरूपकीचडमें डूबकर अपने अनुसारीजनोंकोभी डोबनाहोताहै

देखो यहां अर्द्धश्लोक लिखाहै इसके सम्बन्धवाला अर्द्धश्लोक छोड़ दिया, यिह अशास्त्रीयजनोंको बुद्धिपूर्वक धोखादियाहै ॥

अब समग्रश्लोकको में लिखताहुं इसका अर्थ देखो क्याहै—

महाभारत-श्ववराहमनुष्याणां, कुक्कुटस्यावरस्यच
मांसमूत्रंपुरीषंवा, प्राश्यसंस्कारमर्हति ॥१२॥ १६५ ॥७४ ॥

अर्थ—कुत्ता ग्रामकासूर मनुष्य ग्रामकाकुकट, इनके मांसको वा मूत्र को वा विष्टाको खाकर द्विजपुरुष फिर यज्ञोपवीतादिसंस्कारके योग्यहो-जाताहै । इसबचनमें कुत्तआदिके निषिद्धमांस खानेका प्रायश्चित्तकहाहै, हरिणबकरादिकोंके विहितमांसखानेका नहीं प्रत्युत प्रमाणांक ८१ आदिकों में विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष कहाहै ॥

पूर्वसमयमें विहितमांसकाखाना बुरानहीं किन्तु इच्छासमझतेरहे तबी तो रामलक्ष्मणादिअवतार और वेदवेत्ताब्राह्मण तथा इक्ष्वाकु विकुक्षि ऋतुपर्ण अम्बरीष दलीपयुधिष्ठिरप्रभृतिमहाराजे मांसको खातेखुलातेरहेहैं तो हेबेसमझ, मांसकाखाना मैलाखानेके बराबरालिखना इस्सें अधिक अत्यन्तअयुक्तलेख होर क्या होसक्ताहै, हेबाल तुमको यिह ज्ञान नहींहुआ कि इसअयुक्तलेखकी अतिव्याप्ति तुम्हारेभी परमपूज्यजनोंमें तथा इससमय के अतियोग्यजनोंमें पहुंचेगी ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—नस्वयंहन्मिविप्रर्षे, विक्रीणामिसदान्वहम् । नभक्षयामिमांसानि, ऋतुगामीतथाह्यहम् महाभा० वनप० २०६ ॥ १२ ॥

व्याध कहताहै कि, मैं मांस नहींखाता इस्सें विदितहुआ कि, पूर्वकाल में व्याधोंतक मांसखानेको बुरा समझतेथे ॥

आस्तिक०—हेपाठको देखो यहांभी आधा एकका आधा एकका श्लोक लिखडालाहै, जो लिखाहै उसका अर्थभी समग्र नहींलिखा अर्थात् धोखेपर धोखादियाहै, अबमें पहिलेका पूर्वार्द्धभी लिखताहुं व अर्थ भी लिखताहुं ॥

महाभारत प्र०३२२—परेणहिहतान्ब्रह्मन्, वराहमहिषानहम् । नस्वयंहन्मिविप्रर्षे, विक्रीणामिसदान्वहम् ॥ प० ३ ॥ २०७ ॥ ३२ ॥

अर्थ—हेब्रह्मन् मैं आपनहीं मारता दूसरेसें मारेहुए सूरोंको भैंसोंको सदा वेचताहुं ॥

—•—

अब इसीधर्मव्याधके औरभी श्लोकहैं वो भी देखो—

महाभारत प्र० ३२३—ओषध्योवीरुधश्चैव, पशवो मृगपक्षिणः । अन्नाद्यभूतालोकस्य, इत्यपिश्रूयते श्रुतिः ॥ ३ ॥ २०८ ॥ ६ ॥

इसपरटीका० प्र० ३२४—अन्नाद्यभूताः अन्नंचतद, द्यंच भोग्यंभक्ष्यंचेत्यर्थः ॥

अर्थ—धान्य जौं पान दाख और पशु मृगपक्षी, यिह मनुष्योंके खाने योग्य अन्नरूपहैं यिहभी श्रुति सुनीजातीहैं ॥

—०—

महाभारत प्र० ३२५—अतुलाकीर्तिरभवन्नृपस्य द्विजसत्तम । चातुर्मास्येचपशवो, बध्यन्तइति नित्यशः ॥ १० ॥

अर्थ—हेद्विजवर—समांसअन्नके दानकर रन्तिदेवमहाराजाकी अतुल कीर्तिहुई । और चतुर्मासमें हमेशां पशु मारियेहैं ॥

—०—

महाभारत प्र०३२६-अग्नयो मांसकामाश्च, इत्यपि श्रूयतेश्रुतिः । यज्ञेषुपशवो ब्रह्मन् बध्यन्तेसततं द्विजैः । संस्कृताःकिलमन्त्रैश्च, तेपिस्वर्गमवाप्नुवन् ॥ ३ ॥ २०८ ॥ १२ ॥

अर्थ—अग्निदेव मांसकी कामनैंवालेहैं, यिहभी श्रुति सुनीजातीहै, हे ब्रह्मन् यज्ञोंमें द्विजपुरुषोंनें हमेशां पशु मारियेहैं, वो मंत्रोंसे संस्कार कियेहुए पशु भी स्वर्गको प्राप्तहुएहैं ॥

—०—

इत्यादिक होरभीबहुतश्लोक उसधर्मव्याधके कहहुएहैं उसधर्मव्याधके इनवाक्यनसें स्पष्टविदितहोताहै कि, पूर्वकालमें श्रुतिवाक्यनसें यज्ञोंमें द्विज पुरुष पशुओंका बलिदानकरतेरहेहैं। सो यज्ञमें मारेहुए पशु स्वर्गको प्राप्त हुएहैं। वो धर्मव्याध सूरोंके भैंसआदिके मांसको वेचता रहाहै ॥

इत्यादिक अर्थ तुम्हारे धर्मव्याधके कथनमें स्पष्टहै, तो इसदृष्टान्तसेंभी तुम विहितमांसके खानेको बुरा कैसे कहसक्तेहो अर्थात् क्यों, दुराग्रहकर असत्यपरायणहुएहो ॥

—०—

हांमित्र--देवताऽऽदिकोंको अर्पणकर्के मांसखाना विहितहै, उनको अर्पणकरेबिना मांसखाना निषिद्धहै, नीचजातिहोनेकर व्याधका अधिकार नहींथा कि, वो मांसपकाकर देवतोंके अर्पणकरे अतः देवार्पणकरनेके संकोचसें वो धर्मव्याध मांसको नहीं खाताथा ॥

पूर्वपक्षी०–छान्दोग्यउपनिषदमें कहाहै कि, जैसाअन्नखावे वैसाही उसका मन भावधारणकरताहै, इस्सें सारयहनिकला कि, उसपशुके जो स्वाभाविक गुण वा दोषहों वह कभीभी दूरनहींहोते।

किन्तु उसमांसकेद्वारा उसके दोषादि मांसखानेवालेकी बुद्धिमें अवश्य आएंगे, पशुओंमें प्रायः मांस बकरेका खायाजाताहै और बकरा माता और भगिनीके साथभी भोग कियाकरताहै तो फिर ऐसे मांसको खाकर तुम एकस्त्रीव्रत कैसे रहसक्तेहो ॥

आस्तिक०–हे पाठको देखो यिह वक्रोक्तिकर कैसा अयुक्तलेख लिखा है, विचारोकि–यिहअयोग्यआक्षेप मांसखानेवाले सबमनुष्यनपरहै॥ मांसको पहिलेरामलक्ष्मण वेदवेत्ताब्राह्मण क्षत्रियराजमहाराज खातेखुलातेरहेहैं,—

इससमयमेंभी कश्मीर नयपाल बंगमिथलाऽऽदिदेशोंके विद्वान्ब्राह्मण क्षत्रियराजमहाराजे और यूरपआदि वलायतोंके अतिलायकपुरुषभी मांसको खातेहैं तो ऐसा अयोग्यआक्षेपकरना 'अयोग्यहीहै' नालायकीहीहै ॥

हेमित्र–रामलक्ष्मण अगस्त्य वसिष्ठादिमहर्षि नलआदिमहाराजे मांस को खातेरहेहैं सो एकसेएकतमी हुएहैं ॥

और हजारोंमनुष्यऐसेहैं जो मांसको नहीं खाते वो अतिव्यभिचारीहैं

पशुजीवका स्वभाव और स्वभावसेहोनेवाले गुणदोष तो मृतपशुजीव के साथही चलेजातेहैं और अतिपुष्टिबलआदि जो मांसके गुणहैं वह मांस खाने वालोंको आतेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—पशुओंमें जड़ताहोतीहै अर्थात विचारशक्ति नहींहोती फिर उसका मांस खानेवाला निर्मलबुद्धि कैसेहोगा और उसकी बुद्धिमें पापपुण्यका विचारभी क्यों पैदाहोगा ॥

आस्तिक०—पशुओंमें अनुकूल प्रतिकूलका प्रियअप्रियका ज्ञान तो होताहै परन्तु गेहुं चावलचनाऽऽदिअन्नोंमें और दुग्धघृतफलादिकोंमें तो सर्वथाजड़ताहीहै इनमें अनुकूलप्रतिकूलादिकोंका ज्ञानभी नहींहोता अतः यिह अतिजड़हैं ॥

हेमित्र–तुम्हारे कथनानुसार जड़तारूपहेतुसे यदि मांस खानेवाला पुरुष निर्मलबुद्धि नहींहोता उसकी बुद्धिमें पापपुण्यकाविचारभी नहींहोता तो अतिजड़ गेहुंआदिकोंकेखानेवालामनुष्य निर्मलबुद्धि व पाप पुण्यके विचारवाला कैसे होसक्ताहै, श्रुतिस्मृतिओंसे प्रतिकूल होनेकर तुम्हारी बुद्धि विचारशक्तिसे शून्यहोगईहै उसमें इतनाभी विचारउदयनहीं हुआ कि, किसीप्राणीका चेतनआहार होसक्ताहै हेबाल—सबके आहार जड़ही होतेहैं ॥

—०—

पूर्वपक्षी०-मांसाहारीसिंहादिके मुखसे बदबू आतीहै जो मनुष्य मांस खावेगा उसकेभी मुखसें बदबू आवेगी ॥

आस्तिक०-सिंहजातिके मुखगन्धरोगहै जैसे उलूकजाति के दिवान्ध रोगहै, गण्ठा लशुन बोदार वस्तहै उनकेखानेकर गन्धआतीहै मांसखानेसें बदबू नहींआती यदि मांसमें बदबू होती तो सबमनुष्यादिकोसें बदबू आनी चाहियेथी क्योंकि, सबके शरीर मांसमयहीहैं-

और मांसखानेवाले तो ब्राह्मणक्षत्रियादिक लाखों क्यों कोटिनमनुष्यहैं उनके मुखमें बदबू नहींआती किन्तु जिसके मुखगन्धरोगहै उसके मुखसें बदबू आतीहै चाहे वो लशुनादिक नहींभी खाताहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी०-मांसाहारीजीवोंमें दयागुणनहींरहता देखो आजकलके मनुष्य अपनी कन्यातकका बधकरने लगपड़ेहैं ॥

आस्तिक०-क्यों असत्यबोलतेहो आजकल गवरमेंटके प्रतापसें कोई ऐसे करसक्ताहै, पहिले उत्तमजातिके मनुष्य कन्याका वध करडालतेथे ऐसे अतिघोरपापकर्मोंको ज्यादामांसाहारी अंगरेजोंनेही हुकमन रोकदियाहै तो तुम दुराग्रहके वशहोकर क्यों असत्यभाषणकररहेहो जानबूझकर असत्य कहना ये ही कलियुगका महिमाहै ॥

—०—

पूर्वपक्षी२-मांसाहारीके दान्तोंमें कईतरहके रोगहोजातेहैं मछलीखाने कर प्रायः शरीरपोलाहोजाताहै ॥

आस्तिक०—युक्तिप्रमाणोंसें नहीं किन्तु तुम अपनेकथनमात्रसें ही अर्थसिद्धकरा चाहतेहो ॥

यदि मांस खाने से दांतों में रोग हो तो सिंहव्याघ्र बिल्ला ऽऽदि कोंके दांतोंमेंभी कईतरहके रोगहोनेचाहियेथे उनसे उनके दांत कमजोर होनेचाहिये प्रत्युत उनके औरज्यादामांसखानेवाले पठानआदिकोंके दांत-भी, दृढ, मजबूतहोतेहैं,—

और मच्छीभी वातको नशकरेहै इस्से मच्छी खानेसेंभी शरीर पोला-नहींहोता; प्रत्युत देखो प्रमाणांक ३१४—कों भातकेसाथ खाईमछली 'राजयक्ष्मको' तपदिकको दूरकरतीहै ॥

——

पूर्वपक्षी०—मांसाहारी ईश्वरपूजाके योग्य नहींरहता क्योंकि वह सदा अपवित्र रहताहै ॥

आस्तिक०— दृष्टान्तअसंख्य दिखलायचुकाहूं कि, ईश्वरपूजायज्ञोंमें अजादिमहस्रोंपशुओंका बलिदान वेदवेताब्राह्मण क्षत्रियादि कर्तेरहेहैं मांस को खातखलातेरहेहैं. प्रमाणांक १ आदिकोंमें घृततैलकी न्याई मांसको शुद्ध कहाहै. ईश्वरविष्णुके समीपीगरुड़भगवान् मांसाहारीहीहैं अतः मांसाहारसें अपवित्रकहना दुराग्रहहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—मुर्दोंको छूनेवाला स्नानकर्के शुद्धहोताहै परन्तु जो मांस खानेवालेहैं उनके पेटमेंतो हरसमय मुर्देके मांसका अंश बैठाही रहताहै तब उसका ऊपरकास्नानकरनाभी हाथीके स्नानकीतरह व्यर्थहीहै ॥

आस्तिक०— महाभारत प्र० ३२७—जीवाहिबहवोब्रह्म-न्,वृक्षेषुचफलेषुच ॥ उदकेबहवश्चापि, तत्रकिं-प्रतिभातिते ॥ ३ ॥ २०८ ॥ २७ ॥

अर्थ-हेब्राह्मन् वृक्षोंमें फलोंमें और जलमेंभी बहुतजीवहोतेहैं तहां

तेरेको क्या भास्ताहै । हेमित्र-दूधके जलके पीनेसें श्वासलेनेसें सूक्ष्मजीवोंका मरणा तो तुमभी स्वीकारकरचुकेहो, ॥

यदि सबजीवोंके मुर्दोंसाथ स्पर्शसें अशुद्धिहो तो जलपानआदिकोंसें और श्वासलेनेसें जो सबमनुष्यनके भीतर असंख्यसूक्ष्मजीव जावेहैं वो भीतरजठराग्निसें मुर्देहोजातेहै तो सबहीमनुष्य हरवक्त अशुद्धकहनेचाहिये ॥

इससें यिह सिद्धहुआ कि-मनुष्यके मुर्देसें स्पर्शकरनेकर अशुद्धहोता-है । और मांसको तो धर्मग्रन्थोंमेंभी अशुद्धहीकहाहै ॥

हेमित्र—मैलेके स्पर्शसेंभी तो मनुष्य अशुद्धहोजाताहै वो मलमूत्र मनुष्यआदिसबजीवोंके भीतर सदाहीबनारहताहै इसपरएकगाथाहै—एक-महाशय चौंकेके भीतर भोजन कररहेथे, उनोंने अपनावामाहाथ चौंकेसें बाहिर कररखाथा, तो एककिसी विचारशीलने देखकर पूछा कि,-हेमहा-शयजी आप चौंकेके भीतर भोजन कररहेहो तो अपने वामेहाथको चौंके' सें बाहिर क्यों कररखाहै, तब महाशयजीने कहा कि- शौचसमय यिह-वामाहाथ गुदाकेसाथ विष्टाकेसाथ लगताहै अतः यिह चौंकेके भीतर रखनेयोग्य नहींहै ॥

फिर विचारशीलने कहा कि-सबजीवोंके भीतरपेटमें मूत्र विष्टाऽऽदि मल सदाबनेही रहतेहैं, यदि जुलाबकर सबमल निकालाजावे तो जीवमें बोलनेकी बैठनेकीभी शक्तिनहीं रहती, यद्यपि आप स्नानादिकोंकर शुद्ध-हुए बैठेहो तोभी यदि अब आपको एकगोलीजुलाबकी दीजावे तो देखो-अबी आपकेशरीरसें कितनामल निकसताहै-अब विचारो कि-गुदाभी चौंकेके भीतरहीहै और तुम्हारे शरीरके भीतर पडाहुआ विष्टाभी चौंकेके भीतरहीहै तो वामेहाथका बाहिरकरना कैसे युक्तहोसक्ताहै ॥

हेमित्र—सबशरीरोंके भीतर मलमूत्ररुधिरआदि बनेरहतेहैं उसका स्पर्श तो क्या उसमलमूत्रादिकों तुमभी उठाएफिरतेहो तो उस्से अशुद्धि नहींकहते किंतु जिसमांसको धर्मग्रन्थोंमें घृततेलकीन्याई शुद्ध कहाहै उसमांसको अशुद्धकहतेहुए तुम लज्जाभी नहींकरते ॥

बकराऽऽदिकोंका मांस तो धर्मपुस्तकोंमें शुद्धपवित्रही कहाहै अतः विहितमांसके स्पर्शसें खानेसे अशुद्ध नहींहोसक्ता किंतु वेदसूत्रस्मृति-ओंसे विरुद्धकहनेकर अशुद्धहोताहै उसका स्नान हाथीकीतरह व्यर्थहीहै क्योंकि—वह चित्तसें वाणीसें अशुद्धहै ॥

पूर्वपक्षी०—थोडासोचे कि—हमारेवस्त्रकेसाथ थोडे लोहूके लगनेसे हमें कितनी ग्लानिहोतीहै, जबकि माताके रजसें लोम लोहू और मांस, एवंपिताके वीर्यसें नाडी हड्डी और चर्बी पैदाहोतीहै अब बताओ कि—इनवस्तुओंमें कौनसीपवित्रहै जिसको तुम खानाचाहतेहो ॥

आस्तिक०—शुद्धिअशुद्धिमें केईवार तुमने पूर्वपक्षकरा उस २ का उत्तरभी केईवार दियागया अबफिर उसीमें पूर्वपक्षकरतेहो अतः पुनरुक्ति दोष तुम्हरेही कहनेमें रहा, तथापि अब संक्षपसें उत्तरकहताहूं ।

हे मित्र—चनोट गुजरांवाला लाहोर देहलीआदिशहरोंका सब मैला जमीनोंमें बागोंमें गेराजाता तुमदेखतेहीहो और शहरोंके मैलपानीके बदरौंभी झलारोंद्वारा खेतोंमें पड़ते तुम देखतेहीहो तो वहांपर पैदाहोनेवाले गेहूं चावल चना आलु गोभी शाक फलादिकोंमें कोनसीवस्तु पवित्रहै जिसको तुम खानाचाहतेहो ॥

हे भ्रातः—जिसको धर्मशास्त्रोंमें शुद्ध पवित्र कहाहै और पूज्यपुरुषोंनें स्वीकारकराहै वोही शुद्ध मानाजाताहै, जैसे कस्तूरी मृगकीनाभीका रुधिर

विशेषहै, और जैसे लाखोंजीवोंको मारकर रेशम निकालाजाताहै वो शुद्धहै, और जैसे लोहूमांस नाडीचर्वीआदिकोंका समुदायरूप सब शरीर हैं हेमित्र त्वक्रक्तमांसनाडीअस्थिआदिकोंमें कोनसीवस्तु पवित्रहै जिससे आप जगत्में पवित्र और उत्तम कहलायरहेहो, विस्तारसे उत्तर तो पहीलेलिखचुकाहूं प्रमाणांक १ आदिधर्मशास्त्रोंमें घृततेल औरमांसको शुद्ध पवित्रकहाहै अतःविहितमांस को रामलक्ष्मणादिकअवतार वेदवेताब्राह्मण राजेमहाराजे भी खाते खुलातेही रहेहैं इससे आस्तिकगृहस्थजनोंने अवश्यं खानाचाहिये।

पूर्वपक्षी०—मांसकेखानेसे शरीर कभी नीरोग नहींरहता बल्कि-दिमाग कमजोरहोताहै, इसीतरह औरभी केइरोग उत्पन्नहोतेहैं जैसे पाचन नहोकर रातको खराब डकार आतेहैं, प्रायः खून बिगडजाताहै, शरीर पीलाहोजाताहै हाथपैर सूखजातेहैं गलेमें गांठ पैदाहोजातीहैं और दिक गंठियाहैजा आदिरोग पैदाहोतेहैं।

आस्तिक०—यिह पूर्वपक्ष नहींहै किन्तु हारेहुएमनुष्यका प्रलापहै—हेमित्र—यदि मांसके खानेसे शरीर कभी नीरोग नहींरहता तोज्यादा मांस खानेवाले पठान औरकश्मीर नयपाल मिथिलाऽऽदिदेशोंकेलाखोंब्राह्मण क्षत्रियराजे महाराजेआदि कोटिनमनुष्य मांसको खातेहैं तो उनसबदेशोंके मनुष्यनके शरीर क्या कभी नीरोग नहींरहते।

पहिले ब्रह्मर्षि राजर्षि महानुभाव जो मांसको खातेखुलातेरहेहैं तो क्या उनकेदिमाग तेरेसे कमजोरहुएहैं।

इससमयमेंभी ज्यादामांसखानेवाले यूरपीनहैं देखोउनके दिमागकी शक्ति रेलगाडी तार मोटरकाट आकाशयान फोनुग्राफआदि हजारोंयन्त्र ऐसेरचेहैं कि जिनोंसे तुम्हारे दिमाग हजारोंकोस दूरहैं,—

हेमित्र—तुम्हारे दिमागकी दुर्बलता ऐसीहै कि-अपने गोत्रप्रवर्त्तक महर्षिओंके आर्षमतको जानतेहुएभी तुम छिपातेहो, लज्जाकरतेहो, अनुपयोगीप्रमाण असद्दृष्टान्त असत्युक्तिओंसे बदलतेहो, मानों अपने पैरोंपर आपही कुहाड़ा मारतेहो क्योंकि-आर्षमतके महत्त्वको तुम्हारा दिमाग समझही नहींसक्ता,—

मांसखानेसे केईरोग उत्पन्नहोतेहैं, यहि तुम्हारा कथनभी असत्यहीहै क्योंकि यदि ऐसेहोता तो कोटिनमनुष्य मांसको खातेहैं उनके केईरोग होनेचाहियेथे ऐसेतोहुआ नहीं प्रत्युत तुम्हारेसे अधिकनीरोग देखनेमेंआतेहैं जैसे यूरपीन वा पठान, और प्रमाणांक १०० चरकसंहितामें सर्वरोगोंका नाशक मांसका रसकहाहै इसीसे दुर्बलरोगीको मांसके रसखानेकी प्रायः डाकटर हकीम वैद्यआदिक आज्ञादेतेहैं ॥

और अपनी पाचनशक्तिसे अधिक जोभीकुछ खायाजावे तो पाचन नहोकर उससे खराबडकार आतेहैं मांसखानेसेनहीं ज्यादामांसखानेवाले काबल घन्दार नयपाल कश्मीरआदिदेशोंके जो कोटिनमनुष्य मांसको खातेहैं क्या उनके हाथ पैर सूखगएहैं, क्या उनका खून बिगड़ाहुआहै, क्या उनके शरीर पोलेहोगएहैं, क्या उनके गलेमें गांठहोईहैं, बहुतक्या सद्धर्मको विस्मृतकरके दुराग्रहसे तुम प्रलापकररहेहो ॥

पूर्वपक्षी०—और देखो डाकटरसाहबका क्या कहना है कि—मांस प्रकृतिविरुद्ध भोजनहै इसलिये शरीरकी बीमारीओंको बढातीहै, बुखार क्षय विस्फोटआदि इसी मांसाहारकरनेसेही विशेषपैदाहोतेहैं इत्यादिक डाकटर लूईकूने, की सम्मति–जिह्वा बडीही नमकहरामहै अच्छे२ स्वादि-

इपदार्थोंके लालचमें आकर शरीरकी हानिलाभको वह बिलकुलही भूल-जातीहै जिसवस्तुको देखकर हमें घृणाहोनीचाहिये उसेही प्रसन्नतापूर्वक-खातेहैं इत्यादिक ॥

एकविख्यात फ़िलासफर यूरपीनकी सम्मतिहै कि मनुष्यमें क्रूरजंतुओंसें क्रूरता प्राप्तहुईहै यदि ठीकहै तो हिंसकजीवोंसदृश हिंसा तथा मांसखानेसें मनुष्यभी एकदिन वैसेही "क्रूर वहशी होजावेगें ॥

आस्तिक०--जैसे डारवनसाहबने लिखाथा कि बन्दरोसें मनुष्यबनेहैं सोयिह माननेमें नहींआयसक्ता क्योंकि यदि ऐसेहोता तो इतनेसमयमें फिरभी होरबन्दरोंकी कुछशकल बदलती परंतु उनकी पुच्छभी वैसीहीरही, और दोपैरोंसे चलनेभी नहींलगे, होरभी कोईलक्षण मनुष्योंजैसा नहींहुआ, अतः बन्दरोंसें मनुष्यबनना माननेमें नहींआयसक्ता और नांही इसमें कोईप्रमाण मिलताहै, ऐसेही मांसविषयमेंभी किसी२ का कुछ कहना माननेमें नहींआयसक्ता जब तक आर्षप्रमाण दृष्टान्त युक्तिओंसें सिद्ध न कराजावे ॥

विचारो कि—यूरपीनलोक डाकटरोंके रायसेंही खाना पीना करतेहैं, और फ़ौजोंमें सेहतकेलिये बड़ेबड़े लायक डाकटरोंकाही हुकम अवश्यमाना-जाताहै, हेमित्र—यदि मांसका खाना बीमारीओंके बढानेवालाहोता, इस्सें यदि मांसके खानेमें लायकडाकटरोंका राय न होता, तो फ़ौजीअफ़सर फ़ौजोंमें किसीकोभी मांस न खानेदेते और नांही फ़ौजोंमें मांस आनापाता होरयूरपीनलोकभी कभी मांसको न खाते, ऐसे तो किया नहींजाता इस्सें निःसंशय जानाजाताहै कि—यूरपीनबडेलायक डाकटरोंका राय मांसके गुणोंमें और खानेखुलानेमेंहै ॥

और जो कहा कि, 'मांसखानेसें मनुष्यभी एकदिन वैसेही क्रूर वहशी होजावेंगे' सो यिह कथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि, सूर्यवंशीय चन्द्रवंशीय

क्षत्रियराजमहाराजे आदिसमयसें अबतक शिकारमारते मांसको खाते खुलाते रहेहैं और युरपीनलोकभी मांसको खातेहीरहेहैं तो यिह क्रूरवहशी तो नहींहोगये प्रत्युत ज्यादामांसखानेवालोंके ऐसी दिमागीतक्तिहुईहैं कि, जिससें आकाशयानआदि बनाएहैं=

होरजो कहाकि, जिसवस्तुको देखकर हमे घृणाहोनी चाहिये उसेही प्रसन्नतापूर्वक खातेहैं,, सो इसमें घृणाकी कोइबात नहींहै क्योंकि, विहित मांसके खानेलिये वेदसूत्रस्मृतिओंमें प्रशंसाकीहुईहै फिर उसको अबतार ब्राह्मणक्षत्रियादिक उत्तमपुरुष आदिसें खातेखुलातेरहेहैं तो अब उसमेंघृणा क्यों होनी चाहिये, यदि मांसकी उत्पत्तिकी दृष्टिसें कहोतो दुग्धगेहुंशाक आदिकोंकी उत्पत्तिकोभी विचारो पहिले कईवार लिखचुकाहुं ॥

पूर्वपक्षी०-मांसाहारनेंही इससमय घीदूधआदिपदार्थोंका अभावकर दियाहै क्योंकि, बकराआदिके मांसको खाकर उसकेमांसको दुर्लभ कर दियाहै जिसका फल यह हुआहै कि, मांसाहारीलोगोंने गोमाताकामारना प्रारम्भकरदियाहै जिसमें कि, आप इसलोकमें दूधघीके न मिलनेसें दुर्बलता पूर्वक दुःखमयजीवन व्यतीतकर्के परलोकमें नरकके घोरदुःखके भागी बन रहेहो ॥

आस्तिक०-दूधघीआदिपदार्थोंका अभावनहींहै किन्तु उनका बड़ा मूल्यहोगयाहै वोभी मांसाहारसें नहीं किन्तु अन्नके निरखपरही सबखाद्य वस्तुओंका निरखहोताहै अन्न वलायतोंमें बहुतजाताहै इस्सें अन्नका निरख तेज रहताहै उससें दुग्धघृतका निरखभी बढ़गयाहै ॥

जब गेहुं बीससेर एकरुपैकाथा तब दूधभी चार पैसेका एक सेरथा जब गेहुं तेरासेरहुआ तब दुग्धभी दोआनेका सेरहोगया, इसीतरह जैसा जैसा अन्न महंगाहुआ वैसा २ दूधघृतभी महंगा होगया ॥

इससमय-खण्डभी एकरुपैका २॥ सेरहै, अब आपकहो कि, मांसाहार सें खण्डतो इतना मैहंगा नहीं होना चाहिये था वो इतना महंगा क्यों होगया अर्थात् अन्नके निरखपरही सब खाद्यवस्तुओंका निरख होताहै ॥

नयपाल कश्मीरआदि हिन्दुओंकी रियासतोंमें भेडबकरोंकाही मांस खाने में आता है तो वहां भेडबकरे खतम नहींहोगए, होरदेशोंमेंभी बकरे आदिका मांसभी दुर्लभ नहींहै किन्तु अन्नमंहगा होनेसें त्रोभी मैहंगाहोगया है बडेबडे अफ़सरोंको वो दुर्लभनहींहै तथापि उनकी जिद्दर रुचिहै उदर वो प्रवृत्त होरहेहैं ॥

पापात्माकों पहिलेभी दुग्धघृतआदिक दुर्लभहीथे और पुण्यात्माजनों को अबभी वो सुलभहीहैं ॥

धर्मशास्त्रोंसें निषिद्धकर्म और विहितकर्मके करणेंसेंही पापपुण्य पैदाहोतेहैं, पापोंसें दुर्बलता और दुःखमयजीवन होताहै, और पुण्योंसें बल व सुखमयजीवन होताहै अतः श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्धभाषणकर विरुद्ध कर्मोंकर परलोकमें नरकका घोरदुःख दुर्निवारहीहै ॥

—※०※—

पूर्वपक्षी०— जो विचारी महाउपकारकरनेवाली गौ यदि आपके मांस भक्षणकी आदतको छोड़नेंमात्रसें यवनोंकी छुरीसें बचसक्तीहै तो क्यों इस बुरे व्यसनको नहीं छोड़ते ॥

आस्तिक०—रामलक्ष्मणअवतारआदि परमपूज्यपुरुषोंनें धर्मबुद्धिसें करे आचरणको हेबाल बुरा व्यसन कहताहै मांसभक्षणके त्यागसें गोरक्षा नहीं होसक्ती क्योंकि, यहांसें मांस वलायतोंमें भेजाजाताहै और यहांभी गरीबजनोंको मांस दुर्लभहीहै, परन्तु श्रुतिस्मृतिओंसे विहितधर्मके त्याग-रूप नास्तिकताको क्यों नहीं तुम छोड़ते ॥

पूर्वपक्षी०–ऐक्ष्वाकुलप्रसन थोड़ा अपने बड़ोंकी ओर ध्यानदो कि, वह कैसे दयालु और पवित्रमनथे, महाभारत अनुशासनपर्वमें लिखाहै कि, अम्बरीष गय आयुनाथ अनरण्य दिलीप भरतआदिअनेक महाराजोंने मांस नहींखाया और यहसब महापराक्रमी सदाचारी और यशस्वी आपके ही बड़ेथे–एतैश्चान्यैश्चराजेन्द्र पुरामांसंनभक्षितम्

महा० भा० ॥इनसबमहाराजोंनें पहिले मांस नहींखाया ॥

आस्तिक०–हेऋषिकुलजात थोड़ा अपने बड़ोंकी ओर ध्यानदो कि, सत्यधर्मकी रक्षालिये दध्यङमहर्षिनें अपना सिर कटवाया, उद्दालकने अपना पुत्र नचिकेता मृत्युको देदिया और महाराजादशरथने प्राणोंका व प्राणोंजसाप्रियपुत्रका त्यागकरदिया परन्तु सत्यको नहीं छोड़ा, भगवद् व्यासजीने अपनीजन्मकथा लिखते २ असत्यकथन व छल नहींकरा, श्री मनिवर भरद्वाजजीनें प्रयागराजपर अपने आश्रममें नानाविधमांसोंसे भरतजीका आतिथ्यकराथा परन्तु श्रुतिस्मृतिवाक्यनका उल्लंघन नहींकिया कष्टहै कि, उनमहर्षिओंकी सन्तान तुम सर्वधर्मोंके मूल सत्यधर्मका अनादर करके नानाछलोंसें असत्यअर्थ सिद्धकरना चाहतेहो ॥

प्रश्न–यहां क्या छल करागयाहै, ॥

उत्तर–देखो–अर्द्धश्लोकालिखाहै इसका उत्तरार्द्ध इसके सम्बन्धवाला छोड़दियाहै अध्यायांक श्लोकांकभी नहींलिखा अबमैं उत्तरार्द्धभी लिखताहुं देखो समग्रश्लोकका क्या अर्थहै ॥

महाभारत प्र० ३२८–एतैश्चान्यैश्च राजेन्द्र पुरामांसं नभक्षितम् ॥ शारदंकौमुदंमासं, ततस्ते स्वर्ग

माप्नुवन् ॥१३॥११५॥७६॥ अर्थ—इनमहाराजोंने होरनोंनेभी पहिले शरत्ऋतुका कार्तिकमास मांस नहींखाया ॥इसकहनेसें अर्थात् आगेपीछे सदा मांस खातेरहेहैं, ।यिहअर्थ स्पष्टहीहै तोतुमने कर्तिकमासरूपाविशेषणका बोधक अर्द्धश्लोकको छोडकर अर्द्ध श्लोकमात्र लिख दिया इस्सें अर्थका अनर्थकरदिखलाया, इस्सें होर अधिक क्या छलहोसक्ताहै,

शंका—जब उनोंने कार्तिकमास मांस नहींखाया तो अभक्ष्य जानकरही नहीं खायाहोगा ॥

समाधान—ऐसे नहीं होमित्र—जब एकादशी नवरात्रेआदिकोंके व्रतमें अन्न नहींखाते वा निराहार करेंतो दुग्धभी नहींपीते, तो तब अभक्ष्यजान कर अन्नका दुग्धका त्यागनहीं कराजाता, किन्तु एकादिनका वा नवरात्रका 'व्रतकरनेसें' नियमविशेषकरनेसें नियमके पालनालिये तब अन्नको वा दुग्ध आदिकोभी नहींखातेपीते नियमसमयसें अनन्तर वैसेही अवश्य खातेपीतेहैं व्रतउपारणकरना आवश्यकहै, इसीप्रकार अम्बरीषप्रभृति महाराजोंनें कार्तिक मास व्रतकिया अर्थात् आगेपीछे वो सबमहाराजे मांसको खातेहीरहेहैं ॥

शंका—यदि—सदाकेलिये मांसकेत्यागका व्रतकरें तो होर अधिक फलहोगा ॥

समाधान—सदाकेलिये मांसके त्यागकाव्रत निवृत्तिमार्गवाले वानप्रस्थ संन्यासआश्रमीओंका धर्महै प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थाश्रमीओंका धर्मनहींहै अतः उनकेलिये अधिकफलका हेतु नहीं प्रत्युत हानिकारकहै तथाहि कहताहुं सुनिये—

१—वानप्रस्थके धर्मोंमें जैसे मांसका त्यागकहाहै वैसेही यदि गृहस्थ

के लियेभी कहो तो वेदसूत्रस्मृतिआदिकोंमें जो मांसभक्षणके विधायक हजारोंवाक्यहैं उनके अधिकारी कौन होसक्तेहैं अर्थात् गृहस्थहैं अतः सदा केलिये मांसके त्यागका व्रत गृहस्थजनोंका धर्म नहीं हो सक्ता ॥

२–प्रमाणांक२७में, २८में ,८१ आदिकोंमें, विहितमांसके नहींखानेकर अति दोषकहेहैं अतः–उक्तव्रत गृहस्थोंका धर्म नहीं प्रत्युत हानिकारक सिद्धहोसक्ताहै ॥

३—यदि उक्तव्रत गृहस्थजनोंका धर्महोता तो उक्त अम्बरीष आयुनाथ अनरण्य दिलीप भरतआदिमहाराजे और वेदवेताअगस्त्यादि मुनिजन तथा सीतारामलक्ष्मणादिक और स्वधर्मनिष्ठ युधिष्ठिर भीमअर्जुन नकुल सहदेवआदिक उसधर्मको क्यों न धारणकर्ते उन्होंने सदाकेलिये मांसखानेके त्यागका व्रत धारण नहींकरा प्रत्युत विहितमांसको खाते खुलाते रहेहैं अतः वो गृहस्थजनोंका धर्मनहीं किंतु वानप्रस्थसंन्यासआश्रमीओंका धर्म सिद्धहोसक्ताहै ॥

४—यदि उक्तव्रत गृहस्थोंका धर्महोता तो प्रमाणांक १८३ और २४२ आदिवेदसूत्रग्रन्थोंमें उत्तमसंतानलिये मांसके खाने का, छीमहीनेके बच्चेको नानामांसोंके खुलानेका विधानही कैसेकरसक्ते ॥

और जो तुमने कहा कि—थोडा कृष्णजीकी लीलाकीओर ध्यानदो कि—महाराजनें बाल्यावस्थामें गाओंकी स्वयं सेवाकरके समस्तजगत्को गाओंकी सेवाकरनेकी शिक्षादी, सो यद्यपि जब मथुरापुरीमें क्षत्रियवंशमें कृष्णजीगए तबसें गौएं नहींचराई और नांही अपने पुत्रपौत्रोंसें गौएं चरवांई और नांही श्रीरामचन्द्रादिकोंने गौएं चराई तथापि जब कृष्णजी

नन्दगोपके गृहमें गोपालवेष धारेरहेहैं तबही गौएं चराईहैं इस्सें शिक्षादी कि—गौएं चारनी गोपोंका मुख्यकर्महै और घरघरमें गौएं रखनी तो सबमनुष्यनको योग्यहै, ऐसेही गोरक्षाहोसक्तीहै, और घृत दुग्धादिकभी सुलभहोसकेहैं॥

पूर्वपक्षी० - प्रमाणांक १७४ में जो कहाहै कि--अपनेबलसें मारेहुए जंगलीमृगोंके मांसको खाताहुआ जिससें दोषवाला नहींहोता वोहेतु यिहहै, इत्यादिलेखसें जानाजाताहै कि-शिकारकर मांसखाना क्षत्रियोंको योग्यहै, होरबकराऽऽदिकोंका नहीं ॥

आस्तिक०—यिह आपका कथन असत्यहीहै क्योंकि वहां तात्पर्य्य यिहहै कि जंगलीमृगोंके मारणेमें देवताऽऽदिकोंके उद्देशकी अपेक्षा नहीं, क्योंकि महर्षिअगस्त्यजीनें तपोबलसें सर्वदेवतोंनिमित्त जंगलीमृग प्रोक्षित करदियेहुएहैं, और भेडदुम्बाबकरोंको देवताऽऽदिकोंके उद्देशकर बलिदान करें, जैसे कि–गोरक्षीआ व ठाकुर करतेहैं।

यदि दुम्बाभेडबकरोंके बलिदानका व उनके मांसभक्षणका क्षत्रियोंको अधिकार न हो तोफिर धर्मपुस्तकोंमें उसका विधान किसकेलिये कराहै देखो श्राद्धके प्रमाणप्रकरणमें जो मेढाबकराऽऽदिकोंका मांसबनाना लिखाहै वो प्रायः क्षत्रिय व वैश्यजनोंके लियेही कहाहै, और प्रमाणांक १६२ आदिमेंभी क्षत्रियराजाके भोजनलिये बडाबकरा पकाना लिखाहै,।

बहुत क्या यद्यपि प्रमाणांक १०४ आदिकोंमें ब्राह्मणोंकाभी अधिकार कहाहै, अतः देवताऽऽदिके उद्देशकर चारोंवर्णोंका अधिकारहै, तथापि क्षत्रियोंका अधिकार मुख्यहै आवश्यकहै, देखो प्रमाणांक २०० आदिकोंमें हररोज बकराऽऽदि पशुके बलिदानका विधानहै परन्तु, क्षत्रियादिकोंके चित्तमें जो जैनी भाईओंने हौआ घुसेड दियाहै, वो झूठाही हौआ अधोऽधः गिरारहाहै ॥

अहिंसादिग्दर्शनमें जैनीविजयधर्मसूरिजीने बंगमगधआदिदेशोंके मनुष्योंको कातर कहाहै सो वहांकेभी नतो सबमनुष्य कातरहैं, नांही सबवीरहैं ॥

हौर जो लिखाहै कि—छपरेजिलेके आदमी प्रायः सत्तुही खाकर गुजर करतेहैं, तो हेभ्रातः छपरेजिलेमें क्या गेहुं चावलादि अन्न और मांसघृतदुग्धादिकपदार्थ नहींहोते, यदिहोतेहैं तो वो कहां गेरेजातेहैं और वहांके क्षत्रियठाकुरलोक तो मांसको खातेहीहैं ॥

हौरजो लिखाहै कि, एकपुरुषने कहाकि, कुछदिन पहिले मैंने एक बड़ेसुन्दरबकरेको पालाथा, वह मुझे अपना प्रेम पुत्रसेभी अधिक दिखलाता था और मैंभी उसमें बहुतप्रेम करताथा अतएव वह प्रायः दानाचारा मेरे हाथसे दिये बिना नहीं खाताथा, और जब मैं कहींबाहर चलाजाताथा और आनेमें दोचार घण्टकी देरहोजातीथी तो वह रास्तेको देख २ कर स्यांर किया करताथा, अगर कहीं एकदो दिन लग जाताथा तो चारापानी बिलकुल नहींखाताथा और मेरेआनेपर बड़ाआनन्द प्रकट करताथा, इत्यादिकलेखभी बनावटीहै क्योंकि-पशु प्रेमकरेंगे तो चटने लगपड़ेंगे पूछली हलानेलगेंगे, ऐसे तो होताहीहै परन्तु बकराऽऽदिक पशु दोदिन भूखेरहें और दूसरेके हाथसे चारापानी न खावें नाहींपीवें, ऐसे नहींहोसक्ता अतः इत्यादि बनावटीबातेंहैं माननीय नहींहोसक्तीं—

और जो लिखाहै कि—अगर मछलीमांसको छोडकर्के दालभातकाही आहार रक्खाहोता तो आजदिन बंगालवगैरह देश बुद्धिबलमें बहुतही बढजाते, अतएव इंगलैण्ड जो आजकल बुद्धिबलमें तेजहै वहभी भात-काही प्रतापहै ॥

सो हेपाठको विचारो तो विजयधर्मसूरीजीका यिहलेखभी हासिकेही-योग्यहै, इंगलेण्ड बुद्धिबलमें तेजहै तो क्या इंगलेण्ड मांसको नहींखाता, दालभातहीकेवल खाताहै हेभ्रातः अब जैनीविजयधर्मसूरीजीसे पूछाचाहिये कि–मांसाहारसें बहुतपुश्तोंतें निवृत्तहुए दालभातखानेवाले तुमजैनीभाई यूरपइंगलेण्डकीन्यांई बुद्धिबल कलाकौशल्य राज्यप्रताप आदिकोंमें तेज क्यों न होगए।

शोकहै कि—भक्ष्याभक्ष्यके निर्णयमें विजयधर्मसूरीजीने कैसीकैसी असत्ययुक्तिबनाकर लिखीहै, हेपाठको–वो यथार्थनिर्णयलिये नहीं किन्तु ऐसे २ असत्यलेख यथार्थनिर्णयमें गिरानेवाले अर्थात् धोखादेनेवालेहोतेहैं ॥

श्रीमज्ञानत्रिंशिकाग्रन्थमें जैनीआत्मारामजीने लिखाहै कि—ब्राह्मणोंके धर्मको वेदमार्गको तथा यज्ञमेंहोतीहिंसाको खराबका इसीधर्मने लगायाहै, यहमहादयारूप प्रेमरूप धर्म तो जैनकाहीहुआ कुलहिंदुस्तानसें पशुयज्ञ निकलगयाहै फक्तछेक दक्षणमें जहां बौध या जैनोंकी छाया पड़ नहीं सकीहै वहांही कायमहैं ॥

और श्रीमान् बालगंगाधरतिलकजीके भाषणसेंभी आत्मारामजीने लिखाहै तिलकजी का प्र० ३२६—**पहिले ब्राह्मण और जैन-धर्मका बडाझगडा चलताथा अहिंसातत्त्वके निकालनेमें बडाविवाद हुआथा, ब्राह्मण कहते थे कि–वेदमें पशुयज्ञकरनेकी आज्ञाहै तो हम किसतरह छोडें, जैन उपदेशकोंने जुबाव दिया**

कि–वेदमें हिंसाहोवे तो वहवेद और हिंसा से तृप्तहोनेवाले देवता हमको मान्य नहींहैं मतलब कि–वेदमें पशुयज्ञ फरमाने वाला जो श्रौत प्रकरणहै उससेंही जैनोंको वेद प्रमाणभूत नहीं माननेका कारणमिलाहै, अंतमें ब्राह्मणोंने जैनोंका अहिंसाधर्म स्वीकार किया ॥

जैनधर्मका तत्त्वज्ञान यद्यपि आज प्रचारमें नहींहै तथापि जैनोंके अहिंसाऽऽदिआचारकी छाप आज ब्राह्मणधर्मपर पूर्णरूपसें बैठीहुई है--पंचद्रविडआदिब्राह्मणोंमें मांसभक्षण दूर-हुवाहै वो जैनोंकाही प्रतापहै, वैष्णवधर्ममें यज्ञकरनेसमय पिष्टपशु हवनकरनेका प्रकारहै वोभी जैनधर्मकी ब्राह्मणउपरहुई असरसें उत्पन्नहुवा, जीतेहुए पशुके बदले पिष्टपशुका रूपान्तरहै ॥

इत्यादि तिलकजीका भाषण और आत्मारामजीका लेख ठीकहै अर्थात् वेदसूत्रस्मृतिआदिकोंमें अजशशहरिणादिपशुओंके बलिदानका और विहितमांसके भक्षणका विधान तो हजारों वाक्यनसें कराहुआहै, सो जैनीउपदेशकोंनेंही बलात्कारसें उपदेशकर२ के बलिप्रदानका विहितमांसके

खानेका त्यागकरवादिया अर्थात् वैदिकमतवालोंको वैदिकमतमें गिरादिया यिह सत्यहै परन्तु ऐसे करने कर "**आप डूबे परोहिता यजमानभी गाले**" इस कहावतको जैनीभाईओंने चरितार्थ करदिया और श्रुतिस्मृतिओंको परमप्रमाणरूप व उनके कर्ताओंको सर्वज्ञ सिद्धकरदिया वो कैसे तथाही कहताहूं सुनिये ॥—

जैसे अदृष्टफलके हेतु जो कर्महोतेहैं उनका उसीसमय फल नहींहोसक्ता किंतु किसीका जन्मान्तरमें किसीका बहुतजन्मपीछे फलहुआकरताहै, ऐसे ही जैनीभाईओंके प्रयत्नसे श्रौतस्मार्तकर्मोंके त्यागका फलभी उससमयमें तो होहीनहीं सक्ताथा फिर उससमयके व्यतीतहुए उसका फल कैसाहुआ हेभ्रातः-प्रत्यक्षदेखलीजिये कि हिंदुस्तान पठनोंका शिकारगाह उसमें हिन्दु तथा जैनीभाईजी शिकारबनगए गजनीसे कितनीदूर दक्षिणमें सोमनाथकी मूर्तिको तोडकर, बहुतही जवाहरात लेकर वहांकेही हिन्दुओंको जबरदस्ती बगारी पकड़कर अफगाहनस्तानको लेगए, उनोंसे बोझउठाना, घास खुदवाना वगैरह नीचकाम लियेगए, उनको खानेलिये चने दियेजातेथे हरसाल काबुल गज़नी वगैरहसे आयकर पठानलोक पंजाब सिन्धु देहली मथुराआदिसे धनवगैरहलूटकर और नवीनयुवा लटकीआं लटकोंको पकडलेजातेरहे इसीसे कहावतेंबनीकि **खायापीया लाहका रैंदा-ऐमदशाहका,,**

बहुत क्या हजारों नहीं किंतु लाखों लटकीआं लटकेवगैरह जबरदस्ती पकडकर लेगए, वह गोलीएं गोले बनाएगए ॥

हेपाठको-विचारो कि--जब किसीकुलीनपुरुषकी स्त्री वा कन्याकीतर्फ कोईपुरुष कुदृष्टिसे देखे तब उसको ऐसादुःखहोताहै कि—इसको अभी मारडालूं और जब किसीएकभ्राताकी कन्या दूसरेभ्राताके घरमें एकदोदिन

रहजावे और उसको यिह खबर नहोकि-"मेरी कन्या कहांहै,, तो इतनेसें उनको मरणदुःखकीन्यांई गोतेआनेलगपड़तेहैं इससें भी अत्यन्तअधिक जब सास ससुर मातापिताऽऽदिकोंके देखतेदेखते कन्याओं पुत्रस्त्रीओंको छं छं फिटलम्बे हृष्टपुष्टजवानपुरुष जबरदस्ती हाथोंसें पकड़ लगए तब उनकी और उनके मातापिताऽऽदिकोंकी कैसीअत्यन्तदुर्दशाहुईहोंगी ॥

शंका-इत्यादि दुर्दशा तो बेइतफाकीसें दुर्बलतासें हुईहैं, समाधान--टीकहै परन्तु वो बेइतफाकी व दुर्बलताभी क्यों हुई क्यों होरहीहै, अर्थात् आर्षमतके छुटजानेसें मन्दबुद्धि होनेकर हुई, जहां २ मन्दबुद्धि होतीहैं वहां २ ही अपने घरमें बेतइफाकी दुर्बलता उस्सें दुर्दशा होतीहैं ॥

जैनीभाईओंकी बडी बुद्धिमत्तासें श्रौतस्मार्त धर्मोंके छुटवानेकर इत्यादिक महाअनर्थरूपफल प्राप्तहुए और जैनी तो क्या हिन्दुभी मरी हुईकोम कहीजानेलगी वो हैभीठीक ॥

इत्यादिक महाअनर्थरूपफलमिलनेकर सिद्धहुआ कि-श्रुति स्मृतिओंके प्रवर्त्तकपुरुष महादीर्घदृष्टि सर्वज्ञहूएहैं, उनके रचित वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थ परमप्रमाणहैं ॥

फिर बहुतकालपीछे गवरमिण्टअंगरेजके प्रतापसें हिन्दुओंकी दुर्दशा दूर तो हुई परंतु पेशावर बन्नू कुहाट आदिकोंतर्फ-बनीहीरहीं तथापि हिन्दुओंको गवरमिण्टका सदाकृतज्ञहोनायोग्यहै, क्योंकि हिन्दुओंका माल जान व इज्जत गवरमिण्टकेही प्रतापमेंहै ॥

फिर अबी पांचवर्षहीहुएहैंजोजिलाभंगके अनेकग्रामोंमें केवलहिंदुओंको मुसलमानभाईओंनेलूटा फिर उनके घरोंको आगलगादी पुनः पितासमुर-

आदिपुरुषोंको और बेटी बहुआदिस्त्रीओंको नग्नकरदिया फिर औरभी बहुत सखतीएंकीं ॥

———

पूर्वपक्षी०-हिंसासें पुण्यउदय कबीनहींहोसक्ता और हिंसाके त्यागसें पाप कबीनहींहोक्ता व नांही किसीअनर्थकी प्राप्तिहोसक्तीहै ॥

आस्तिक०-सर्वत्र यिह नियमनहींहै तथाहीसुनिये डाकूओंकी चोरोंकी 'हिंसासे' पीडादेनेसें हाकिमोंके पुण्यउदयहोसक्ताहै उनकी हिंसाके त्यागसें पाप उदयहोताहीहै रणमें हिंसाकरनेसें पाप नहींहोसक्ता किन्तु पुण्यहोताहै और औषधालय शफ़ाखाने जारीकरनेसें व्रणकृमि रुधिरकृमि मलकृमि कूपकृमि दद्रु मिरगीआदिरोगोंकेकृमि, इत्यादिजीवोंकी औषधोंकर हिंसा करनेसें पुण्यउदयहोसक्ताहै इसीहेतुसें राजेमहाराज पातशाह तथा होर योग्य धनी पुरुषभी धर्मार्थ औषधालय शफ़ाखाने लाखोंरुपे खरचकर्के खोलतेहैं ॥

औषधोंके न सेवन करने, न सेवनकरनदेनेसें अर्थात् उन कृमिओंकी हिंसाके त्यागसें पाप उदयहोसक्ताहै और मनुष्यादिकोंकी घातिरूपअनर्थकी प्राप्तिभी स्पष्टहीहै—

इसीसें पूज्ययतिआदि जैनीभाईभी औषधोंका सेवन करते करातेहीहैं ॥

पूर्वपक्षी०—अन्यउपायोंके अभावसें ऐसेकृमिओंकी हिंसा तो गृहस्थ-जनोंको करनी पडतीहीहै क्योंकि—उससें विना गौ भैंस मनुष्यादिश्रेष्ठजीवोंकी हिंसाहोतीहैं परंतु भेडबकराऽऽदि पशुओंके बलिदानकी कुछआवश्यकता नहीं क्योंकि मांससेंविना अन्नादिकोंसेभी निर्वाह होसक्ताहै और दुग्ध घृतसें बलभी बहुतहोसक्ताहै ॥

आस्तिक०—गवरमिण्टके प्रतापसें निर्वाह तो होहीरहाहै अतः परमेश्वर गवरमिण्टको खुश रखे परंतु जिसजीवनमें अपनी और अपनी-

औरन लड़के लड़कीओंकी रक्षा न करसकै ऐसा निर्वाहमात्रकर जीवनाभी तो पापोंकाही फलहै अर्थात् मरणसेंभी अधिकहै, ऐसेजीवनको धिकारहै दुग्धघृतमें बल तो होताहीहै परंतु मांससें बलभी और पौष्टिकताऽऽदि विशेषगुणभी अधिकहोतेहैं वो पहिले प्रबलप्रमाणोंमें दिखाचुकाहूं ॥

विचारोकि—आठवर्षहुएहैं कि—कलकत्ताशहर मारवडीबाजारमें मारवाडीओंको पठानोंनेलूटा हैपाठको—वो पठान कौनथे कि—मेवादाना बेचनेवाले ममूलीआदमी, और वो मारवाडी कौनथे कि—दश २ वीस २ पचास २ लाखके धर्नामेंट, जिनके पास पांच २ दश २ वीस २ नौकरभी रहतेहीहैं, बहुतलोक जानतेहीहैं मारवाडी बनीए घृतदुग्धके ज्यादाखानेपीनेवालेहोतेहैं ऐसरहीशोंके लाखोंकी लूट परदेसीममूलीपठानोंनेकी, तब ठीक सुनागया कि, सेठसाहिबोंने कोइ कहीं, कोइ कहीं जाकर वक्तको टाला, पीछे पठानोंने जोकुछ अयोग्यसखतीएं करी वो मैं नहींलिखसक्ता ॥

और यदि तुम कहो कि—सूर हरिणआदिक तो यद्यपि खेतका नुकसान करतेहैं तथापि निरपराध भेडबकराऽऽदिकोंकी हिंसा क्यों कीजावे तो हेभ्रातः—जलपीनेसें जो जलके हजारोंसूक्ष्मजीव तुम्हारे जठराग्निमें स्वाहा होतेहैं वोभी तो निरपराधहीहै, और कूपकृमि व्रणकृमि रोगकृमिआदिभी तो कुछअपराध नहींकरते किंतु गुजरकरतेहैं तो उनहजारोंका औषधकर क्यों नाशकराजाताहै ॥

वास्तवसे देखो प्रमाणांक ६० आदिकोंको, व ३८ व १०२, व २०० व २०६ आदिकोंको जब विधाताने अजप्रभृतिपशु बलिदानालिये फिर खानेलिये रचेहैं, इसीसें सब देशोंमें यिहभेडबकराऽऽदि इसीकाममें लगाए जातेहैं, फिर उसमें धर्मग्रन्थोंके विधानभी बहुतहीहैं और इनके बलिदानसें फलभी श्रेष्ठही लिखाहै तो इस्से संकोच करना दुराग्रहही नहीं किंतु

विधिओंके उल्लंघनसें अतिदोषभी कहेहैं अतः जैसे मूली बैंगन आदिस्था वरजीव खानेकेलिये पैदाकेरजातेहैं, वो तियारहोनेपर निरपराधभी काट पकाकर खाएजातेहैं उनके सेतकी सदारखा कोईभी नहींकरसक्ता।

ऐसेही ईसाई मुसलमान हिन्दु वगैरह सबभाई मिलकर एकमतिकरें कि--भेडबकरादुम्बा कोई न माराजावे तो उनकी इतनी पादैशहै कि-- वो संभालेही नहींजासके॥

जैसे मच्छीवगैरहको छोडकर एकलाहौरशहरमें ५७५ भेडबकरा व दुम्बा हररोज मारणेका औसतहै, और लाहौरजिलाके देहातमें अर्थात् तासील ठाना छोटेबडे ग्रामवगैरहमेंभी ३०० ही रोजाना जानलीजिये, एवं ८७५ भेडबकरादुम्बा एकलाहौरजिलाभरमें हररोज मारीतेहैं, ऐसे एकमहीनेमें २६२५०, एकवर्षमें तीनलाख पंदराहजार भेडबकरा एक-लाहौरजिलाभरमें बलिदान कियेजातेहैं॥

हेपाठको—उक्तसबभाईओंकी एकमतिसें यदि वो कोईभी एकवर्षतक नहींमाराजावे तो विचारो कि–उन ३१५००० केलिये कमसेंकम ६३० बडेकोठे, और छैहजार तीनसौ चरवाले होनेही चाहिये, फिर उनके चर-णेकेवास्ते ५० मीललम्बा अर ३१ मीलचौडा जंगलभी अवश्यंचाहिये, इसमें सोचिये कि—इतनाइन्तज़ाम करना एकजिलेमें तो कहां तीनजिल-ओंमेंभी मुश्कलैहैं,॥

हेभाईओ–इतना इन्तज़ामभी एकवर्षकी रोकावटसें जरूरीचाहिये, फिर दूसरे तीसरे चौथेवर्षकी रोकावटसें तो कहांका कहां इन्तजामका हिसाब पहुंचेगा, अर्थात् तीन चारवर्षतक रोकावटसें तो दस व बाहरा लाख भेड-

बकरा एकलाहौरजिलामें होजातेहैं, इतनोंका पालन पोषण दसजिलोंमेंभी नहींहोसक्ता ॥

यदि आप कहें कि—उनमें मरेंगेभी तो बहुतही तो हेमित्र उनसें बच्चेभी तो लाखोंही हरसाल पैदाहोंगे ॥

शंका -संभवहै कि - भेडोंकी मरीसें बकराभेड बहुतही मरजाएंगे समाधान- ठीकहै परंतु उसमें लाभ क्या होगा, अर्थात् विधिवाक्यनकाभी पालन न हुआ, दृष्टान्तोंमें दिखलाए शिष्टाचारोंकाभी आदर न हुआ, उनभेडबकरोंकोभी केईघण्टे दुःख देखनाही पडा, और मांसके गुणोंका भी लाभ न मिला —

यदि आप कहें कि—लाहौरमें मनुष्यनकी आबादी बहुतहै अतः छोटेजिलओंमें इतने नहींमारेजाते, तो बडे २ जिलओंको छोडकर, छोटे २ जिलओंमेंभी तामील ठाने छोटेबडे ग्राम मिलाकर किसीजिलाभरमें १००० किसीमें ८००,किसीमें ५००, किसीमें ४००, अर्थात् किसीमें कम किसीमें ज्यादा, आप हरएक जिलामें औसत ५०० भेडबकरा दुम्बा हररोज बलि दान किया जाता जानिये, इसहिसाबसें ॥

हरएकजिलामें एक महीनेमें १५०००, एकवर्षमें एकलाख अस्सीहजार बलिदान होतेहैं, यदि वो एकवर्षतक कोई भी नहींमाराजावे तो उन १८०००० केलिये ३६० बडेकोठे, तीनहजार छै सौ चरवाले, और उनके चरनेकेवास्ते ४५ मीललम्बा अर २० मील चौडा जंगलभी एक २ जिलामें जरूरी चाहियेगा ॥

इसमें विचारो कि—इतना इन्तजाम एक २ जिलामें कैसे होसक्ताहै, यदि कठिनतासें एकसाल कियाभी जावे, तो फिर दूसरे तीसरे चौथेवर्षकी

रोकावटसें तो सात आठ लाख भेडबकरादुम्बा जमाहोजातेहैं, सो इतने भेडबकरोंका पालन पोषण होही नहींसक्ता, अतः इनकी इतनीबहुत पैदाशहोनेकर जानाजाताहै कि-यिह भेडबकरादुम्बा परमेश्वरनें बलिदानके लियेहीरचेंहें। यिह प्रमाणांक ६० आदिकोंमेंभी स्पष्टकहाहीहै ॥

हेपाठको—सम्यक्विचारदेखें तो अजआदिकोंके बलिदानके और विहितमांसभक्षणके त्यागकरने व करानेसें जैनभाइओंकेभी कोईफलदेखने-में नहींआता क्योंकि-जैनीभाईओंसें बुद्धिमें बलमें रूपमें कलाकुशलतामें धनमें वीरतामें तेजमें आराममें पादेशमें राज्यादिकोंमें मांसाहारी यूरपीन और राजेमहाराजेआदि अधिकहीहैं ॥

यदि कहोकि—जैनीओंपासभी धनबहुत होताहीहै, तो यिहकथनभी तुच्छहीहै क्योंकि-दस वीस पचासलाख रुपैआ किसी २ पासहुआ तो वो मांसाहारी राजेमहाराजोंके बराबर तो नहींहोसके अर्थात् इतनाधन तो उनकीदृष्टिसें तुच्छहीहै ॥

हेभ्रातः—यदि जैनीभाईओंके धर्माभिमानको देखा जाए तो मांसा-हारीओंसें हजारों दरजाअधिक बुद्धि बल रूप कलाकौशल्य वीरता तेज राज्यप्रतापआदि जैनीओंके होनेचाहिये क्योंकि यिह सब धर्मरूपवृक्षके-हीफलहैं परन्तु ऐसे देखनेमें नहींआता प्रत्युत आदिसें मांसाहारी राजे महाराजेपातशाहआदिकोंसें—

जैनीभाईओंकी हजारोंदरजान्यून सम्पदा अर्थात् अतितुच्छसम्पदाहै इस्सें जानाजाताहै कि—अधिकारभेदसें यथायोग्य धर्मोपदेश न करनेकर जैनीभाईओंका धर्म धर्माभासहीहै ॥

यदि जैनीभाईजी कहें कि—हम तो इनपदार्थोंकी कामना नहींकर्ते किंतु वैराग्यसें इनसबपदार्थोंका त्यागकर मुक्तिकोंही चाहतेहैं, तो सबकेलिये यिह कथनभी अयुक्तहीहै क्योंकि त्याग तो साधुजनोंका भूषणहै, गृहस्थजनोंकेलिये वो कहनाही अयुक्तहै क्योंकि गृहस्थजन तो कार व्यापार धनसंचय विवाहआदि सबकार्य्य कर्तेहीहैं ॥

मुक्तिभी कोईप्रत्यक्षपदार्थ नहींहै इसीसें सबमतोंवाले अपने २ मतमें मुक्तिका भिन्न२ रूप वर्णन कर्तेहैं, जैनमतमें शिलारोहन मुक्तिहै, वो हौरसबमतोंमें ऐसीकोईशिला हैहीनहीं ॥

यदि आप कहें कि—उत्तमसंतानकेलिये विहितमांसखानेका विधान महर्षिओंनें कराहै वो मोक्षकांक्षीओंकेलिये नहीं, तो हेमित्र ऐसेविधानकाभी यिहतात्पर्य्य स्पष्ट सिद्धहोहै कि-मोक्षलिये आत्मज्ञानके साधन श्रवणमनन निदिध्यासनआदि दालभातदुग्धादि भोजनकरभी सिद्धहोसक्तेहैं परंतु उत्तमसंतानकेहोनेलिये विहितमांसका खाना आवश्यकहै, वो

अजशशहरिणादिकोंका बलिदान व (विहितमांसका खाना मुक्तिमें प्रतिबंधक नहींहै)क्योंकि—प्रमाणांक ४८ आदिकोंमें विहितहिंसा अहिंसारूप मानीहै, औरउक्तप्रमाणोंनें मांसको घृततेलशाककीन्याई शुद्ध पवित्र कहाहै, विहितमांसखानेसें निर्दोषता कहीहै, विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष कहेहैं, हेमित्र यदि वो प्रतिबंधक होता तो ऐसेलेख न लिखसक्ते,

यदि विहितमांसका खाना मोक्षमें प्रतिबंधकहोता तो श्रेष्ठपुत्रके होनेलिये प्रमाणांक १८३ वेदान्तउपनिषद्में बकरा मृगादिके मांसखाने का विधान न कर्ते, और देखो प्रमाणांक ३०७ व २६९ आदिउक्तप्रमाणोंको जीवन्मुक्तपुरुष वेदवेत्ताब्राह्मण महर्षि तथा सीताराम लक्ष्मणआदिअवतार

और इक्ष्वाकु युधिष्ठिरप्रभृति धर्मात्मामहाराजे विहितमांसके खानेमें प्रवृत्त नहोसक्ते, यिहसब परमपूज्य श्रेष्ठपुरुष विहितमांसको खाते खुलाते रहेहैं अतः विहितपशुहिंसा व विहितमांसका खाना मोक्षमें प्रतिबन्धक नहींहै ॥

शंका--मांसखानेकर क्रूरता होतीहै ॥

समाधान--जगत्में कोमल वा क्रूरआदि सबप्रकारके मनुष्यहोतेहैं परंतु उनमें पादतल कंटककीन्याई कोमलमनुष्योंको अधर्मशील क्रूरपुरुष पीडित करतेहीहैं ऐसेक्रूरजनोंको क्रूरपुरुषही दमन करसक्तेहैं ।

इस्सें अधर्मशील क्रूरजनोंके दमनलिये न्यायधर्मनिष्ठ क्रूरपुरुषभी अवश्यंअपेक्षितहैं ॥

—०—

पूर्वपक्षी०—मांसभक्षणके निषेधकभी स्मृतिआदिपुस्तकोंमें बहुतही वाक्यहैं वो अप्रमाण तो नहींहैं ।

आस्तिक०—ठीकहै योगारूढहोनेसें महर्षिओंका कोईभीवाक्य अप्रमाण नहींहै, परन्तु हेपाठको उन्मत्तप्रलापवत् मूर्खपुरुषोंके वाक्य परस्परविरोधीहोतेहैं, योग्यविद्वानोंके नहीं तो योगारूढमहर्षिओंके वाक्य कैसे विरोधीहोसक्तेहैं इस्सें अविवेकीजनोंको विरोधी भास्तेहुएभी भिन्न २ विषयकहोनेसें वोदोनोंप्रकारके वाक्य परस्परविरोधी नहींहैं ।

जैसे प्रमाणांक ४५ केव्याख्यानमें श्रीशंकराचार्य्योंके वाक्यनसें दिखाचुकाहुं कि—अहिंसाके और हिंसाके विधायक वाक्यनका भिन्न २ विषयहोनेसें परस्पर विरोध नहींहै ऐसेही इनवाक्यनमेंभी जानलीजिये कि-मांसभक्षणके विधायक और निषेधक वाक्यनका भिन्न २ विषयहोनेसें वोवाक्य परस्पर विरोधी नहींहैं ।

अर्थयिह—विधायकवाक्यनका विधिविहितमांसका भक्षण विषयहै, और निषेधकवाक्यनका अविहितमांसका त्याग विषयहै ॥

इसीसें देखो प्रमाणांक ६१, व १२४, व १०३, व १६५, २१२ आदिकोंमें मांसखानेका विधानकर्के फिर प्रमाणांक २२०, व व ८२, व १२३, व ३८, व २३४, व २३८, व २१४, आदिकोमे महर्षिओंने व्यवस्था दिखलादीहै कि-विधिविना मांसको खाएंनहीं किंतु विधिविहित मांसको खाएं, स्मृतिकार महर्षिओंकी दिखलाई इस व्यवस्थासें विरुद्ध किसी भाष्यकार टीकाकारका लेख माननीय नहींहोसक्ता, और प्रमाणांक ३१, व ३७, व ३६, व ४०, व ४१, आदिकोंमें उसका प्रकारभी महर्षिओंने दिखलाय दियाहै कि-देवताऽऽदिकोंको अर्पणकर्के अर्थात्

अग्नये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा इन्द्राय स्वाहा,

ऐसे होमआदिकोंसें देवार्पणआदिकर्के मांसखानेकर कुछपाप नहींहोता, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष कहनेकर आस्तिकगृहस्थजनोंकेलिये विहितमांसकेखानेकी आवश्यकता सूचनकीहै क्योंकि- बल बुद्धि पुष्टिआदिकोंसें विना गृहस्थजनोंका जो जीवनहै वो अतिनिकृष्टजीवनहै अतः गोरसवेंचें हरिमिलें एकपंथदोकाज इसदृष्टान्तसें श्रुतिस्मृतिओंके ,विधिका, हुकमका पालन, पहिलेशिष्टपुरुषोंके आचारकी अनुसारिता, और बलबुद्धिपुष्टिआदिकोंकी अधिकता, इत्यादिकार्योंके लिये गृहस्थजनोंने अजआदिकोंका बलिदान व (विहितमांसका भक्षण अवश्यं-कराचाहिये) ॥

हेमित्र—तुम्हारीयुक्तिओंका उत्तर तो दियागया अब मैंभी कुछक कहताहुं सुनिये ॥

१-हेभ्रातः—तुमने महाभारतमें मांसकेनिषेधक भीष्मपितामहके बहुतश्लोक दिखलाएहैं उनहीमें भीष्मजीने अपने तात्पर्यका दर्शक श्लोक

कहाहै वो प्रमाणांक ३८में मैंलिखचुकाहुं उसको फिर देखलीजिये उसश्लो-कमें भीष्मजीने स्पष्ट कहाहै कि—वेदविधिमें मांसखानेकर दोष नहींहोता, यज्ञलिये अर्थात् बलिदानलियेही बकरेभेडआदि रचेगएहैं, ऐसे भीष्मजीके कथनसेंही भीष्मजीके मांसनिषेधक सबश्लोकोंका तात्पर्य निःसंशय सिद्ध-हुआ कि—वोसबश्लोक भीष्मजीने अविहितमांसके निषेधक कहेहैं. ।

इसी तात्पर्य सें भीष्म जीके उपदेश सुननेसे पीछेभी युधिष्ठिरजीने अश्वमेधयज्ञ कियाथा जिसमें श्रीकृष्ण तथा व्यासजीभी विद्यमानथे वहां ३०१ पशुओं का बलिदान करा गया इससे भी जानाजाताहै कि—पहिले भीष्मजीके सबश्लोकोंमें अविहितमांसका निषेध कराहै, नहीं तो फिर धर्मात्मायुधिष्ठिरजी ऐसायज्ञ कैसे करसक्तेथे ॥

२—पहिले जब रायबलारके मिलनेको गुरुनानकदेवजी गएथे तब रायबलारने भोजनका निमंत्रण कहा और पूछा कि— आपकेलिये बकरा बनवायाजावे तबभी गुरुमहाराजनें निषेध नहींकरा किंतु स्वीकार किया, फिर एकसमय श्रीगुरुनानकदेवजी कुरुक्षेत्रमें विराजमानथे वहांपटनाके राजकुमारने एकहरिणमृगको मारकर गुरुमहाराजकी भेटकरा तब गुरु महाराजने उसराजकुमार पर निराजगी नहींकी और नांही उसमृगमांसको वापसफेरा किंतु उसको स्वीकारकर्के बनवाया, यिह कथा जन्मसाखीमें प्रसिद्धहीहै इस्से जानाजाताहै कि उसकालमें मांसका आमरिवाजथा क्योंकि यदि ऐसा न होता तो सो राजकुमारजी ऐसे न करसक्ते ॥

और यिहभी जानाजाताहै कि—गृहस्थजनोंकेलिये अज हरिणादिकों का मांस श्रुतिस्मृतिओंसे विहितहै भक्ष्यहै क्योंकि—श्रीगुरुनानकदेवजीने राजकुमारको मांसखानेके निषेधका उपदेश नहींकरा प्रत्युत पंडेओंके विवादसे श्रीनानकदेवजीने पंडेओंको मांसविषयका विस्तारसे उपदेशकरा

है वो उपदेश प्रमाणांक १३१ में दिखाचुकाहूं उसउपदेशके अंतमें कहाहै कि—[एतेरस छोड होवे संन्यासी] अर्थात् इन रसों को छोडे तो संन्यासी होवे इसउपदेशपर सूचन किया कि–यह मांसआदिकोंके रस गृहस्थ जनोंने अवश्य सेवनकरनेचाहिये ॥

३–मनुस्मृतिके ११ वें अध्यायमें दोप्रकार के पापकहेहैं एकमहापातक दूसरे उपपातक उनका पाठ बहुत होनेसें यहां नहीं लिखा, उनदोनोंप्रकारके पापोंमें मांसभक्षणका नामभी नहींहै अर्थात् न महापापोंमें मांसखाना लिखाहै, नाहीं उपपापोंमें मांसखाना कहाहै ॥

इससें जानाजाताहै कि –यदि विहितमांसखानेसें पाप होता तो उसको उनमें लिखते उनमें न लिखनेसें जानाजाताहै कि विहित मांसखानेसें कुछभी पाप नहीं होता ॥

४ यदिगृहस्थ जनोंलिये विहितमांसखानेकी अवश्यंअपेक्षा न होती और उसमें श्रुतिस्मृतिओंके विधानभी न होते तो–प्रमाणांक १आदिकोंमें मांसको घृततैलकी न्याई शुद्ध पवित्र न कहसक्ते, और विना मांगे कोई देवे तो उसके वापसहटानेका निषेधभी नकरसक्ते और नाहीं विहितमांस खानेमेंनिर्दोषता कहसक्ते परन्तु मांसको घृत तैलजैसा शुद्ध पवित्र कहाहै ॥

वापसहटानेका निषेधकराहै विहितमांसखानेमें निर्दोषताभी कहीहै अतः उसमें श्रुतिस्मृतिओंके 'विधानभी' हुकमभी बहुतहीहैं इस्सें गृहस्थजनोंके लिये विहितमांसखानेकी अवश्यंअपेक्षा सिद्धहोतीहै ॥

५—बृहदारण्यक वेदान्तउपनिषद्में अत्युत्तमपुत्रकी कामनासें गर्भाधानलिये स्त्रीपुरुषदोनोंको मांससहितभातखाने का विधान कराहै, उस उपनिषद्मन्त्रके व्याख्यानमें श्रीशंकराचार्य्योंने तथा मिताक्षराटीकामें और स्वामीदयानन्दजीने तथा पं० राजारामजीनेभी मांसभातखाना अर्थलिखाहै

अन्नप्राशनसंस्कारमेंभी छः महीनेकेबच्चेको ब्रह्मतेजआदिकोंलिये पहिले ही नानाविधमांससें अन्नखुलानेकाविधान गृह्यसूत्रोंमें कराहुआहै ॥

स्वामीदयानन्दजीभी गृह्यसूत्रोंके अर्थमें छः महीनेकेबच्चेको मांस खुलाना लिखचुकेहैं ॥

अतः श्रेष्ठपुत्रहोनेलियेभी विधिविहितमांस खानाखुलाना गृहस्थजनोंको आवश्यकहै ॥

६ प्रमाणांक १७६ आदिकोंमें पशुबलिदान व मांस भक्षणविषयके संहिताभागोंके ब्राह्मणभागोंके उनके भाष्यनके बहुतही प्रबल प्रमाण दिखा चुकाहुं ॥

प्रमाणांक १६५ ऐतेरयब्राह्मणमें भाष्यमें अवश्यं मांसखानेमें प्रेरणा कीहै, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर अर्थात् विधि वाक्यनके उल्लंघन करनेकर अतिदोषकहेहैं अतः विधिवाक्यनके उल्लंघनजन्यदोषोंके भयसेंभी गृहस्थआस्तिकपुरुषोंनें पशुबलिदान व विहित मांसभक्षण अवश्यं कराचाहिये ॥

७—उक्तप्रमाणोंके अनुसारी वेदवेत्ताब्राह्मणोंके महर्षियोंके पहिलेराजे महाराजओंके सीतारामलक्ष्मण आदिअवतारोंके आचरणरूप दृष्टान्तभी असंख्यादिखलायचुकाहुं, अब निर्णय करलीजिये कि—जिनके प्रमाणोंको तथा जिनके दृष्टान्तों को दिखलायागयाहै उनकेबराबर बुद्धि व विद्या तुम्हारी नहींहोसक्ती क्योंकि वह योगारूढ प्रसिद्धहीहैं योगारूढपुरुषोंका ज्ञान संशय विपर्ययदोषोंसेरहित अतीन्द्रियपदार्थोंकोभी विषयकरनेवाला महोदधिवत् महागंभीरहोताहै ॥

अतः उनसत्पुरुषोंकेविधिवाक्यनको और उनके योगजज्ञानके महत्त्व को विचारकरभी गृहस्थजनोंने अजशशहरिणप्रभृति पशुओंका बलिदान और विधिविहितमांसका भक्षण अवश्यंकराचाहिये ॥

सर्वस्वं शतवारमप्यपहृतं धूर्त्तैर्बलिष्ठैर्बलात्
निःसंख्यानवयौवनाःपरिहृताः जाताभृशंदुर्दशाः
नोखादामिपलंतथापिसुरसम् बुद्धिप्रदम्पौष्टिकं,
वेदेभ्योपिसखेस्मृतिप्रभृतितो भ्रष्टस्यकान्यागतिः

टीका—पूर्वपक्षी यद्यपि अतिबलवाले धूर्त्तजनोंने बलात्कारसे बहुतवार सकल धन लूटलिया, तथा बलात्कारसे असंख्य नवयौवनलडकिआं लटके पकड लेगये उससे अतिदुर्दशाहोई तथापि अतिपुष्टिकारक बुद्धिदेनेवाले सुष्ठु रसीले मांसको मैं नहीं खाता ॥

उत्तर सिद्धान्ती—हेमित्र वेदोंसे और स्मृतिआदिकोंसे भ्रष्टहुए पुरुषन की होर क्या दशा होतीहै अर्थात् विधिवाक्यनके उल्लंघनकरनेकर ऐसीही दुर्दशा होतीहै ॥

—✻०✻—

अन्तर्यामीके अनुग्रहसे तृतीयप्रकाशकी सम्पूर्णताको बोधन करतेहुए परमेश्वरके स्मरणरूप मंगलाचरणको अब करैहैं ॥

आरब्धोयन्नियुक्तेन मयाऽसौतदनुग्रहात् ।
प्रकाशोऽस्यतृतीयोपि पूर्णतामगमच्छिवम् ॥

टीका—जिस अन्तर्यामी परमेश्वरकर प्रेरेहुए मैंने यिह भक्ष्यानिर्णय

भास्कर ग्रन्थ आरम्भकराथा उस परमात्माके अनुग्रहसे इसग्रन्थका तृतीय युक्तिप्रकाशभी पूर्णताको प्राप्तहुआ ॥

* इतिशिवम् *

चौपाई--शुरूकियो पुस्तक मैं जिससे, प्रेरितहो उसकीहिकृपासे ॥
तीजोथाकायुक्तिप्रकाशा, पूर्णहुआशिवपरमाविकाशा ॥

इतिश्रीहरिद्वारे पातञ्जलाश्रमनिवासिना
स्वामितेजोनाथेनोद्दितीकृते
भक्ष्यानिर्णयभास्करे
तृतीयो युक्ति-
प्रकाशः॥३॥



युक्तियुक्तमुपादेयं वचनं बालकादपि ॥
अन्य त्तृणमिवत्याज्य मप्युक्तंपद्मजन्मना ॥

वासिष्टे

सत्यमेवजयते नानृतं सत्येन पन्था ।
विततोदेवयानः ॥

कठोपनिषद् ॥

समूलोवाएप परिशुष्यति योऽनृतमभिवदति ॥

प्रश्नोपनिषद्

समूलएवशुष्येत्स । लोकद्वयफलांविना ॥
अनृतंयोवदेत्क्वापि पुरुषः परिमोहितः ॥

आत्मपुराणे

अश्वमेधसहस्रंच सत्यंचतुलयाधृतम् ॥
अश्वमेधसहस्राद्धि सत्यमेवावाशिष्यते ॥

महाभारते ॥